BAOU
Education for All

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ओपन यूनिवर्सिटी
(गुजरात सरकार द्वारा स्थापित)

NAAC ACCREDITED A++ GRADE 3.55/4

बी. ए. (ऑनर्स) हिंदी
BAHONSHND
हिंदी मेजर
(HNDMJ-101)

बी. ए. (ऑनर्स) हिंदी के अतिरिक्त अन्य विषयों के लिए
हिंदी माइनर
(HNDMN-101)

हिंदी कहानियाँ

स्वाध्याय का उजास

भारत के संविधान के निर्माता भारतरत्न बाबासाहेब आंबेडकर जी की पुण्य स्मृति में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग और डिस्टेंस एजुकेशन काउन्सिल की मान्यता के साथ गुजरात सरकार ने सन् 1994 ई. में अहमदाबाद में गुजरात के एकमात्र मुक्त विश्वविद्यालय डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ओपन यूनिवर्सिटी की स्थापना की. स्थापना के क्रम में यह देश की सातवीं ओपन यूनिवर्सिटी है. गुजरात राज्य के शैक्षिक गतिविधियों को तीव्रता प्रदान करते हुए यूनिवर्सिटी आज सन् 2025 ई. में मुक्त एवं दूरस्थ शिक्षा (ODL) माध्यम से सर्टिफिकेट, डिप्लोमा, स्नातक तथा स्नातकोत्तर स्तर के 79, यू.जी.सी. मानदंडों के तहत पीएच.डी. स्तर के 16, ऑनलाइन माध्यम से 10 और स्वयं (SWAYAM) माध्यम से 07 पाठ्यक्रमों के लिए प्रवेश आमंत्रित कर रही है.

बाबासाहेब आंबेडकर जी की जन्म शताब्दी के अवसर पर गुजरात सरकार ने यूनिवर्सिटी को एक सुगम शांत स्थान उपलब्ध कराया और आधुनिक सुविधाओं से लैस इमारतों के साथ यूनिवर्सिटी का अपना परिसर – 'ज्योतिर्मय परिसर' विकसित करने में सहायता दी. यूनिवर्सिटी प्रबंध मंडल के प्रत्येक सदस्य ने संपूर्ण समर्पण और लगन के साथ इस यूनिवर्सिटी को उस मुकाम पर पहुँचाने में अपना पूरा योगदान दिया है और आगे भी देते रहेंगे.

कहते हैं, शिक्षा वह निवेश है, जो बिना व्यवधान के निरंतर लाभ प्रदान करता है और लोगों के जीवन में गुणवत्ता का आधान करता है, बढ़ाता है. मै स्वामी विवेकानंद जी के शिक्षा दर्शन का मूल यहाँ उल्लेखित करना चाहूँगी:

"हम ऐसी शिक्षा चाहते हैं, जो चरित्र का निर्माण करे, बौद्धिक शक्ति का वर्धन करे, मेधा का विस्तार करे और जिसके माध्यम से प्राप्तकर्ता अपने पैरों पर खड़ा हो सके."

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ओपन यूनिवर्सिटी अपने विद्यार्थियों को उनके द्वार पर ऐसी ही गुणवत्तापूर्ण कौशल और वास्तविक जीवन संकेंद्रित शिक्षा देने के प्रति कटिबद्ध है. गुजरात राज्य के वृहत्तर जन समुदाय को उच्च शिक्षा उपलब्ध कराने की दिशा में यूनिवर्सिटी सतत कार्यलीन है, जिससे वे आने वाली नित नयी चुनौतियों का सफलतापूर्वक सामना कर सके और अपनी पूरी क्षमता के साथ समाज और राष्ट्र की उन्नति के लिए सन्नद्ध हो सके.

अपने मुख्य आदर्श वाक्य **"स्वाध्याय: परमं तप:"** का अनुसरण करते हुए यूनिवर्सिटी विद्यार्थियों को समृद्ध पाठ्यचर्या उपलब्ध कराने में विश्वास रखती है. इसी आवश्यकता की पूर्ति के क्रम में यूनिवर्सिटी यह नवीन, अधिक सुस्पष्ट पाठ्यसामग्री लेकर उपस्थित हुई है, जिससे विद्यार्थियों की उनके विषय में बेहतर समझ बन सके. इसके माध्यम से यूनिवर्सिटी ने उन विद्यार्थियों के लिए संभावनाओं का विस्तार किया है, जिनके लिए नियमित पारंपरिक शिक्षा पद्धति के द्वार बंद हो चुके हैं. सभी विषयों में विद्यार्थियों की आवश्यकता के अनुरूप स्वाध्याय सामग्री निर्माण के लिए पाठ्यक्रम सलाहकार समिति के सदस्यों से आरंभ करते हुए, स्वाध्याय सामग्री लेखकों, विषय और भाषा परामर्शकों का एक समर्पित दल गठित किया गया है.

आज की डिजिटल दुनिया की गति से एकरूपता रखते हुए यूनिवर्सिटी ने स्वयं का एक डिजिटल मंच – ओमकार-ई (OMKAR-E) विकसित किया है, जो ICT (इनफार्मेशन एंड कम्युनिकेशन टेक्नोलॉजी) के माध्यम से शिक्षा प्रदान करता है. जल्द ही योग, प्राकृतिक चिकित्सा और भारतीय शास्त्रीय नृत्य जैसे विषयों पर ऑनलाइन सर्टिफिकेट और डिप्लोमा पाठ्यक्रम भी यूनिवर्सिटी के माध्यम से उपलब्ध होंगे, जो वैकल्पिक विषय के रूप में चयनित किये जा सकेंगे.

अपने सभी प्रयासों के साथ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ओपन यूनिवर्सिटी ज्ञान और शिक्षा का प्रमुख केंद्र बनने की प्रक्रिया में है और हम आपको इस पवित्र यज्ञ में सम्मिलित होकर डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर जी के समरस समाज निर्माण के स्वप्न को साकार करने के लिए आमंत्रित करते हैं.

प्रो. (डॉ.) अमी उपाध्याय
कुलपति
डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ओपन यूनिवर्सिटी, अहमदाबाद

HNDMJ-101/HNDMN-101 : हिंदी कहानियाँ

प्रधान संपादक :

प्रो. (डॉ.) योगेंद्र पारेख — निदेशक, स्कूल ऑफ़ ह्यूमैनिटीज़ एंड सोशल साइंसेज़, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ओपन यूनिवर्सिटी, अहमदाबाद.

संपादक :

डॉ. अर्चना मिश्रा — असिस्टेंट प्रोफ़ेसर हिंदी, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ओपन यूनिवर्सिटी, अहमदाबाद.

सह संपादक :

डॉ. आशीष कुमार सिंह — असिस्टेंट प्रोफ़ेसर हिंदी, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ओपन यूनिवर्सिटी, अमहदाबाद.

विषय समिति :

प्रो. आलोककुमार गुप्त — (सेवा निवृत) प्रोफ़ेसर, हिंदी भाषा एवं साहित्य अध्ययन केंद्र, भाषा, साहित्य एवं सांस्कृतिक अध्ययन संकाय, गुजरात केंद्रीय विश्वविद्यालय, गाँधीनगर.

डॉ. ओमप्रकाश शुक्ल — एसोसिएट प्रोफ़ेसर हिंदी, गुजरात कॉलेज ऑफ़ आर्ट्स एंड कॉमर्स, अहमदाबाद.

डॉ. अर्चना मिश्रा — असिस्टेंट प्रोफ़ेसर हिंदी, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ओपन यूनिवर्सिटी, अहमदाबाद.

इस खंड के इकाई लेखक :

डॉ. दिलीप मेहरा — प्रोफ़ेसर एवं अध्यक्ष, स्नातकोत्तर हिंदी विभाग, सरदार पटेल विश्वविद्यालय, वल्लभ विद्यानगर, आणंद.

डॉ. मनहर गोस्वामी — एसोसिएट प्रोफ़ेसर, शामलदास आर्ट्स कॉलेज, भावनगर.

डॉ. किंगसन सिंह पटेल — एसोसिएट प्रोफ़ेसर, हिंदी विभाग, कला संकाय, काशी हिंदू विश्वविद्यालय, वाराणसी.

डॉ. भरत भाई के. बावलिया — असिस्टेंट प्रोफ़ेसर हिंदी, श्री आर.आर. लालन कॉलेज, भुज, कच्छ.

डॉ. अनीता शुक्ल — असिस्टेंट प्रोफ़ेसर, हिंदी विभाग, एम.एस. यूनिवर्सिटी, वडोदरा.

डॉ. भानुबहन ए. वसावा — असिस्टेंट प्रोफ़ेसर, हिंदी विभाग, भाषा-साहित्य भवन, गुजरात यूनिवर्सिटी, अमहदाबाद.

डॉ. जितेन परमार — असिस्टेंट प्रोफ़ेसर, बहाउद्दीन कला महाविद्यालय, जूनागढ़.

डॉ. अर्चना मिश्रा — असिस्टेंट प्रोफ़ेसर हिंदी, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ओपन यूनिवर्सिटी, अहमदाबाद.

डॉ. शैलेशकुमार डी. वणकर — एसोसिएट प्रोफ़ेसर हिंदी, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ओपन यूनिवर्सिटी, अहमदाबाद.

डॉ. महारुद्रप्रतापसिंह चौहान — असिस्टेंट प्रोफ़ेसर हिंदी, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ओपन यूनिवर्सिटी, अहमदाबाद.

डॉ. आशीष कुमार सिंह — असिस्टेंट प्रोफ़ेसर हिंदी, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ओपन यूनिवर्सिटी, अहमदाबाद.

डॉ. आकृति चंद्रा — असिस्टेंट प्रोफ़ेसर हिंदी, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ओपन यूनिवर्सिटी, अहमदाबाद.

इस खंड के परामर्शक :

प्रो. दयाशंकर त्रिपाठी — प्रोफ़ेसर एवं अध्यक्ष (सेवानिवृत), हिंदी विभाग, सरदार पटेल यूनिवर्सिटी, वल्लभ विद्यानगर, आणंद.

डॉ. उत्तम पटेल — एसोसिएट प्रोफ़ेसर एवं अध्यक्ष, हिंदी विभाग, श्री वनराज आर्ट्स एंड कॉमर्स कॉलेज, धरमपुर, वलसाड.

डॉ. ओमप्रकाश शुक्ल — एसोसिएट प्रोफ़ेसर हिंदी, गुजरात कॉलेज ऑफ़ आर्ट्स एंड कॉमर्स, अहमदाबाद.

आवरण सज्जा :

सुश्री मार्मी मकवाणा — ग्राफिक डिजाइनर, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ओपन यूनिवर्सिटी, अहमदाबाद.

प्रकाशक : कुलसचिव, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ओपन यूनिवर्सिटी, अहमदाबाद.

मुद्रक : साहित्य मुद्रणालय, अहमदाबाद

ISBN : 978-93-5598-844-7

© अप्रैल, 2025 डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ओपन यूनिवर्सिटी, अहमदाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित : यह स्वाध्याय सामग्री डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ओपन यूनिवर्सिटी द्वारा मुक्त दूरस्थ शिक्षा के उद्देश्यों को केंद्र में रखते हुए विद्यार्थियों के स्वाध्याय के लिए तैयार की गयी है, जिसका सर्वाधिकार यूनिवर्सिटी के पास सुरक्षित है. इस स्वाध्याय सामग्री का पूर्ण या आंशिक रूप से किसी भी प्रकार डिजिटली या इलेक्ट्रॉनिकली पुनरुत्पादन डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ओपन यूनिवर्सिटी की लिखित अनुमति के बिना अवैध माना जायेगा.

BAOU
Education
for all

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ओपन यूनिवर्सिटी

(गुजरात सरकार द्वारा स्थापित)

बी.ए. (ऑनर्स) हिंदी	बी.ए. (ऑनर्स) हिंदी के
BAHONSHND	अतिरिक्त अन्य विषयों के लिए
हिंदी मेजर	हिंदी माइनर
HNDMJ-101	**HNDMN-101**

हिंदी कहानियाँ

इकाई-1	साहित्य की अवधारणा	05-18
इकाई-2	हिंदी गद्य साहित्य का परिचयात्मक इतिहास	19-36
इकाई-3	हिंदी कहानी का स्वरूप और विकास	37-54
इकाई-4	'उसने कहा था' – चंद्रधर शर्मा 'गुलेरी'	55-70
इकाई-5	'शतरंज के खिलाड़ी' – प्रेमचंद	71-80
इकाई-6	'सिक्का बदल गया' – कृष्णा सोबती	81-92
इकाई-7	'पंचलैट' – फणीश्वरनाथ 'रेणु'	93-104
इकाई-8	'परिंदे' – निर्मल वर्मा	105-114
इकाई-9	'राजा निरबंसिया' – कमलेश्वर	115-122
इकाई-10	'कोसी का घटवार' – शेखर जोशी	123-134
इकाई-11	'पिता' – ज्ञानरंजन	135-141
इकाई-12	'इंस्पेक्टर मातादीन चाँद पर' – हरिशंकर परसाई	142-152
इकाई-13	'अपनी अपनी पत्नियों का सांस्कृतिक विकास' – असगर वजाहत	153-162
इकाई-14	'असली बात' – नासिरा शर्मा	163-172

पाठ्यक्रम परिचय

(पाठ्यक्रम आरंभ करने से पहले विद्यार्थी कृपया इसे अवश्य पूरा पढ़ें)

डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ओपन यूनिवर्सिटी के स्कूल ऑफ़ ह्यूमैनिटीज़ एंड सोशल साइंसेज़ में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 द्वारा निर्देशित चारवर्षीय बी.ए. (ऑनर्स) हिंदी अध्ययन कार्यक्रम में आठ सत्रों में हिंदी मेजर के कुल 22 पाठ्यक्रम हैं. पहले वर्ष के दो सत्रों में 2-2 और फिर दूसरे वर्ष से प्रत्येक सत्र में 3-3. इसी तरह बी.ए. (ऑनर्स) में हिंदी के अतिरिक्त किसी अन्य विषय से मेजर करने वाले जो विद्यार्थी 'हिंदी माईनर' पसंद करते हैं, उनके लिए चार वर्षों में कुल 8 पाठ्यक्रम निर्धारित हैं.

विद्यार्थी मित्रो! राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के तहत यह पूरा अध्ययन कार्यक्रम विद्यार्थियों को ही केंद्र में रखकर तैयार किया गया है, जिसमें विद्यार्थियों के लिए 'फ्लेक्सी एग्जिट' की सुविधा है. यदि आप इस अध्ययन कार्यक्रम का केवल एक वर्ष पूरा कर पाते हैं और उसके बाद आप पढ़ाई आगे जारी रखना नहीं चाहते, तो आप 'सर्टिफिकेट' लेकर जा सकते हैं. इसी तरह दो वर्ष पूरा होने पर आप 'डिप्लोमा' लेकर एग्जिट कर सकते हैं और तीन वर्ष पूरा होने पर आपको बी.ए. (जनरल) की डिग्री मिलेगी. बी.ए. (ऑनर्स) की डिग्री के लिए आपको एक वर्ष, यानी सत्र 7 और 8 भी पूरे करने होंगे. यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि बी.ए. (ऑनर्स) के चारवर्षीय अध्ययन कार्यक्रम को पूरा करने वाले विद्यार्थी को एम.ए. में सीधे दूसरे वर्ष यानी तीसरे सेमेस्टर में प्रवेश मिल जाएगा. इस तरह बी.ए. और एम.ए. मिलाकर उसे पहले की तरह 5 वर्ष ही पढ़ना होगा.

तो आइये! अपनी अकादमिक यात्रा शुरू करते हैं. प्रस्तुत है 'हिंदी मेजर' और 'हिंदी माइनर' के विद्यार्थियों के लिए पहले सेमेस्टर का यह पहला पाठ्यक्रम – 'हिंदी कहानियाँ'!

साहित्य की अन्य विधाओं के मुकाबले कहानी जहाँ एक ओर खासी रोचक होती है, वहीं दूसरी ओर वे भाषा को अच्छी तरह सीखने, समृद्ध करने में भी मददगार साबित होती हैं. अतः हिंदी भाषा में निपुणता प्राप्त करने के इच्छुक आप विद्यार्थियों के अध्ययन की शुरुआत हम हिंदी कहानियों से कर रहे हैं.

आरंभ में साहित्य की अवधारणा स्पष्ट करने के बाद हिंदी गद्य साहित्य के इतिहास का सामान्य परिचय देने के साथ हिंदी कहानी की विकास यात्रा का एक संक्षिप्त लेखा जोखा प्रस्तुत किया गया है.

इसके बाद हिंदी के विशाल कहानी संसार से चुनकर कुल ग्यारह कहानियाँ आपके सामने रखी गयीं हैं. ये सभी कहानियाँ अलग अलग समय की, अलग अलग पृष्ठभूमियों की और अलग अलग तेवर की हैं, जिससे आप हिंदी कहानियों के विविधतामय संसार से परिचित हो सकें. साथ ही इन कहानियों के चयन में इस बात का भी ध्यान रखा गया है कि ये आगे आने वाली यू.जी.सी.-नेट, यू.पी.एस.सी. जैसी प्रतियोगी परीक्षाओं के लिए भी उपयोगी हों.

इस पाठ्यक्रम में कुल 14 इकाइयाँ हैं. प्रत्येक इकाई का लेखन अलग अलग अनुभवी प्राध्यापकों ने किया है. ये इकाइयाँ वैसी ही हैं, जैसे पारंपरिक विश्वविद्यालयों में होने वाले लेक्चर. जैसे कुछ लेक्चर बहुत अच्छे लगते हैं और तुरंत समझ में आ जाते हैं, वैसे ही कुछ इकाइयाँ एक बार पढ़ते ही समझ में आ जाएँगी; कुछ को एक से अधिक बार पढ़ना पड़ेगा और कुछ ऐसी भी हो सकती हैं जिन्हें पढ़ने से संतुष्टि न मिले अधूरापन लगे, कुछ प्रश्न खड़े हो जाएँ. तब आप उन प्रश्नों के उत्तर खोजने का प्रयत्न कीजिएगा और इस खोज से ही आपकी वास्तविक अध्ययन यात्रा शुरू होगी. जिन प्रश्नों के उत्तर आप स्वयं खोजेंगे, वे ही आपको हमेशा के लिए याद हो जाएँगे और आपके अध्ययन का वास्तविक फल होंगे. आपकी इस अध्ययन यात्रा में यूनिवर्सिटी सदा आपके साथ है. आप अध्ययन संबंधी अपने किसी भी प्रश्न को नीचे लिखी ईमेल आई डी पर भेज सकते हैं. अपना अध्ययन आरंभ करें! खूब सारी शुभकामनाएँ!!

बी.ए. हिंदी अध्ययन के लिए संपर्क ईमेल आई डी : hindi@baou.edu.in

इकाई 1 साहित्य की अवधारणा

रूपरेखा

1.1 उद्देश्य

1.2 प्रस्तावना

1.3 'साहित्य' शब्द का अर्थ

1.3.1 व्युत्पत्तिमूलक अर्थ

1.3.2 व्यापक अर्थ

1.3.3 रूढ़ अर्थ

1.4 'साहित्य' की परिभाषा

1.4.1 संस्कृत परंपरा में

1.4.2 पाश्चात्य परंपरा में

1.4.3 हिंदी परंपरा में

1.5 'साहित्य' का प्रयोजन

1.6 सारबिंदु

1.7 परीक्षोपयोगी प्रश्नावली

1.8 उपयोगी पाठ्यसामग्री

1.1 उद्देश्य

विद्यार्थी मित्रो! इस इकाई में हम साहित्य की अवधारणा पढ़ने जा रहे हैं. यह विषय प्रवेश जैसा है, यानी कि आगे हिंदी साहित्य को पढ़ने समझने से पहले साहित्य का तात्पर्य, उसका मतलब स्पष्ट करने का प्रयास इस इकाई में है. इस इकाई को पढ़ने के बाद आप

- साहित्य शब्द का व्युत्पत्तिमूलक, व्यापक और रूढ़ अर्थ समझ सकेंगे.
- विभिन्न दृष्टियों से दी गयी साहित्य की परिभाषाएँ जान सकेंगे.
- साहित्य क्यों रचा जाता है अर्थात् उसका प्रयोजन क्या है, समझ सकेंगे.

1.2 प्रस्तावना

आप बहुत पहले से साहित्य शब्द सुनते आ रहे होंगे. जरा याद कीजिए यह शब्द पहले पहल आपने कब सुना था और किस संदर्भ में? संभवतः तब आप स्कूल में रहे होंगे. हो सकता है कि पन्नालाल पटेल के उपन्यास 'मानवीनी भवाई' का अंश पाठ के रूप में पढ़ाते हुत अध्यापक ने बताया हो कि यह उच्चकोटि का साहित्य है; या फिर प्रेमचंद की कहानी 'पंचपरमेश्वर' पढ़ाते हुए बताया हो कि हिंदी साहित्य में प्रेमचंद की कहानियों का महत्वपूर्ण स्थान है; या फिर शेक्सपियर का नाटक 'मैकबेथ' पढ़ाते हुए कहा हो कि शेक्सपियर के नाट्यसाहित्य का अनुवाद दुनिया की सभी भाषाओं में हुआ है; या फिर ऐसा बताया हो कि साहित्य का नोबल पुरस्कार गुरु रवींद्रनाथ ठाकुर को उनके कविता संग्रह 'गीतांजलि' के लिए मिला था. और इस तरह अनायास ही आप साहित्य शब्द सुनते ही समझने लगे कि उपन्यास, कहानी, कविता, नाटक आदि की बात हो रही है.

यदि अभी मैं आपसे पूछूँ कि साहित्य किसे कहते हैं, तो आप तपाक से जवाब देंगे कविता, कहानी, उपन्यास नाटक इत्यादि को. आपका जवाब सौ प्रतिशत सही है. तो फिर हम ऐसे मुद्दे पर विचार ही क्यों कर रहे हैं, जो आपको पहले से ही पता है! वह इसलिए क्योंकि आपका जवाब सही होने पर भी पूरा नहीं है और वह साहित्य के समग्र अर्थ, संपूर्ण

अवधारणा को अभिव्यक्त नहीं करता. तो इस इकाई में हम उन पहलुओं पर विचार करने जा रहे हैं, जो 'साहित्य' संबंधी आपकी समझ को विस्तृत और परिपक्व करेगा, उसमें शास्त्रीयता लाएगा. तो चलिए, अब हम साहित्य शब्द के अर्थ पर विचार करते हैं.

1.3 'साहित्य' शब्द का अर्थ

'साहित्य' शब्द का एक अर्थ तो वह है जो आपको पहले से ही मालूम है, लेकिन 'साहित्य' और भी अर्थों में प्रयुक्त होता है और ऐसा इसलिए होता है, क्योंकि उसके मूल अर्थ में ऐसा हो सकने की गुंजाइश है. तो हम पहले साहित्य के मूल अर्थ की ओर ही चलें. मूल अर्थ को ही हम व्युत्पत्तिमूलक या व्याकरणमूलक अर्थ भी कहते हैं, यानी कि शब्द के जन्म, उसकी बनावट से जुड़ा हुआ अर्थ!

1.3.1 'साहित्य' का व्युत्पत्तिमूलक अर्थ

'साहित्य' शब्द मूलतः संस्कृत भाषा का शब्द है. क्या आप जानते हैं कि हिंदी समेत तमाम उत्तर भारतीय भाषाओं की जननी है 'संस्कृत'. यानी कि संस्कृत का शब्द भंडार, कुछेक व्याकरण संबंधी नियमावलि, साहित्यिक परंपरा इत्यादि समूची भाषिक विरासत लेकर ही हिंदी, गुजराती, बांग्ला, मराठी आदि उत्तर भारतीय भाषाएँ विकसित हुई हैं. इसलिए हमें जब भी भाषा संबंधी किसी मूल बात पर पहुँचना होता है, तो हमें 'संस्कृत' में अवश्य ही झाँकना पड़ता है.

तो, 'साहित्य' का मूल भी संस्कृत में ही है. 'सहित' शब्द में भाव अर्थ में 'यत्' प्रत्यय लगाने से 'साहित्य' शब्द बनता है, जिसका अर्थ होता है 'सहितस्य भावं'. अर्थात् 'सहित' एकसाथ होने का भाव यानी स्थिति. यहाँ सवाल उठता है कि किसके साथ होने का? तो, इसका उत्तर है शब्द और अर्थ के एकसाथ होने का. शब्द और अर्थ जहाँ भी साथ-साथ हैं, वह 'साहित्य' कहलायेगा. इस तरह 'साहित्य' शब्द का व्युत्पत्तिमूलक अर्थ हुआ शब्द और अर्थ का सहभाव.

1.3.2 'साहित्य' का व्यापक अर्थ

'साहित्य' के उपर्युक्त मूलार्थ को ध्यान में रखकर हम कह सकते हैं कि भाषा के माध्यम से हुई प्रत्येक अभिव्यक्ति साहित्य है. फिर चाहे वह कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक आदि हो, धर्म, दर्शन, गणित, विज्ञान, तकनीक आदि शास्त्रीय विषयों के विवेचन हों या फिर विज्ञापन में आने वाले टेक्स्ट ही क्यों न हों सभी साहित्य ही कहलाएँगे. यह साहित्य की सबसे व्यापक अवधारणा है, जिसकी परिधि में संपूर्ण वाङ्मय किसी भी प्रकार की भाषिक अभिव्यक्ति आ जाती है.

अलग-अलग क्षेत्रों में 'साहित्य' शब्द का अर्थग्रहण विशिष्ट संदर्भों में भी होता है. संगीत में सरगम के बीच में आए गीत के बोल 'साहित्य' कहलाते हैं. किसी उत्पाद के साथ मिलने वाली पाठ्य सामग्री जैसे कि उत्पाद की जानकारी देने वाले ब्रोशर, मैनुअल आदि भी लिटरेचर या 'साहित्य' कहलाते हैं. शोधछात्र अपने शोधविषय से संबंधित किसी भी प्रकार की पाठ्य सामग्री को सम्मिलित रूप से साहित्य कहते हैं. इसी प्रकार हो सकता है कि उन तमाम कार्यक्षेत्रों में, जिनकी कल्पना आप कर सकते हैं, उपलब्ध लिखित सामग्री को 'लिटरेचर या साहित्य' कहा जाता हो. ये सभी अर्थ 'साहित्य' की उसी व्यापक अवधारणा शब्द और अर्थ के सहित होने की अवधारणा में ही अंततः समाविष्ट हो जाते हैं.

1.3.3 'साहित्य' का रूढ़ अर्थ

अब जरा निम्नलिखित वाक्यों पर ध्यान दीजिए

"मैं साहित्य की छात्रा हूँ."

“मेरे पिता साहित्य के बहुत बड़े विद्वान हैं.”

“भारत में साहित्य की सुदीर्घकालीन परंपरा है.”

“बांग्ला भाषा का साहित्य बहुत समृद्ध है.”

इन सभी वाक्यों में ‘साहित्य’ शब्द का प्रयोग उस व्यापक अर्थ में बिलकुल नहीं हुआ है, जिसकी चर्चा अभी हम कर आए हैं, बल्कि यहाँ ‘साहित्य’ शब्द का प्रयोग कविता, कहानी, उपन्यास, निबंध, आलोचना आदि के समूह को अभिव्यक्त करने के लिए हुआ है। यह वही अर्थ है, जिसे आप पहले से ही जानते-समझते हैं.

जब हम कहते हैं - हिंदी साहित्य, गुजराती साहित्य, अंग्रेजी साहित्य, संस्कृत साहित्य आदि; तब हम इन भाषाओं में विशिष्ट तरीके से रचे गये सृजनात्मक साहित्य को इंगित करना चाहते हैं, जहाँ शब्द और अर्थ का सहभाव एक रेखीय नहीं बहुआयामी होता है। यानी शब्द अपने रूढ़, कोशगत अर्थ को ही नहीं, बल्कि उससे परे जाकर और भी कुछ कहते हैं. एक सामान्य उदाहरण देखिए – “शिरीष ने रमा की ओर भरपूर नज़रों से देखा और चुपके से साथ लाया लाल गुलाब उसके जूड़े में लगा दिया. रमा की आँखें झुक गईं और मुख पर मधुर स्मित की लालिमा दौड़ गयी.” इन पंक्तियों में शब्दों से बस कुछ क्रियाओं का वर्णन हो रहा है. पर आप निश्चित रूप से जो अर्थ समझ गये होंगे, वह है शिरीष का रमा के प्रति प्रेम निवेदन और रमा द्वारा इस प्रेम की स्वीकारोक्ति. जबकि शब्दों में कहीं प्रेम की चर्चा तक नहीं है. यहाँ शब्द अपने मुख्य, कोशगत अर्थ के अतिरिक्त भी बहुत कुछ अर्थ दे रहे हैं, अधिक महत्वपूर्ण अर्थ दे रहे हैं. इसीलिए ये पंक्तियाँ ‘साहित्य’ का उदाहरण हैं, सृजनात्मक साहित्य का उदाहरण हैं. और इसी तरह की रचना को रूढ़ अर्थों में ‘साहित्य’ कहा जाता है.

अब आप स्पष्ट रूप से समझ गये होंगे कि अपने व्यापक अर्थ में ‘साहित्य’ भाषा में रची गयी किसी भी तरह की रचना के लिए प्रयुक्त हो सकता है, लेकिन प्रमुख रूप से ‘साहित्य’ शब्द का प्रयोग किसी भाषा में रचे गये सृजनात्मक साहित्य के लिए ही होता है. और जब हम कहते हैं कि “हिंदी भाषा और साहित्य का अध्ययन”, तो हम सृजनात्मक साहित्य की ही बात कर रहे होते हैं. ‘साहित्य’ शब्द सृजनात्मक साहित्य के अर्थ में रूढ़ हो चुका है.

आशा है कि अब आपने साहित्य शब्द का अर्थ अच्छी तरह समझ लिया होगा. आइये, देखें तो आपने क्या समझा!

- **जरा नीचे लिखे प्रश्नों के उत्तर तो दीजिए**

  1. ‘साहित्य’ किस भाषा का मूल शब्द है?
  2. ‘साहित्य’ शब्द किस धातु/मूल शब्द से बना है और उसमें कौन-सा प्रत्यय जोड़ा गया है?
  3. ‘साहित्य’ शब्द का व्युत्पत्तिमूलक अर्थ क्या है?
  4. ‘साहित्य’ शब्द का व्यापक अर्थ क्या है?
  5. ‘साहित्य’ शब्द का रूढ़ अर्थ क्या है?

इन सभी प्रश्नों के उत्तर आपके द्वारा पढ़े गए ऊपर के अनुच्छेदों में ही हैं. आप अपने उत्तर के सही होने का मिलान वहाँ से कर सकते हैं. और यदि आप इन प्रश्नों के उत्तर तत्काल नहीं दे पा रहे तो आपको ऊपर के अनुच्छेदों को फिर एक बार पढ़कर समझने की कोशिश करनी चाहिए.

यदि आपने उपर्युक्त सभी प्रश्नों का सही-सही उत्तर दे दिया है, तो हम आगे बढ़ते हैं और अपने अध्ययन में शास्त्रीयता लाते हुए ‘साहित्य’ की परिभाषा पर विचार करते हैं.

1.4 साहित्य की परिभाषा

ज्ञान और अध्ययन की यह सहज प्रक्रिया है कि जो कुछ भी उसकी परिधि में आता है, उसे परिभाषित करने का प्रयत्न किया जाता है. परिभाषित करने का अर्थ हुआ कि कम से कम शब्दों में उसकी विशिष्टताएँ इस प्रकार बताना कि वह अपने आप में बिलकुल अलग दिखाई पड़े, किसी दूसरे समकक्ष विषय के साथ उसकी कोई संदेहात्मक स्थिति बनने की कोई गुंजाइश न रहे. जैसे, यहाँ हम सृजनात्मक साहित्य की परिभाषा करने जा रहे हैं, तो हमें देखना होगा कि उस परिभाषा में सभी देश-काल के सभी तरह के साहित्य शामिल हो सकें, ऐसा न हो कि किसी खास समय या किसी खास स्थान का साहित्य उस परिभाषा की परिधि में आने से रह जाए. हमें यह भी देखना होगा कि उस परिभाषा में सृजनात्मक साहित्य के अतिरिक्त अन्य तरह के साहित्य, यानी कि साहित्य के व्यापक अर्थ में शामिल शास्त्रीय साहित्य इत्यादि शामिल न हो जाएँ. और ऐसा तो बिलकुल भी न हो कि हम परिभाषा तो सृजनात्मक साहित्य की कर रहे हैं, पर वह ऐसी बने कि उसकी परिधि में सृजनात्मक साहित्य बिलकुल आए ही नहीं, बल्कि कुछ और ही आ जाए। ये परिभाषा के क्रमशः अव्याप्ति, अतिव्याप्ति और असंभव दोष कहे जाते हैं. हमें 'साहित्य' की एक ऐसी सर्वमान्य परिभाषा देनी है, जो उपर्युक्त तीनों दोषों से मुक्त हो.

आइये, पहले देखें कि इस संबंध में विद्वानों के क्या विचार हैं?

1.4.1 संस्कृत परंपरा में

संस्कृत की शास्त्रीय परंपरा में साहित्य के लिए 'साहित्य' शब्द से अधिक 'काव्य' शब्द का प्रयोग हुआ है. और साहित्य की परिभाषा को 'काव्य लक्षण' कहा गया. लेकिन 'काव्य' क्यों? काव्य यानी कविता तो साहित्य की एक विधा है? वह इसलिए क्योंकि पहले पहल साहित्य कविता के रूप में ही अभिव्यक्त हुआ. 'ऋग्वेद', जो सर्वप्राचीन उपलब्ध भारतीय साहित्य है, काव्य है. बाद में भी लंबे समय तक सभी तरह की साहित्यिक रचनाएँ कविता के रूप में ही होती रहीं, क्योंकि उन्हें याद रखना आसान होता था और कागज के अविष्कार और छपाई की सुविधा के पहले रचना को सुरक्षित करने का सबसे अच्छा उपाय याद रखना ही था. गद्य विधा भी जब अस्तित्व में आई, तो उसमें भी पद लालित्य, अलंकार प्रयोग, सरस वर्णन इत्यादि अनेक गुण कविता से आए. और उसे 'गद्य काव्य' कहा गया. इस तरह से, जैसा कि हमने ऊपर चर्चा की है कि साहित्य शब्द का अर्थ संकुचित होकर सृजनात्मक साहित्य के लिए ही मुख्य रूप से रूढ़ हो गया है, वैसे ही 'काव्य' का अर्थ विस्तृत हो कर सृजनात्मक साहित्य के अर्थ में रूढ़ हो गया.

तो, संस्कृत की 'काव्यशास्त्रीय' परंपरा में दिये गये 'काव्य' के कुछ प्रमुख लक्षणों पर हम नजर डालते हैं –

1. "शब्दार्थौ सहितौ काव्यम्" – शब्द और अर्थ का सहभाव काव्य है.

   – काव्यालंकार, भामह (छठी शती ई.)

2. "शरीरं तावदिष्टार्थव्यवच्छिन्ना पदावली" – इच्छित अर्थ से युक्त पदावली काव्य कहलाएगी.

   – 'काव्यादर्श', दंडी (सातवीं शती ई.)

3. "काव्यशब्दोऽयं गुणालङ्कारसंस्कृतयोः शब्दार्थयोर्वर्तते" – गुण और अलंकार से सुशोभित शब्दार्थ काव्य है.

   – 'काव्यालंकारसूत्रवृत्ति', वामन (आठवीं शती ई.)

4. "तददोषौ शब्दार्थौ गुणावनलङ्कृति पुनः क्वापि" – दोषरहित, गुणसहित शब्दार्थ

सामान्य रूप से अलंकारयुक्त होते हुए या कभी अलंकार के बिना भी काव्य कहलाते हैं.

– 'काव्यप्रकाश', मम्मट (बारहवीं शती ई.)

5. "वाक्यं रसात्मकं काव्यम्" – रसयुक्त वाक्य काव्य हैं.

– 'साहित्यदर्पणम्', आचार्य विश्वनाथ (चौदहवीं शती)

6. "रमणीयार्थप्रतिपादकः शब्दः काव्यम्" – सुंदर अर्थों को अभिव्यक्त करने वाले शब्द काव्य हैं.

– 'रसगंगाधर', पंडितराज जगन्नाथ (17वीं शती ई.)

क्या आपने इन सभी काव्य लक्षणों में कोई समानता लक्ष्य की? आगे पढ़ने से पहले जरा ऊपर दिये गये लक्षणों को पुनः ध्यान से पढ़िए और उनकी समानताएँ नोट कीजिए.

उपर्युक्त सभी लक्षणों में दो बातें साफ तौर पर एक जैसी दिखाई दे रही हैं. एक तो यह कि सभी आचार्यों ने काव्य में शब्द और अर्थ की स्थिति अनिवार्य रूप से मानी है. दूसरी यह कि ये शब्द और अर्थ साधारण न होकर सौंदर्ययुक्त, अलंकारयुक्त गुणयुक्त और रसयुक्त होने चाहिए. यहाँ क्या आपको कुछ याद आ रहा है?

'साहित्य' का अर्थ समझते हुए हमने जाना था कि 'साहित्य' का अर्थ है 'सहभाव', शब्द और अर्थ का सहभाव. और 'साहित्य' जिस सर्जनात्मक साहित्य के अर्थ में रूढ़ है, वहाँ शब्द अपने सीधे-सीधे अर्थों को व्यक्त करने से कहीं आगे बढ़कर किन्हीं विशिष्ट अर्थों को अभिव्यक्त करते हैं, जो अधिक सौंदर्ययुक्त, अधिक सरस होते हैं.

तो, हमने देखा कि संस्कृत आचार्यों द्वारा दिये गये काव्य लक्षण साहित्य के उपर्युक्त अर्थ को अच्छी तरह व्यक्त करते हैं.

लेकिन एक प्रश्न क्या आपके मन में नहीं आया? संस्कृत आचार्यों ने काव्य लक्षण में बारबार शब्द और अर्थ की बात क्यों की है? क्या भाषिक अभिव्यक्ति होने के नाते यह पूर्वनिश्चित नहीं है कि शब्द और अर्थ दोनों आएँगे ही? साहित्य के व्यापक अर्थ में शब्द और अर्थ के साथ होने की बात करना तो ठीक, परंतु 'काव्य' में क्या इसकी सचमुच जरूरत है?

विद्यार्थी मित्रो! उपर्युक्त तथ्य संस्कृत की सचतन परंपरा के अनुरूप है. बात यहाँ केवल 'होने' की नहीं, अपितु 'महत्वपूर्ण होने' की है. संस्कृत की शास्त्रीय चिंतन परंपरा में यह माना जाता है कि मंत्रों में शब्द ही महत्वपूर्ण हैं, उनके अर्थ नहीं. आप स्वयं ही देख सकते हैं कि वेदपाठ की जो परंपरा है उसमें प्रत्येक शब्द के शुद्ध और सटीक उच्चारण की पूर्ण रूप से वैज्ञानिक पद्धति विकसित है, परंतु उनके अर्थघटन पर विचार दर्शन का विषय हो जाता है. वेद का मुख्य महत्व उसके शब्दों के लिए है, उचित रूप से उच्चारित शब्दों की ध्वनियों के लिए है, ध्वनि तरंगों के लिए है, जो अपने चारों ओर के वातावरण को प्रभावित करने की क्षमता रखती हैं. इसलिए कहा जाता है कि वेद शब्द हैं. इसलिए 'वेद' के लक्षण में 'अर्थ' की चर्चा नहीं होगी.

इसी तरह जितने शास्त्र हैं, उनके लिए अर्थ महत्वपूर्ण हैं. शब्दों की भूमिका इतनी ही है कि उचित अर्थों को संप्रेषित कर सकें. इसके अलावा उनका कोई महत्व नहीं है. फिर 'पेड़' बताने के लिए 'वृक्ष', 'तरुवर', 'पादप' किसी भी शब्द के प्रयोग से कोई फर्क नहीं पड़ता.

लेकिन साहित्य में शब्द और अर्थ दोनों का बराबर महत्व है. श्रेष्ठ रचना वह कहलाती है, जो अर्थों को सबसे असरकारक ढंग से और सबसे अच्छे शब्दों द्वारा अभिव्यक्त कर सके. चलिए, इस संदर्भ में आपको एक बहुप्रचलित कहानी बताऊँ. बाणभट्ट का नाम सुना है आपने? संस्कृत के सर्वाधिक प्रतिष्ठित कवियों में से एक हैं. उनके द्वारा रचित 'हर्षचरित'

और 'कादंबरी' गद्य रचनाएँ संस्कृत की श्रेष्ठतम गद्य रचनाएँ मानी जाती हैं. आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने उनपर एक रोचक काल्पनिक उपन्यास लिखा है 'बाणभट्ट की आत्मकथा'.

खैर, कहते हैं कि 'कादंबरी' अभी पूरी नहीं हुई थी कि बाणभट्ट सख्त बीमार हो गये। उन्हें लगा कि अब वे 'कादंबरी' पूरी नहीं कर पाएँगे. इसलिए यह दायित्व उन्होंने अपने दो बेटों में से किसी एक को सौंपने के उद्देश्य से उनकी परीक्षा ली और सामने के एक ठूँठ को दिखाकर पूछा कि बताओ यह क्या है? बड़े बेटे ने तुरंत जवाब दिया "शुष्कं काष्ठं तिष्ठति अग्रे" (सूखा काठ सामने पड़ा है). छोटे बेटे ने थोड़ा सोचकर कहा "नीरसतरुवरः विलसति पुरतः" (रसहीन तरुवर यानी वृक्ष सामने सुशोभित हो रहा है). अब आप ही बताइए कि बाणभट्ट ने 'कादंबरी' पूरा करने के लिए किसको चुना होगा? निश्चित रूप से छोटे बेटे को ही! आखिर क्यों? अर्थ दोनों वाक्यों का एक ही निकलता है कि सामने ठूँठ है. पहले वाक्य में 'ष्ठ' ध्वनि की आवृत्ति होने से अनुप्रास अलंकार भी बनता है. लेकिन दूसरा वाक्य अधिक मनभावन है. उसमें ऐसे शब्दों का प्रयोग है जो सुनने में सुमधुर लगते हैं। जबकि पहले वाक्य के शब्दों की ध्वनियाँ कठोर हैं और सुनने में अच्छी नहीं लगतीं. इसलिए साहित्य कहलाने के योग्य तो दूसरा ही वाक्य है.

तो देखा आपने, साहित्य के लिए अर्थ का जितना महत्व है, उतना ही महत्व शब्दों का भी है. श्रेष्ठ साहित्य के सर्जन में शब्द और अर्थ दोनों बराबर के भागीदार होते हैं। अतः साहित्य के लक्षण में शब्द और अर्थ दोनों का शामिल होना जरूरी है.

इस तरह संस्कृत आचार्यों के अनुसार साहित्य वहाँ होगा जहाँ शब्द और अर्थ दोनों एक समान महत्व के साथ आएँ और सोच समझ कर प्रयोग किए गये सटीक शब्द सुंदर अर्थों को, इच्छित अर्थों को अभिव्यक्त कर सकें.

मुझे आशा है कि अब आप 'संस्कृत परंपरा में साहित्य की परिभाषा' भली-भाँति समझ गये होंगे. आइऐ! अब बिना ऊपर देखे नीचे लिखे वाक्यों में रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए. बाद में आप अपने उत्तर उपर्युक्त अनुच्छेदों से मिलाकर जाँच सकते हैं.

1. संस्कृत की शास्त्रीय परंपरा में साहित्य के लिए .... शब्द का प्रयोग हुआ है.
2. संस्कृत की शास्त्रीय परंपरा में काव्य का पहला व्यवस्थित लक्षण भामह ने .... शती में अपने ग्रंथ .... में दिया था.
3. "दोषरहित, गुणसहित और कभी अलंकार के बिना भी शब्दार्थ काव्य हैं" यह काव्य लक्षण .... ने अपने ग्रंथ .... में .... शती में दिया था.
4. आचार्य विश्वनाथ ने .... शती में अपने ग्रंथ .... में .... यह काव्य का लक्षण दिया था.
5. संस्कृत चिंतन परंपरा के अनुसार वेद .... हैं; शास्त्र .... हैं और साहित्य .... दोनों हैं.

1.4.2 पाश्चात्य परंपरा में

आइये! अब हम जरा एक नजर डालें कि पश्चिम में साहित्य को किस प्रकार परिभाषित करने की कोशिश की गयी है. पश्चिम से यहाँ तात्पर्य मुख्य रूप से यूरोप और यू.एस.ए. के साहित्य और साहित्य शास्त्र से है. यह इसलिए जरूरी है क्योंकि आधुनिक हिंदी साहित्य और साहित्य शास्त्र दोनों के उद्भव और विकास पर पश्चिमी विचारधारा का गहरा प्रभाव दिखाई देता है.

संस्कृत चिंतन परंपरा 'साहित्य' को समझने के क्रम में सबसे पहले उसके मूल ढाँचे की, उसकी भौतिक निर्मिति की तथा शब्द और अर्थ की बात करती है. पाश्चात्य परंपरा

उस ढाँचे में भरी जाने वाली वस्तु पर विचार करती है. आइये! हम पश्चिम के विचारकों द्वारा दी गयी कुछ परिभाषाओं को देखें –

1. "काव्य भाषा के माध्यम से प्रकृति की अनुकृति है" – अरस्तू (ई.पू. 384 से ई.पू. 322)
2. "पहले अनुभव किये गये प्रबल मनोवेगों का शांत क्षणों में सहज प्रवाह ही कविता है" – विलियम वड्र्सवर्थ (1770 ई. 1850 ई.)
3. "सर्वोत्तम शब्दों का सर्वोत्तम विधान ही कविता है" – समुअल टेलर कॉलरिज (1772 ई. 1834 ई.)
4. "कविता सबसे अच्छे और खुश दिलोदिमाग द्वारा अनुभूत सबसे अच्छे और आनंददायक क्षणों का दस्तावेज है" – पी. बी. शेली (1792 ई. 1822 ई.)
5. "कविता अपने मूल रुप में जीवन की आलोचना है" – मैथ्यू अर्नाल्ड (1822 ई. 1888 ई.)
6. "कविता भावों में प्रवाहित हो जाना नहीं, अपितु भावों से पलायन है, यह व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति भी नहीं, अपितु व्यक्तित्व से मुक्ति है." टी. एस. इलियट (1888 ई. 1965 ई.)

ध्यान दिया आपने? यहाँ भी बात कविता की ही हो रही है, 'साहित्य' शब्द का प्रयोग नहीं है. कारण वही है कि कविता ही साहित्य का सबसे पुराना रुप है, अतः 'साहित्य' के विषय में बात कविता से ही शुरु होती है और जो वक्तव्य कविता के लिए कहा जाय, वही 'साहित्य' के लिए भी लागू होगा. तो, उपर्युक्त सभी परिभाषाएँ 'साहित्य' के लिए भी सर्वसामान्य रूप से लागू पड़ेंगी. ये कुछ परिभाषाएँ उदाहरण स्वरूप यहाँ दी गयी हैं, पश्चिम के लगभग सभी प्रमुख रचनाकारों और आलोचकों ने अपने-अपने ढंग से कविता और साहित्य को समझने की कोशिश की है और अपने विचारों को 'साहित्य' में अभिव्यक्त होने वाली विषयवस्तु के तत्वों के इर्द-गिर्द रखा है.

यहाँ पर ध्यान देने वाली बात यह है कि संस्कृत परंपरा में लक्षण करते हुए काव्य के शरीर पर विचार हुआ है, जो वस्तुनिष्ठ है. अतः सभी लक्षण कमोबेश तक से हैं. परंतु पाश्चात्य परंपरा में 'साहित्य' को अभिव्यक्ति के रुप में समझने की कोशिश हुई है. 'अभिव्यक्ति' व्यक्तिनिष्ठ होती है. इसीलिए परिभाषाएँ एक दूसरे से काफी अलग, कई बार विपरीत भी दिखाई पड़ती हैं. लेकिन अंततः वे सभी अलग-अलग दृष्टिकोण से दी गयीं परिभाषाएँ 'साहित्य' के विभिन्न पहलुओं को, उसके विस्तृत फलक को हमारे सामने लाती हैं और हमारी अवधारणा को समृद्ध करती हैं.

आइये! जाँचें कि ऊपर के अनुच्छेदों में हमने क्या सीखा

- **सही/गलत बताइए और गलत वाक्य को सही करके लिखिए:**
  1. पाश्चात्य विद्वानों द्वारा दी गईं साहित्य की परिभाषाएँ उसकी विषयवस्तु को लक्ष्य करती हैं.
  2. अरस्तू ने काव्य को जीवन की अनुकृति माना है.
  3. वड्र्सवर्थ का कहना है – "कविता यानी सर्वोत्तम शब्दों का सर्वोत्तम विधान".
  4. कविता को जीवन की आलोचना मैथ्यू अर्नाल्ड ने कहा है.
  5. टी. एस. इलियट कविता को भावों और व्यक्तित्व से पलायन मानते हैं.

1.4.3 हिंदी परंपरा में

हिंदी की परंपरा का आरंभ आदिकाल से माना जाता है, जब अपभ्रंश से अलग होकर क्षेत्रीय बोलियों के रुप में हिंदी धीरे-धीरे अपना स्वरूप गढ़ रही थी और कविगण

संस्कृत की परंपरा का ही अनुसरण करते हुए इस नयी बन रही भाषा में कविता करने की कोशिश कर रहे थे. तब साहित्य लक्षण पर विचार करने की न तो फुर्सत थी और न ही जरूरत. संस्कृत काव्यशास्त्र का सशक्त अजेय किला तैयार था और कभी भी प्रश्रय दे सकता था. पूर्वमध्यकाल में जब अवधी और ब्रज के रूप में हिंदी स्वीकृत साहित्य भाषा बनी और भक्ति काव्य का दौर रहा तब तक भी कमोबेश यही स्थिति रही. उत्तर मध्यकाल (रीतिकाल) में जरूर दरबारी कवियों ने अपने पांडित्य प्रदर्शन के लिए लक्षण ग्रंथों की रचना में रुचि दिखाई और अनेक लक्षण ग्रंथ बन गये. लेकिन ये सभी संस्कृत परंपरा की ओछी नकल मात्र ही थे. इस समय के काव्य लक्षण यदि हम देखें तो वो कुछ वैसे ही होंगे, जैसे अभी हम संस्कृत परंपरा में पढ़ आए हैं. अतः उनके पुनरावर्तन की यहाँ कोई आवश्यकता नहीं है.

उन्नीसवीं शती भारत में हुए राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक सभी स्तरों पर व्यापक उथल-पुथल की साक्षी रही. इसी समय हिंदी साहित्य ने एक करवट लेकर नये सिरे से आँखें खोलीं, जिस पर पश्चिम के ज्ञान-विज्ञान और साहित्य का खासा प्रभाव पड़ा. यह आधुनिक हिंदी साहित्य की शुरुआत थी, जो कदम दर कदम चल कर आज के समकालीन साहित्य तक पहुँच चुका है. हमारा मुख्य सरोकार इसी से है और हमारी मुख्य दिलचस्पी भी इसी बात में है कि इस साहित्य को कैसे परिभाषित किया गया है, इसकी क्या अवधारणा है?

तो, आइये! अब देखते हैं कि आधुनिक हिंदी साहित्य के विद्वानों ने साहित्य के विषय में क्या विचार प्रस्तुत किये हैं –

1. “ज्ञानराशि के संचित कोश का नाम साहित्य है.” – आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी
2. “मानव-मस्तिष्क के पोषण के लिए भावराशि के संचित भंडार को साहित्य कहते हैं.” – बाबू श्यामसुंदरदास
3. “साहित्य जगत के नाना भावों की अभिव्यक्ति है.” – आचार्य रामचंद्र शुक्ल
4. “काव्य आत्मा की संकल्पनात्मक अनुभूति है.” – जयशंकर प्रसाद
5. “साहित्य उसी रचना को कहेंगे जिसमें कोई सचाई प्रकट की गयी हो, जिसकी भाषा प्रौढ़, परिमार्जित एवं सुंदर हो और जिसमें दिल और दिमाग पर असर डालने का गुण हो. ..... साहित्य की बहुत सी परिभाषाएँ की गयी हैं; पर मेरे विचार से उसकी सर्वोत्तम परिभाषा ‘जीवन की आलोचना है’. चाहे वह निबंध के रूप में हो, चाहे कहानियों के या काव्य के, उसे हमारे जीवन की आलोचना और व्याख्या करनी चाहिए.” – प्रेमचंद
6. “साहित्य संसार के प्रति हमारी मानसिक प्रतिक्रिया अर्थात् भावों और संकल्पों की भाषिक अभिव्यक्ति है और वह हमारे किसी न किसी प्रकार के हित का साधन करने के कारण संरक्षणीय हो सकती है या हो जाती है.” – बाबू गुलाबराय

‘साहित्य’ को समझने के क्रम में कुछ ये प्रतिनिधि विचार यहाँ रखे गये, अन्यथा आधुनिक हिंदी के लगभग सभी श्रेष्ठ लेखकों, आलोचकों, विचारकों ने साहित्य की अवधारणा के संबंध में एक या दूसरे तरीके से अपने विचार व्यक्त किये ही हैं, जिनका संकलन अपने आप में एक पुस्तक हो सकता है और जिन्हें इस सीमित इकाई में दे पाना संभव नहीं है.

हम ऊपर दी गयी परिभाषाओं पर एक नजर डालें तो हम पाएँगे कि आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने ‘साहित्य’ के व्यापक अर्थ के संदर्भ में यह परिभाषा दी है. बाबू श्यामसुंदर दास ने ज्ञानराशि की जगह ‘भावराशि’ शब्द का प्रयोग किया है, जिसके कारण यह सृजनात्मक साहित्य को अधिक परिभाषित करती है. ‘साहित्य’ की व्यापक अवधारणा में शामिल विविध रूपों, जिनमें प्रमुखता तथ्यों की होती है, के मुकाबले सृजनात्मक साहित्य (कविता, कहानी,

उपन्यास, नाटक आदि) ही है जिसमें मुख्य रूप से भावनाओं की, व्यक्तिगत अनुभवों की, अनुभूतियों की अभिव्यक्ति होती है.

आचार्य रामचंद्र शुक्ल द्वारा दी गयी परिभाषा में रचनाकार द्वारा अनुभूत की गयी संसार की विविधताओं की अभिव्यक्ति की बात है. यानी कोई रचनाकार जब अपने चारों ओर से होने वाले अनुभवों को अपने शब्दों में ढाल कर पेश करता है तो वह 'साहित्य' बन जाता है. सृजनात्मक साहित्य की यह संभवतः सबसे उपयुक्त परिभाषा है, जिसमें किसी भी देश का, किसी भी काल का, किसी भी भाषा का और किसी भी स्वरुप का (लिखित या मौखिक) साहित्य सम्मिलित हो जाता है.

जयशंकर प्रसाद द्वारा दी गयी परिभाषा थोड़ी दार्शनिक हो जाती है. 'संकल्पनात्मक अनुभूति' भारतीय दर्शन का एक निश्चित शब्द है, जिसका अर्थ बिलकुल सरल शब्दों में, 'परम सत्य के करीब पहुँची हुई निर्द्वंद्व अनुभूति' किया जा सकता है.

प्रेमचंद और बाबू गुलाबराय दोनों ही साहित्य की परिभाषा देते समय पाठकों पर उसके असर की बात करते हैं. ये परिभाषाएँ आधुनिक काल में साहित्य की अवधारणा में आ रहे एक उल्लेखनीय परिवर्तन की ओर संकेत करती हैं.

आधुनिक युग के हिंदी साहित्य के विचारकों चिंतकों के सामने साहित्य के स्वरुप, उसकी विधाओं को लेकर कोई दुविधा नहीं थी. वह तो सदियों के चिंतन के परिणामस्वरूप दृढ़ रुप से स्थापित हो ही गया था. हिंदी के सामने तो जहाँ एक तरफ संस्कृत काव्यशास्त्रीय चिंतन की गहन धारा थी तो वहीं पाश्चात्य चिंतन धारा को भी हिंदी साहित्य और साहित्यशास्त्र ने अपने लाभ के लिए आत्मसात कर लिया था. अब विचार साहित्य की विषय वस्तु और समाज पर पड़ने वाले उसके असर पर करना था. साहित्य की अवधारणा बदल रही थी. जो भारतीय साहित्य संस्कृत साहित्य के समय से लेकर कमोबेश रीतिकाल तक (बीच के भक्तिकाल को छोड़कर) उच्चवर्ग मात्र तक सीमित था, वह अब जन सामान्य के बीच अपनी पैठ बना रहा था. जहाँ वह पहले उच्चवर्ग की प्रवृत्तियों और भावनाओं की तुष्टि का साधन मात्र था, वहीं अब वह जन जागरण के लिए प्रतिबद्ध हो रहा था.

आगे 'साहित्य का प्रयोजन' शीर्षक के अंतर्गत हम इस पर विस्तार से चर्चा करेंगे। आइये! अभी जाँच लें कि हमने क्या सीखा

- **निम्नलिखित प्रश्नों के सही उत्तर पर निशान लगाइए**

(1) "ज्ञानराशि के संचित कोश का नाम साहित्य है" किसने कहा है?

(क) आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी (ग) आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी

(ख) बाबू श्यामसुंदर दास (घ) बाबू गुलाबराय

(2) संस्कृत काव्यशास्त्र की नकल पर हिंदी के किस काल में बहुत से साहित्यशास्त्रीय ग्रंथों की रचना हुई?

(क) आदिकाल (ग) रीतिकाल

(ख) भक्तिकाल (घ) आधुनिक काल

(3) किस शती में भारत में राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में व्यापक उथल-पुथल हुई?

(क) सत्रहवीं (ग) उन्नीसवीं

(ख) अठारहवीं (घ) बीसवीं

(4) किसने साहित्य को “जीवन की आलोचना” माना है?

(क) बाबू श्यामसुंदर दास (ग) बाबू गुलाबराय

(ख) जयशंकर प्रसाद (घ) प्रेमचंद

(5) “कोई रचनाकार जब अपने चारों ओर से होने वाले अनुभवों को अपने शब्दों में ढाल कर पेश करता है तो वह ‘साहित्य’ बन जाता है”. साहित्य की यह सार्वभौम परिभाषा किस विचारक द्वारा दी गयी परिभाषा से निकला है?

(क) आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी (ग) बाबू गुलाबराय

(ख) बाबू श्यामसुंदर दास (घ) आचार्य रामचंद्र शुक्ल

1.5 ‘साहित्य’ का प्रयोजन

‘प्रयोजन’ भारतीय साहित्यशास्त्र या कहें कि संस्कृत काव्यशास्त्र का एक पारिभाषिक शब्द है. यह काव्य रचना से होने वाले लाभ को बताता है सर्जक (कवि, लेखक) की दृष्टि से भी और भावक (श्रोता, पाठक) की दृष्टि से भी. संस्कृत काव्यशास्त्र सरणि में आचार्य भरत से लेकर पंडितराज जगन्नाथ तक सभी ने काव्य प्रयोजन की चर्चा अपने अपने ढंग से की है. आचार्य मम्मट द्वारा अपने ग्रंथ ‘काव्यप्रकाश’ में दिया गया काव्य प्रयोजन लगभग सभी के मंतव्यों का समाहार कर लेता है.

काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये ।
सद्यः परनिर्वृतये कान्तासम्मिततयोपदेशयुजे ।।

यहाँ काव्य के छह प्रयोजन बताए गये हैं : (1) यशप्राप्ति (सर्जक को); (2) अर्थप्राप्ति (सर्जक को); (3) सांसारिक व्यवहारज्ञान (मुख्यतया भावक को); (4) अमंगल का नाश (सर्जक और भावक दोनों के लिए); (5) रसानंद की प्राप्ति (मुख्यतया भावक को) और (6) हृदयग्राही उपदेश प्राप्ति (भावक को).

सच पूछा जाय तो ये प्रयोजन जितने संस्कृत साहित्य के लिए वैध थे, उतने ही आज के साहित्य के लिए भी हैं. बस, उनका मंतव्य तब और अब में कुछ परिवर्तित हो गया है. प्रथम तीन तो आज के साहित्य के लिए भी यथातथ ही लागू हो जाते हैं. चौथा, यानी ‘अमंगल का नाश’ संस्कृत स्तोत्रों को ध्यान में रखते हुए कहा गया था. ऐसी किंवदन्ति है कि मयूर कवि ने सूर्यशतक की रचना कर कुष्ठ से मुक्ति पायी थी. आज भी धार्मिक मान्यताओं में अमुक-अमुक स्तोत्रों के पाठ से आए हुए संकट को टालने का उपाय करते लोग मिल जाएँगे. लेकिन आधुनिक साहित्य पर यह प्रयोजन इसी तरह से लागू नहीं हो सकता. परंतु, यह सच है कि रचनाकार अपने मन में दबी हुई परेशान करने वाली प्रवृत्तियों का विरेचन (यह चिकित्साशास्त्र का पारिभाषिक शब्द है, जिसका अर्थ है ‘दबा दबा कर घाव में अंदर भरे हुए मवाद को धीरे धीरे बाहर निकलना’. पाश्चात्य काव्यशास्त्री अरस्तू ने इस शब्द का इस्तेमाल चित्त वृत्तियों को साहित्य के जरिए बाहर निकालने के अर्थ में किया था.) कर सकता है. इसी तरह मानसिक रुप से परेशान व्यक्ति यदि श्रेष्ठ साहित्य को पढ़ता गुनता है तो वह एक हद तक अपनी मानसिक परेशानियों से छुटकारा पा सकता है.

इसी तरह नवरसानंद आस्वादन तो अब के साहित्य का प्रयोजन नहीं हो सकता, जैसा कि संस्कृत साहित्य का था, परंतु यह तो आज भी सत्य है कि साहित्य मुख्य रूप से आनंद के लिए पढ़ा जाता है, यदि वह विचारोत्तेजक साहित्य है तो भी विचारोत्तेजना का आनंद आता है।

आज उपदेशक साहित्य को श्रेष्ठ साहित्य की कोटि में नहीं रखा जाता. संस्कृत साहित्य भी आमतौर पर सीधे-सीधे उपदेशक नहीं होता था, परंतु यह जरूर था कि उनमें अच्छे और बुरे की भेदक रेखा इतनी स्पष्ट होती थी कि बिना अतिरिक्त कुछ कहे साफ हो जाता

था कि "राम की तरह आचरण करना चाहिए, न कि रावण की तरह." आज के साहित्य में यह भेदक रेखा लगभग मिट सी चली है. चरित्र ज्यादा वास्तविकता के करीब हो गये हैं और काले सफेद के बजाय ग्रे शेड में दिखाए जाते हैं. लेकिन संवेदनशील पाठक रचना को पढ़ने के बाद हर बार कुछ अधिक परिपक्व होकर, कुछ और सीख कर निकलता है.

आइये, जरा जाँचें हमने क्या सीखा! नीचे लिखे प्रश्नों के उत्तर फटाफट दे डालिए:

1. संस्कृत काव्यशास्त्र में मुख्यरूप से काव्य के कितने प्रयोजन माने गये हैं?
2. कौन से तीन प्रयोजन आज भी पूरी तरह लागू हैं?
3. अमंगल का नाश प्रयोजन से क्या तात्पर्य है?
4. साहित्य मुख्यरूप से किसलिए पढ़ा जाता है?
5. आज के साहित्य में चरित्र किस शेड में चित्रित किये जाते हैं?

संस्कृत काव्यशास्त्र में दिये गये ये प्रयोजन और उनकी सर्वकालिकता जितनी शास्त्रीय है, उतनी व्यावहारिक नहीं दिखाई देती. संस्कृत साहित्य संभार का अधिकांश राजन्य वर्ग की भावनाओं और प्रविवित्तियों को तुष्ट करता ही दिखाई पड़ता है और उसका प्रधान उद्देश्य मनोरंजन ही है. हिंदी साहित्य के रीतिकाल में भी यही प्रवृत्तियाँ और उभर कर सामने आईं. और आधुनिक काल के शुरुआती दौर तक जारी रहीं. लेकिन उन्नीसवीं शती में आधुनिक साहित्य के आरंभ के साथ हिंदी साहित्य ने करवट ली और वह बृहत्तर समाज की तरफ अधिक उन्मुख हो गया.

इस परिवर्तन के कारणों का विवेचन अपने आप में एक अध्याय का विषय हो सकता है, परंतु संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि बदली हुई राजनीतिक, आर्थिक परिस्थितियों और छापाखाना आने से साहित्य की उपलब्धता पर पड़े असर ने साहित्य के उद्देश्य को परिवर्तित करने में आधारभूत भूमिका निभाई. पहले साहित्य केवल उच्च वर्ग के लिए उपलब्ध था, इसलिए उनको ही समर्पित था. जब बड़ी संख्या में छपी हुई किताबें जन-जन तक पहुँचने लगीं, तब साहित्य अपने उन पाठकों के लिए समर्पित हो गया. अंग्रेजों के साथ पश्चिम का साहित्य भी खूब आया और पश्चिमी विचारधारा से परिचय प्रगाढ़ हुआ, जिसने प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से हिंदी लेखकों, चिंतकों पर खासा असर डाला.

आइये! हिंदी साहित्य के विचारकों ने साहित्य के उद्देश्य पर क्या विचार किया है, यह देखने से पहले हम इस संबंध में पश्चिम के विचारों से भी थोड़ा परिचित हो जाएँ!

पश्चिम के साहित्यशास्त्र का इतिहास एक के बाद दूसरे काव्य-सिद्धांतों और साहित्यिक वादों का इतिहास है. अठारहवीं शती से बीसवीं शती के बीच पश्चिम में अनेक 'वाद' प्रचलन में आए शास्त्रवाद, स्वच्छंदतावाद, कलावाद, नीतिवाद, सौष्ठववाद, मनोविज्ञानवाद, मार्क्सवाद आदि. इन सभी विचारधाराओं ने अपने-अपने तरीके से साहित्य के उद्देश्य बताएँ हैं. ऊपरी तौर पर शब्दों के फेर से अनेकविध प्रतीत होने वाले इन उद्देश्यों का समाहार अंततोगत्वा दो मुख्य धाराओं के रूप में किया जा सकता है (1) कला कला के लिए; (2) कला जीवन के लिए.

पहली विचारधारा को मानने वाले कला और साहित्य का उद्देश्य उसके सर्वोत्कृष्ट सृजन को ही मानते हैं. यानी कि कला और साहित्य को अच्छी तरह रचा जाना ही उसका उद्देश्य होना चाहिए. अब 'अच्छी तरह रचा जाने का क्या मतलब?' अच्छी तरह रचा जाने का मतलब शास्त्रीय नियमों का पूरी तरह से पालन करना हो सकता है; कल्पना का इस्तेमाल करते हुए सघन कोमल भावानुभूतिपूर्ण रचना करना हो सकता है; सौंदर्य सृष्टि करना हो सकता है, भले ही वह काल्पनिक क्यों न हो; या फिर अपने मन की उड़ान को मनचाहे तरीके से अभिव्यक्त करना हो सकता है, जो, हो सकता है. कभी-कभी दूसरों तक संप्रेषित भी न हो पाता हो. और यह सब इसलिए मान्य है क्योंकि कला, कला के लिए है उसका

कोई दूसरा उद्देश्य नहीं है. शास्त्रवाद, स्वच्छंदतावाद, कलावाद आदि इसी विचारधारा के पोषक हैं.

दूसरी विचारधारा इसके ठीक विपरीत साहित्य का बृहद उद्देश्य मानव जीवन की उन्नति मानती है. यह विचारधारा सांस्कृतिक और नैतिक मूल्यों के समावेश पर बल देते हुए साहित्य के मानवतावादी उपयोगितावादी दृष्टिकोण को स्वीकारती है और साहित्य के जरिये मानव कल्याण के उद्देश्य को आवश्यक मानती है. यहाँ साहित्य किसी के व्यक्तिगत हृदय परिवर्तन का भी कारण बन सकता है और सामाजिक क्रांति का औजार भी. नीतिवाद, मनोविज्ञानवाद, मार्क्सवाद आदि इस विचारधारा के अनुगामी हैं.

पश्चिम में उपर्युक्त दोनों तरह के उद्देश्यों को लेकर प्रभूत (बहुत सारी) रचनाएँ हुईं हैं. श्रेष्ठ साहित्य जिस किसी उद्देश्य को लेकर रचा गया है, लोकमंगलकारी ही सिद्ध हुआ है, वहीं ऐसी भी तमाम रचनाएँ हैं, जो किसी भी साहित्यिक उद्देश्य को पूरा नहीं करतीं.

हिंदी साहित्य पर दोनों ही तरह की विचारधाराओं का पर्याप्त असर दिखाई पड़ता है. पर, फिर भी, हिंदी साहित्य के विचारकों को मुख्य रूप से दूसरी विचारधारा के साथ रहना अधिक भाया है.

आइये! आगे बढ़ने से पहले जाँच लें कि उपर्युक्त अनुच्छेद कितने समझ में आए. नीचे लिखे वाक्यों में से कौन सही है, कौन गलत बताइए:

1. अठारहवीं शती से बीसवीं शती के बीच पश्चिम में अनेक 'वाद' प्रचलन में आए.
2. स्वच्छंदतावाद कला जीवन के लिए विचार का पोषक है.
3. मार्क्सवाद कला जीवन के लिए विचार का पोषक है.
4. 'कला कला के लिए' मानने वाले लेखक आत्मानुभूति की अभिव्यक्ति को ही साहित्य सृजन के लिए महत्वपूर्ण मानते हैं, पाठक को उससे क्या मिलेगा, उसकी चिंता वे नहीं करते.
5. 'कला जीवन के लिए' विचारधारा के अनुगामी साहित्य को सामाजिक क्रांति के औजार के रूप में देखते हैं.

आधुनिक हिंदी साहित्य चिंतन में 'प्रयोजन' के स्थान पर उद्देश्य शब्द का ज्यादा इस्तेमाल हुआ है. आधुनिक हिंदी के सभी लेखकों विचारकों ने साहित्य के उद्देश्य पर सूक्ष्मता से विचार कर स्पष्टतया रखने का प्रयत्न किया है और उसे बृहत्तर समाज के कल्याण से जोड़ा है. हालाँकि इसका आरंभ तुलसीदास से ही हो जाता है, जब 'श्रीरामचरितमानस' में वे कहते हैं :

कीरति भनिति भूति भलि सोई । सुरसरि सम सबकर हित होई ।।

अर्थात् कीर्ति, कविता (साहित्य) और संपत्ति वही अच्छी है, जिससे उसी तरह सबका हित हो, जैसे गंगा से होता है.

आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने लोकमंगल को साहित्य का उद्देश्य घोषित किया. मैथिलीशरण गुप्त ने लिखा:

केवल मनोरंजन न कवि का कर्म होना चाहिए ।
उसमें उचित उपदेश का भी मर्म होना चाहिए ।।

बाबू गुलाबराय ने साहित्य को 'समाज का हित संपादन करने वाला' माना है.

अयोध्याप्रसाद उपाध्याय 'हरिऔध' 'लोकहृदय में विद्यमान तम पुंज का नाश' यानी ज्ञान प्रसार को साहित्य का प्रयोजन मानते हैं.

सन् 1936 ई. में लखनऊ में हुए प्रगतिशील लेखक संघ के प्रथम अधिवेशन में प्रेमचंद का अध्यक्षीय भाषण साहित्य की आधुनिक अवधारणा – परिभाषा और प्रयोजन

को समझने के लिए महत्वपूर्ण है. वे कहते हैं: "..... अब साहित्य केवल मन बहलाव की चीज नहीं है, मनोरंजन के सिवा उसका और भी कुछ उद्देश्य है. अब वह केवल नायक-नायिका के संयोग-वियोग की कहानी नहीं सुनाता; सकतु जीवन की समस्याओं पर भी विचार करता है, और उन्हें हल करता है. अब वह स्फूर्ति या प्रेरणा के लिए अद्भुत आश्चर्यजनक घटनाएँ नहीं ढूँढता और न अनुप्रास का अन्वेषण करता है; सकतु उसे उन प्रश्नों से दिलचस्पी है, जिनसे समाज या व्यक्ति प्रभावित होते हैं. उसकी उत्कृष्टता की वर्तमान कसौटी अनुभूति की वह तीव्रता है, जिससे वह हमारे भावों और विचारों में गति पैदा होती है."

प्रेमचंद का उपर्युक्त वक्तव्य आधुनिक हिंदी साहित्य के उद्देश्य को अच्छी तरह से स्पष्ट कर देता है. बीसवीं शती के पहले हिंदी साहित्य का उद्देश्य भले ही मनोरंजन, स्तुति या वर्ग विशेष की भाव-तुष्टि रहा हो; बीसवीं शती के आरंभ, बल्कि उन्नीसवीं शती के उत्तरार्ध भारतेंदु युग से ही विकसित हो रहे आधुनिक हिंदी साहित्य का उद्देश्य समाज के प्रत्येक वर्ग के जीवन, उनकी समस्याओं, उनके हर्षोल्लासों, उनकी परंपराओं, उनकी रूढ़ियों का चित्रण करना और जीवन परिस्थितियों में अधिक कल्याणमय गुणात्मक परिवर्तन की प्रेरणा पैदा करना हो गया था.

आइये, अब देखें कि आपने क्या समझा! नीचे लिखे वाक्यों में रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:

1. आधुनिक हिंदी के लेखकों विचारकों ने साहित्य के उद्देश्य को बृहत्तर समाज के —— से जोड़ा है.
2. आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने ——— को साहित्य का उद्देश्य घोषित किया.
3. ———— ने साहित्य को 'समाज का हित संपादन करने वाला' माना है.
4. ———— ज्ञान प्रसार को साहित्य का प्रयोजन मानते हैं.
5 आधुनिक हिंदी साहित्य का उद्देश्य जीवन परिस्थितियों में अधिक ———की प्रेरणा पैदा करना है.

1.6 सारबिंदु

मित्रो! आशा है आपने इकाई अच्छी तरह से पढ़कर समझ ली है. यदि आप पाठ के दौरान पूछे गये प्रश्नों के उत्तर बिना किसी मदद के अपने आप तुरंत दे पा रहे हैं, तो इसका अर्थ है कि आपने सचमुच अच्छी तरह इकाई समझ ली है. यदि ऐसा नहीं है, तो आपको पुनः इकाई पढ़ने की आवश्यकता है. दुबारा इकाई पढ़ते समय आप अपनी कॉपी कलम साथ में लेकर बैठें और पढ़े गये अनुच्छेद में कही गयी सबसे महत्वपूर्ण बात को बिंदु के रूप में नोट कीजिए. पूरा पढ़ने के बाद आप अपने लिखे बिंदुओं को नीचे लिखे बिंदुओं से मिलाइए.

- 'साहित्य' शब्द मूलतः संस्कृत भाषा का शब्द है.
- 'सहित' शब्द में भाव अर्थ में 'यत्' प्रत्यय लगाने से 'साहित्य' शब्द बनता है.
- 'साहित्य' शब्द का अर्थ होता है 'सहितस्य भावं'. अर्थात् 'सहित' एकसाथ होने का भाव यानी स्थिति.
- 'साहित्य' शब्द का व्युत्पत्तिमूलक अर्थ है शब्द और अर्थ का सहभाव.
- भाषा के माध्यम से हुई प्रत्येक अभिव्यक्ति साहित्य है. यह साहित्य का व्यापक अर्थ है.
- प्रमुख रूप से साहित्य शब्द का प्रयोग किसी भाषा में रचे गये सृजनात्मक साहित्य के लिए ही होता है. 'साहित्य' शब्द सृजनात्मक साहित्य के अर्थ में रूढ़ हो चुका है.
- संस्कृत आचार्यों ने काव्य (साहित्य) में शब्द और अर्थ की स्थिति अनिवार्य रूप से मानी है, साथ ही यह कि ये शब्द और अर्थ साधारण न होकर सौंदर्ययुक्त, अलंकारयुक्त गुणयुक्त और रसयुक्त होने चाहिए.

- पाश्चात्य परंपरा में 'साहित्य' को अभिव्यक्ति के रूप में समझने की कोशिश हुई है.
- हिंदी साहित्य के विचारकों द्वारा प्रस्तुत 'साहित्य' संबंधी विचारों का सार कुछ इस प्रकार हो सकता है – "कोई रचनाकार जब अपने चारों ओर से होने वाले अनुभवों को अपने शब्दों में ढाल कर पेश करता है तो वह 'साहित्य' बन जाता है."
- संस्कृत काव्यशास्त्र में मुख्य रूप से काव्य के छह प्रयोजन बताए गए हैं.
- साहित्य का उद्देश्य संबंधी पाश्चात्य अवधारणाएँ दो प्रमुख अवधारणाओं में सिमट जाती है 'कला कला के लिए' और 'कला जीवन के लिए'.
- हिंदी के विद्वानों ने 'लोकमंगल' को साहित्य का प्रयोजन स्वीकार किया है.

1.7 परीक्षोपयोगी प्रश्नावली

- **निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 800 शब्दों में दें**

1. 'साहित्य' शब्द का अर्थ बताते हुए साहित्य की अवधारणा स्पष्ट कीजिए.
2. संस्कृत, पाश्चात्य और हिंदी विद्वानों की परंपरा में साहित्य को किस प्रकार परिभाषित किया गया है?
3. साहित्य के प्रयोजन पर विचार कीजिए.

- **निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए**

1. 'साहित्य' का व्युत्पत्तिमूलक अर्थ
2. संस्कृत परंपरा में 'साहित्य' की परिभाषा
3. पाश्चात्य परंपरा में 'साहित्य' की परिभाषा
4. हिंदी परंपरा में 'साहित्य' की परिभाषा
5. संस्कृत काव्यशास्त्रियों द्वारा दिये गये काव्य के छह प्रयोजन
6. पाश्चात्य विचारधारा में साहित्य का उद्देश्य
7. हिंदी के विद्वानों द्वारा बताया गया साहित्य का उद्देश्य

1.8 उपयोगी पाठ्यसामग्री

नीचे कुछ ऐसी पुस्तकों के नाम और कुछ वेबसाइट लिंक हैं, जिनका उपयोग इस इकाई की सामग्री तैयार करने के लिए किया गया है और आपके अध्ययन के लिए भी उपयोगी हो सकते हैं.

1. प्रेमचंद : प्रतिनिधि संकलन; संपादक मगेन्द्र ठाकुर; प्रकाशक नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया.
2. साहित्य विधाओं की प्रकृति; लेखक – देवीशंकर अवस्थी; प्रकाशक – मैकमिलन इंडिया लिमिटेड, नयी दिल्ली.
3. काव्यशास्त्र की रूपरेखा; लेखक – डॉ. रामदत्त भरद्वाज; प्रकाशक – सूर्य प्रकाशन, नयी दिल्ली
4. काव्यशास्त्र; लेखक – डॉ. भागीरथ मिश्र; प्रकाशक – विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी
5. https://www.britannica.com/art/literature/Literary-composition

इकाई 2 हिंदी गद्य साहित्य का परिचयात्मक इतिहास

रूपरेखा

2.1 उद्देश्य

2.2 प्रस्तावना

2.3 हिंदी गद्य का उद्‌भव और विकास

2.4 उन्नीसवीं सदी के आरंभ में हिंदी गद्य भाषा और साहित्य का विकास
- 2.4.1 फोर्ट वीलियम कॉलेज
- 2.4.2 ईसाई मिशनरियों, प्रेसों, स्कूलों और बुक सोसाइटियों का योगदान
- 2.4.3 समाजसुधार आंदोलनों का योगदान
- 2.4.4 पत्र-पत्रिकाएँ
- 2.4.5 उन्नीसवीं सदी के प्रथमार्ध का हिंदी गद्य साहित्य

2.5 आधुनिक हिंदी गद्य साहित्य का अंकुरण – भारतेंदु युग
- 2.5.1 भारतेंदु हरिश्चंद्र
- 2.5.2 भारतेंदु मंडल
- 2.5.3 ‘काशी नागरीप्रचारिणी सभा’

2.6 आधुनिक हिंदी गद्य साहित्य का पल्लवन – द्विवेदी युग

2.7 द्विवेदी युग के बाद

2.8 सारबिंदु

2.9 परीक्षोपयोगी प्रश्नावली

2.10 उपयोगी पाठ्यसामग्री

2.1 उद्देश्य

विद्यार्थी मित्रो! प्रस्तुत इकाई हिंदी गद्य साहित्य के परिचय से संबंधित है, जिसमें आपको हिंदी गद्य साहित्य के उद्‌भव और विकास का परिचय मिलेगा. इस इकाई को पढ़ने के बाद आप –

- हिंदी गद्य के आरंभ को जान सकेंगे.
- हिंदी गद्य की विकास यात्रा को विभिन्न काल खंडों में विभाजित कर समझ सकेंगे.
- हिंदी के विकास के लिए समर्पित संस्थाओं आदि के विषय में जान सकेंगे.
- हिंदी गद्य के आधुनिक काल में मौजूद हिंदी के विविध स्वरूपों से परिचित हो सकेंगे.
- आरंभिक काल की कृतियों का परिचय प्राप्त कर सकेंगे.
- आधुनिक हिंदी गद्य के विकास के विभिन्न चरणों को जान सकेंगे.

2.2 प्रस्तावना

क्या आपने कभी ध्यान दिया है कि सभी प्राचीन ग्रंथ मुख्यतया पद्य में हैं. संस्कृत में तो दर्शन, व्याकरण, वैद्य, गणित आदि के सिद्धांत बताने वाले ग्रंथ भी पद्य में ही हैं.

जानते हैं, ऐसा क्यों है? क्योंकि पद्य को याद करना और ज्यों का त्यों याद करना आसान होता है. इस तथ्य की परख आप स्वयं आसानी से कर सकते हैं. जरा अपने बचपन में पढ़ी हुई कविताओं और कहानियों को याद करने की कोशिश कीजिए. दिमाग पर जोर डालने पर आपको एक दो कविताएँ तो जरूर याद आ जाएँगी और आज भी आप उन्हें बिना किसी फेरफार के ज्यों का त्यों सुना सकेंगे. अब जरा कहानी सुनाने का प्रयत्न कीजिए. अव्वल तो पूरी कहानी ठीक से याद ही नहीं आयेगी और यदि आ भी गयी तो आप शायद ही उसमें कोई फेरफार किए बिना सुना सकें.

पद्य की लयबद्धता उसे ज्यों का त्यों याद करने में सहायक होती है. इसीलिए पुराने समय में, जब ज्ञान को सुरक्षित रखने का एकमात्र कारगर तरीका उसे कंठस्थ रखना था, सारी रचनाएँ पद्य में हुईं – साहित्य की भी और शास्त्रीय भी. यद्यपि संस्कृत ने गद्य साहित्य का भी विकास किया था और बाणभट्ट द्वारा रचित 'कादंबरी' और 'हर्षचरितम्' जैसे प्रौढ़ गद्यकाव्य संस्कृत में मिलते हैं. संस्कृत कथासाहित्य की भी समृद्ध परंपरा है, जो लोककथाओं की मौखिक परंपरा से जुड़ती-सी नजर आती है. 'परंतु' हिंदी का गद्य साहित्य इन दोनों में से किसी-भी परंपरा का विकास नहीं है, इस तथ्य के बावजूद कि अपने स्वरूप के विकासक्रम में हिंदी ने संस्कृत से एक बड़ा दाय पाया है शब्द भंडार, व्याकरणिक युक्तियों और साहित्यिक थाती के रूप में भी.

यदि हम गद्य का अर्थ 'बिना छंद-तुक का उपयोग किये', सीधे सादे वाक्यों में कहना चाहें और साहित्य को उसकी व्यापक अवधारणा के तहत 'कोई भी लिपिबद्ध कर सुरक्षित की गयी रचना' के अर्थ में ग्रहण करें तो हम कह सकते हैं कि हिंदी के गद्य साहित्य का इतिहास भी कमोबेश तब से ही शुरू होगा, जब से हिंदी भाषा का इतिहास.

2.3 हिंदी गद्य का उद्‌भव और विकास

नवीं-दसवीं शती में, जब हिंदी भाषा धीरे-धीरे अपना स्वरूप ग्रहण कर रही थी और पश्चिम से पूरब तक अलग-अलग क्षेत्रों में अलग-अलग लहजे और बोलियों के रूप में काम में लायी जा रही थी, गद्य के कुछ न कुछ नमूने उन बोलियों के विभिन्न दस्तावेजों के रूप में मिलते हैं. इन दस्तावेजों में दानपत्र, धार्मिक उपदेश, राजनैतिक परवाने, आर्थिक पट्टे आदि भी शामिल हैं, जो 'साहित्य' की रूढ़ परिभाषा के अंतर्गत नहीं आते और कथा-चरित इत्यादि भी, जिन्हें किन्हीं अर्थों में साहित्य कहा जा सकता है.

हम दसवीं शती ई. से लेकर अठारहवीं शती ई. तक के कालखंड में फैली हुई ऐसी रचनाओं की एक सूची तैयार कर सकते हैं, जिनमें बनती हुई हिंदी के काल और स्थान के अनुसार बदलते हुए रूपों में गद्य के नमूने मिलते हैं –

क्र.सं.	ग्रंथ	विषय	रचनाकार	काल	भाषा
1.	राउलवेल	नायिका का नखशिख सौंदर्यवर्णन	रोडा	दसवीं शती ई.	राजस्थानी हिंदी
2.	उक्तिव्यक्ति-प्रकरण	व्याकरण	दामोदर शर्मा	बारहवीं शती ई.	बनारसी हिंदी
3.	वर्णरत्नाकर	काव्य रचना की शिक्षा	ज्योतिरीश्वर ठाकुर	चौदहवीं शती ई.	मैथिल हिंदी
4.	श्रृंगाररसमंडन	कृष्णरास के संदर्भ से श्रृंगार रस का वर्णन	गोसाईं विट्ठलनाथ	सोलहवीं शती ई.	ब्रजी हिंदी

क्र.सं.	ग्रंथ	विषय	रचनाकार	काल	भाषा
5.	चंदछंदबरनन की महिमा	बादशाह अकबर के दरबार का वर्णन	गंगकवि	सोलहवीं शती ई.	खड़ीबोली हिंदी
6.	चौरासी वैष्णवन की वार्ता	वैष्णव भक्तों और आचार्यों की महिमा को प्रकट करने वाली कथाएँ	गोस्वामी गोकुलनाथ	सत्रहवीं शती ई.	ब्रजी हिंदी
7.	दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता	वैष्णव भक्तों और आचार्यों की महिमा को प्रकट करने वाली कथाएँ	गोस्वामी गोकुलनाथ	सत्रहवीं शती ई.	ब्रजी हिंदी
8.	अष्टयाम	भगवान रामचंद्र की दिनचर्या का वर्णन	नाभादास	सत्रहवीं शती ई.	ब्रजी हिंदी
9.	अगहन महात्म्य	सनातन हिन्दू धर्म की दृष्टि से मार्गशीर्ष (अगहन) मास में किये जाने वाले धार्मिक उपाचारों का वर्णन	वैकुंठमणि शुक्ल	सत्रहवीं शती ई.	ब्रजी हिंदी
10.	वैशाख महात्म्य	सनातन हिन्दू धर्म की दृष्टि से वैशाख मास में किये जाने वाले धार्मिक उपाचारों का वर्णन	वैकुंठमणि शुक्ल	सत्रहवीं शती ई.	ब्रजी हिंदी
11.	नासिकेतोपाख्यान	-	-	अठारहवीं शती ई.	ब्रजी हिंदी
12.	बैतालपचीसी	संस्कृत ग्रंथ 'वेतालपञ्चविंशति' की कहानियाँ	सूरति मिश्र	अठारहवीं शती ई.	ब्रजी हिंदी
13.	भाषायोगवासिष्ठ	दर्शन और आध्यात्म का ग्रंथ	रामप्रसाद निरंजनी	1741 ई.	खड़ीबोली हिंदी
14.	पद्मपुराण	रविषेणाचार्यकृत जैन ग्रंथ 'पद्मपुराण' का अनुवाद	पं. दौलतराम	1766 ई.	खड़ीबोली हिंदी
15.	आईने अकबरी की भाषा वचनिका	अबुल फजल द्वारा लिखित 'आईन-ए-अकबरी' का अनुवाद	लाला हीरालाल	1795 ई.	अरबी-फारसी शब्दयुक्त बोलचाल की हिंदी

हिंदी साहित्य का पहला मानक इतिहास लिखने वाले आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने 'भाषायोगवासिष्ठ' को हिंदी के परिमार्जित गद्य की पहली पुस्तक और इसके लेखक रामप्रसाद निरंजनी को पहला प्रौढ़ गद्य लेखक बताया है. परंतु हिंदी साहित्य के सभी इतिहासकार इस बात पर एकमत हों – ऐसा नहीं है. और हिंदी गद्य की पहली पुस्तक 'राउलवेल' को मानने वालों से लेकर अलग-अलग तर्कों के साथ अन्य किसी पुस्तक को पहली खड़ीबोली पुस्तक होने का दावा करने वाले भी हैं.

उपर्युक्त सूची के कुछ ग्रंथ पूरी तरह गद्य में हैं, तो कुछ में छिटपुट गद्य आ गया है. किंतु चाहे पूर्णतः हो या अंशतः, ये गद्यखंड साहित्यास्वादन के उद्देश्य से नहीं रचे गये हैं. इनका उद्देश्य या तो दस्तावेजीकरण यानी डॉक्यूमेंटेशन है, या फिर सरल बोलचाल की भाषा में किसी विषय को समझाना है. ये विकसित हो रही गद्य भाषा के विकासक्रम को दर्शाने वाले अच्छे नमूने हैं, पर 'हिंदी का गद्य साहित्य' कहने से आज जिस साहित्य की संकल्पना हमारे मन में उभरती है, उसमें ये कहीं फिट नहीं बैठते हैं. वस्तुतः आज जिस हिंदी गद्य साहित्य से हम परिचित हैं, उसकी भाषा और विधाओं का स्वरूप उन्नीसवीं शती में ही बनना शुरू हो सका.

आइये! जाँचें कि हमने अब तक कितना समझा!

- **निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर एक वाक्य में दीजिए**

1. हिंदी गद्य का सबसे पुराना नमूना किस काल का है?
2. हिंदी गद्य के उद्भव काल की रचनाएँ मुख्य रूप से हिंदी की किस बोली में लिखी गयी थीं?
3. 'उक्तिव्यक्तिप्रकरण' क्या एक साहित्यिक ग्रंथ है?
4. 'चौरासी वैष्णवन की वार्ता' और 'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता' के लेखक कौन हैं?
5. आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने किसे "हिंदी का प्रथम प्रौढ़ गद्य लेखक" और उनकी किस रचना को 'हिंदी गद्य की पहली पुस्तक' कहा है?

2.4 उन्नीसवीं शती के आरंभ में हिंदी गद्य भाषा और साहित्य का विकास

उन्नीसवीं शताब्दी हिंदी भाषा और साहित्य के लिहाज से काफी घटनापूर्ण काल है. ईस्ट इंडिया कंपनी का राज स्थिर हो चुका था और प्रशासनिक कार्यों के लिए इंग्लैंड से अधिकारी-कर्मचारी बुलाये जा रहे थे, जिन्हें यहाँ काम करने के लिए यहाँ की भाषा सिखाने की जरूरत थी. ईसाई मिशनरियाँ अपने धर्म का प्रचार प्रसार आम जनता की भाषा में करना चाहती थीं. पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन आरंभ हुआ, जिनका उद्देश्य ज्यादा से ज्यादा लोगों तक अपनी पहुँच बनाना था. समाज सुधार आंदोलन शुरू हुए, जिन्हें ऐसी भाषा का प्रयोग करना था, जिसे जन साधारण आसानी से समझ सकें.

प्रशासन और अदालत की भाषा के रूप में फारसी का प्रयोग बहुत पहले से चला आ रहा था, परंतु आम जनता अब उसे नहीं समझती थी. पारंपरिक पाठशालाएँ और मदरसे धार्मिक अनुष्ठान केंद्रित शिक्षा देने के कारण क्रमशः संस्कृत और अरबी सिखाने का यत्न करते थे, जो केवल धर्म संबंधी कार्यों में ही पुरोहित वर्ग द्वारा प्रयुक्त होती थीं, आमजन के बीच सामान्य बातचीत के लिए नहीं. साहित्य की भाषा ब्रज, अवधी, मैथिली आदि अलग-अलग क्षेत्रों में अलग-अलग थी. लेकिन साथ ही इन सबसे अलग, एक बड़े भूभाग में साधारण जन समुदाय के बीच सामान्य रूप से प्रचलित एक भाषा थी, जो थोड़े बहुत शब्दों का फेर

होने पर भी आमतौर पर व्यापक रूप से समझी और स्वीकारी जा रही थी. यह वही भाषा थी जिसे हम आज की हिंदी का पूर्वरूप कह सकते हैं और जिसे बाद में विद्वानों और भाषाशास्त्रियों ने अलग-अलग तर्कों के आधार पर हिंदी, हिंदुस्तानी, हिंदवी, हिंदुई, रेख्ता, उर्दू आदि अनेक नाम दिये. यह वह भाषा थी, जिसके शब्द भंडार और व्याकरणिक युक्तियों का एक बड़ा हिस्सा जहाँ एक ओर संस्कृत से आता था, वहीं दूसरी ओर अरबी-फारसी से भी. और आम जनता बिना स्रोतों का ख्याल किये बड़े मजे से सहजता के साथ इसका इस्तेमाल आपसी संवाद और संचार के लिए कर रही थी.

उन्नीसवीं शती के आरंभ में इसी भाषा को गद्य लेखन के लिए उन सभी कारकों द्वारा अपनाया गया, जिनका उल्लेख हम ऊपर कर आये हैं और हिंदी गद्य भाषा का आधुनिक स्वरूप धीरे-धीरे निश्चित होने लगा.

आइये! अब आधुनिक हिंदी गद्य भाषा को गढ़ने में इन विभिन्न कारकों की भूमिका को एक-एक कर देखें.

2.4.1 फोर्ट वीलियम कॉलेज

ईस्ट इंडिया कंपनी के भारत में गवर्नर जनरल लार्ड वेलेजली ने सन् 1800 ई. में अंग्रेजों को भारत में प्रशासन का प्रशिक्षण (मुख्य रूप से अंग्रेजी भाषा का प्रशिक्षण) देने के उद्देश्य से कलकत्ता (वर्तमान कोलकाता) में फोर्ट वीलियम कॉलेज की स्थापना की. इस कॉलेज ने आधुनिक भारतीय भाषाओं, विशेष रूप से बांग्ला, हिंदी और उर्दू के वर्तमान स्वरूप तक की यात्रा के आरंभिक काल में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया.

कॉलेज के हिंदी उर्दू विभागाध्यक्ष जॉन गिलक्रिस्ट, जो प्रतिष्ठित भारतविद माने जाते थे, ने पाया कि जिस भाषा का प्रयोग तत्कालीन जनसमुदाय सहजता के साथ कर रहा था, उसमें दो तरह की प्रवृत्तियाँ हैं – एक में संस्कृत की ओर झुकाव ज्यादा दिखाई देता है, तो दूसरे में अरबी फारसी का असर अधिक दिखाई देता है. उन्होंने कॉलेज के उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए स्पष्टता की दृष्टि से दोनों प्रवृत्तियों के लिए अलग-अलग पुस्तकें अलग-अलग लिपि में तैयार करवायी और देवनागरी लिपि में लिखी गयीं संस्कृत की ओर झुकी हुई भाषा की पुस्तकों को हिंदी की पुस्तकें और नस्तालीक लिपि (अरबी-फारसी लिपि का एक रूप) में लिखी गयी. अरबी फारसी से प्रभावित भाषा की पुस्तकों को उर्दू की पुस्तकें कहा. हालाँकि लिपि के बड़े और स्पष्ट अंतर के अलावा भाषा के स्तर पर दोनों में समानता ज्यादा थीं, अंतर कम.

गिलक्रिस्ट महाशय के निर्देशन में श्री लल्लू लालजी और पं. सदल मिश्र ने औपचारिक रूप से हिंदी में साहित्यिक पुस्तकें लिखीं, जिनमें से श्री लल्लूजी लाल लिखित 'प्रेमसागर' और पं. सदल मिश्र लिखित 'नासिकेतोपाख्यान' की गणना आधुनिक हिंदी गद्य साहित्य की आरंभिक पुस्तकों में की जाती है.

'नासिकेतोपाख्यान' या 'चन्द्रावती' कथा का संस्कृत से हिंदी अनुवाद सदल मिश्र जी ने सन् 1803 ई. में किया था.

'प्रेमसागर' 'श्रीमद्भागवत' के दसवें स्कंध (अध्याय) की ब्रजभाषा में कही गयी कथा का हिंदी अनुवाद है, जो लल्लूजी लाल द्वारा ही कलकत्ता (वर्तमान कोलकाता) से सन् 1810 ई. में पहली बार प्रकाशित किया गया था.

2.4.2 ईसाई मिशनरियों, प्रेसों, स्कूलों और बुक सोसाइटियों का योगदान

ईसाई मिशनरियों ने अपने धर्म के प्रचार के लिए स्थानीय भाषा के प्रयोग की नीति अपनाई. इस नीति के तहत धार्मिक पुस्तकों का हिंदी अनुवाद और प्रचारार्थ सामग्री का हिंदी में लेखन कर वितरण हुआ.

इस दिशा में सबसे बड़ा और महत्वपूर्ण काम सेरामपुर मिशन प्रेस ने किया, जिसकी स्थापना वीलियम कैरे ने अपने अन्य सहयोगियों के साथ मिलकर की थी. सन् 1800 ई. में अपनी स्थापना से अगले 37 वर्षों तक इस प्रेस ने वीलियम कैरे के मार्गदर्शन में लगभग 50 भारतीय और अन्य दक्षिण एशियाई भाषाओं में सवा दो लाख से भी अधिक पुस्तकें प्रकाशित कीं. इन पुस्तकों में 'बाइबिल', 'न्यू टेस्टामेंट', 'इंजील', 'गॉस्पेल' आदि ईसाई धार्मिक पुस्तकों के विभिन्न भाषाओं में अनुवाद के साथ-साथ अनेक भारतीय भाषाओं के व्याकरण की पुस्तकें, 'शब्दकोष', 'रामायण', 'महाभारत' और 'पुराणों' के अनुवाद, संवाद पुस्तिकाएँ, संस्कृत सुभाषित ग्रंथ, भारतीय दर्शन ग्रंथ तथा अन्य प्रकार की पुस्तकें भी शामिल हैं.

सन् 1809 ई. में 'न्यू टेस्टामेंट' का 'नये धर्म नियम' नाम से हिंदी अनुवाद प्रकाशित कराने से पहले ही वीलियम कैरे हिंदी 'बाइबिल' का प्रकाशन करवा चुके थे. सन् 1813 ई. में प्रेस ने 'दाऊद के गीतें' पुस्तक प्रकाशित की.

जगह-जगह मिशनरी स्कूलों की भी शुरुआत उन्नीसवीं शती में हुई. इन स्कूलों में अंग्रेजी के साथ-साथ स्थानीय भाषा की भी पढ़ाई होती थी और विज्ञान, सामाजिक विज्ञान आदि विषय भी भारतीय भाषाओं में पढ़ाए जाते थे. अतः इन विषयों की पाठ्य पुस्तकें बनाने के उद्देश्य से सन् 1833 ई. में आगरे में 'स्कूल बुक सोसाइटी' की स्थापना हुई. इसके पहले सन् 1817 ई. से कलकत्ते में ऐसी एक सोसाइटी पहले ही कार्यरत थी. आगरा स्कूल बुक सोसाइटी ने सन् 1837 ई. में इंग्लैंड के इतिहास का अनुवाद और सन् 1839 ई. में मार्शमेन लिखित 'एंशिएंट हिस्ट्री' का पं. रतनलाल द्वारा किया गया अनुवाद 'कथासार' नाम से हिंदी में प्रस्तुत किया. इसी सोसाइटी से सन् 1840 ई. में पं. ओंकार भट्ट की 'भूगोलसार' और सन् 1847 ई. में पं. बद्रीलाल शर्मा की 'रसायनप्रकाश' भी प्रकाशित हुई. इसके एक वर्ष पहले कलकत्ता बुक सोसाइटी से 'पदार्थविद्यासार' प्रकाशित हो चुकी थी. विज्ञान संबंधी अन्य पुस्तकों का भी प्रकाशन यहाँ से हुआ था.

सन् 1855 ई. से सन् 1862 ई. के बीच मिर्जापुर के ईसाईयों के आरफेन प्रेस से शेरिंग महाशय के संपादन में 'भूचरित्रदर्पण', 'भूगोलविद्या', 'मनोरंजक वृत्तांत', 'जंतुप्रबंध', 'विद्यासागर', 'विद्वान संग्रह' आदि विविध विषयों पर पुस्तकें प्रकाशित हुईं.

इन सभी चेष्टाओं ने हिंदी गद्य के स्वरूप को बनाने में अपना उल्लेखनीय योगदान दिया.

2.4.3 समाजसुधार आंदोलनों का योगदान

उन्नीसवीं सदी भारत के लिए संभवतः सर्वाधिक हलचल भरी सदी रही है, एक ऐसी सदी जिसमें भारत ने हर स्तर राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, भाषिक और साहित्यिक स्तरों पर युगांतकारी परिवर्तन देखा. एक ओर अंग्रेजों की सत्ता निर्णायक रूप से स्थिर हुई, पर साथ ही उनके बढ़ते संपर्क संसर्ग ने भारतीयों को अपने आपको देखने और समझने की एक नयी दृष्टि दी. सामाजिक कुरीतियों और धार्मिक अंधविश्वासों की ओर ध्यान गया और उन्हें दूर करने की मुहिम शुरू हुई. जन-जन तक अपनी बात पहुँचाने के लिए ऐसे समाजसुधार आंदोलनों के नेताओं को जनता की भाषा का उपयोग करना ही उचित लगा और स्थानीय भाषा के साथ-साथ व्यापक जनसमूह तक पहुँचाने के लिए हिंदी का इस्तेमाल भी हुआ.

सन् 1828 ई. में 'ब्रह्म सभा' की पहली बैठक से पहले ही सन् 1815 ई. में ही राजा राममोहन राय ने वेदांत सूत्रों के भाष्य का हिंदी अनुवाद करके प्रकाशित कर दिया था. सन् 1875 ई. में 'आर्य समाज' की स्थापना स्वामी दयानंद सरस्वती ने की. उन्होंने

अपने प्रवचनों के लिए हिंदी को अपनाया. सन् 1875 ई. में ही हिंदी में लिखित उनका ग्रंथ 'सत्यार्थ प्रकाश' प्रकाशित हुआ. पंजाब में समाजसुधार की अलख जगाने वाले श्री श्रद्धाराम फिल्लौरी और पं. नवीन चंद्र राय ने भी व्यापकता की दृष्टि से हिंदी का इस्तेमाल किया.

2.4.4 पत्र-पत्रिकाएँ

उन्नीसवीं शताब्दी में भाषा और साहित्य के क्षेत्र में एक और महत्वपूर्ण उपक्रम हुआ, जिसने आगे के साहित्य का स्वरूप गढ़ने में निर्णायक भूमिका निभाई, यह था प्रेस का आविर्भाव और पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन का आरंभ.

हिंदी का पहला समाचार पत्र 'उदंत मार्तंड' 30 मई, 1826 ई. को कलकत्ता (वर्तमान कोलकाता) से साप्ताहिक पत्र के रुप में प्रकाशित हुआ. इसके संपादक और प्रकाशक कानपुर के रहनेवाले पं. जुगलकिशोर शुक्ल थे.

09 मई, 1829 ई. को राजा राममोहन राय ने साप्ताहिक पत्र 'बंगदूत' शुरू किया, जो बांग्ला और फारसी के साथ-साथ हिंदी में भी था.

सन् 1834 ई. में कलकत्ते से ही साप्ताहिक 'प्रजामित्र' का प्रकाशन शुरू हुआ.

सन् 1845 ई. में राजा शिवप्रसाद 'सितारे हिंद' ने 'बनारस अखबार' निकाला. यह भी साप्ताहिक पत्र था.

सन् 1846 ई. में मौलवी नसीरुद्दीन ने कलकत्ते से 'मार्तंड' पत्र निकाला, जो पाँच भाषाओं – हिंदी, उर्दू, बांग्ला, फारसी और अंग्रेजी में निकलता था.

सन् 1849 ई. में मालवा से प्रेम नारायण के संपादकत्व में साप्ताहिक 'मालवा अखबार' का प्रकाशन शुरू हुआ.

सन् 1850 ई. में बनारस से 'सुधाकर' नाम से एक साप्ताहिक पत्र तारामोहन मित्र और साथियों ने प्रकाशित करना शुरू किया.

सन् 1852 ई. में आगरे के मुंशी सदासुखलाल के प्रबंध और संपादन में 'बुद्धिप्रकाश' नामक पत्र प्रकाशित होना शुरू हुआ, जो अपने अल्पकालिक पूर्ववर्तियों की अपेक्षा दीर्घजीवी रहा.

सन् 1854 ई. में हिंदी का पहला दैनिक समाचार पत्र 'समाचार सुधावर्षण' सामने आया, जो कलकत्ता से श्यामसुंदर सेन के संपादन में प्रकाशित होता था.

सन् 1855 ई. में आगरा से राजा लक्ष्मण सिंह ने 'प्रजाहितैषी' निकाला.

सन् 1865 ई. में बरेली से 'तत्वबोधिनी' पत्रिका प्रकाशित होती थी.

सन् 1867 ई. में लाहौर से नवीनचंद्र राय 'ज्ञानप्रदायिनी' पत्रिका मासिक निकाल रहे थे.

सन् 1867 ई. में ही जम्मू से मासिक 'वृतांत विलास' निकलती थी.

इन सभी पत्र-पत्रिकाओं में तत्कालीन महत्व के समाचार ही मुख्य रुप से हुआ करते थे. साहित्यिक सामग्री का प्रायः अभाव होता था. भाषा भी बहुत व्यवस्थित नहीं होती थी. फिर भी, हिंदी गद्य के प्रारंभिक चरणों के रूप में इन पत्र-पत्रिकाओं की बड़ी भूमिका है. इन छोटे-छोटे लड़खड़ाते कदमों के बिना हिंदी गद्य वो बड़े-बड़े डग कभी न भर पाता जो उसने आगे भारतेंदु युग और फिर द्विवेदी युग में भरे.

2.4.5 उन्नीसवीं शती के प्रथमार्ध का हिंदी गद्य साहित्य

विद्यार्थी मित्रो! अब तक हमने जो चर्चा की, वह हिंदी गद्य के विकास से संबंधित थी. आरंभिक काल में जो हिंदी गद्य सामने आया, उसमें से अधिकांशतः साहित्यिक कृतियों

के रूप में नहीं था. लेकिन उसने बाद में आने वाले समृद्ध गद्य साहित्य और उसकी भाषा के लिए उर्वर जमीन तैयार कर दी.

आइये! अब हम देखें कि उन्नीसवीं शती के पहले पाँच-छह दशकों तक कौन-कौन सी साहित्यिक कृतियाँ प्रकाश में आयीं और उनके लेखक कौन थे.

श्री लल्लूजी लाल और पं. सदल मिश्र और उनकी कृतियाँ क्रमशः 'प्रेमसागर' और 'नासिकेतोपाख्यान' की चर्चा हमने ऊपर फोर्ट वीलियम कॉलेज के संदर्भ में की ही थी. यद्यपि इन दोनों ने ही मौलिक लेखन न कर अनुवाद ही किये फिर भी आरंभिक गद्य साहित्यकारों के रूप में उनका महत्व कम नहीं आँका जा सकता.

लगभग उसी समय, जब लल्लूजी लाल और सदल मिश्र फोर्ट वीलियम कॉलेज के लिए लिख रहे थे, मुंशी सदासुखलाल 'नियाज' ने स्वतंत्र रूप से स्वेच्छया जन सामान्य की भाषा में 'सुखसागर' की रचना की. यह भी 'श्रीमद्भगवत्पुराण' का अनुवाद था.

लगभग इसी समय के आसपास, सन् 1798 ई. से सन् 1803 ई. के बीच सैयद इंशाअल्लाह खाँ ने 'रानी केतकी की कहानी' या 'उदयभानचरित' लिखी. अन्य तीनों ग्रंथों के मुकाबले 'रानी केतकी की कहानी' इस मायने में अलग थी कि यह संस्कृत या किसी अन्य भाषा के ग्रंथ का अनुवाद नहीं थी. विद्यार्थी मित्रो! उपर्युक्त चारों लेखक और उनकी ये चार गद्य रचनाएँ आधुनिक हिंदी गद्य साहित्य के लिए नींव का पत्थर मानी जाती हैं.

सन् 1856 ई. में राजा शिवप्रसाद सिंह 'सितारे हिंद' शिक्षा विभाग में इंस्पेक्टर के पद पर नियुक्त हुए. तब हिंदी को पाठ्यक्रम का हिस्सा और शिक्षा का माध्यम बनाने के प्रयास में उन्होंने विभिन्न विषयों पर हिंदी में पुस्तकें लिखीं और लिखवाईं. इसी क्रम में उन्होंने पाठ्यक्रम उपयोगी कहानियाँ 'राजा भोज का सपना', 'वीरसिंह का वृत्तांत', 'आलसियों का कोड़ा' आदि की रचना की.

सन् 1863 ई. में राजा लक्ष्मण सिंह ने कालिदास के संस्कृत नाटक 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' का हिंदी अनुवाद 'शकुंतला नाटक' नाम से प्रकाशित किया. इसकी भाषा ऐसी सधी हुई और धाराप्रवाह थी कि अनुवाद होते हुए भी इसे मौलिक कृति का-सा सम्मान प्राप्त हुआ. आगे चलकर भारतेंदु ने भी इसकी भाषा से प्रेरणा प्राप्त की और हिंदी के पहले नाटक का चर्चा करते हुए इसका नाम लिया. राजा लक्ष्मण सिंह ने कालिदास के ही संस्कृत महाकाव्य 'रघुवंशम्' का भी हिंदी गद्यानुवाद 'रघुवंश' नाम से किया.

हिंदी साहित्य सृजन न केवल हिंदीभाषी क्षेत्र में हो रहा था, बल्कि इसकी एक अलख पंजाब में भी **बाबू नवीनचंद्र राय** और **पं. श्रद्धाराम फिल्लौरी** के माध्यम से जगी हुई थी।

सन् 1863 ई. से सन् 1880 ई. के बीच **बाबू नवीनचंद्र राय** ने शिक्षा के लिए भिन्न-भिन्न विषयों की बहुत-सी पुस्तकें हिंदी में तैयार कीं और करवाईं, जो लंबे समय तक वहाँ पाठ्यक्रम का हिस्सा रहीं. नवीन बाबू ने साहित्यिक पुस्तक भले ही न लिखीं हों, पर हिंदी शिक्षा के प्रसार के माध्यम से उन्होंने हिंदी साहित्य प्रेमी, पाठक और कोई आश्चर्य नहीं कि भविष्य के साहित्यकार भी तैयार किए हों.

सन् 1853 ई. के आसपास पंजाब में ही विलक्षण प्रतिभाशाली विद्वान **पंडित श्रद्धाराम फुल्लौरी** ने हिंदी में व्याख्यान, कथाओं और लेखन के माध्यम से हिंदी का प्रसार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई. सन् 1877 ई. में उन्होंने 'भाग्यवती' नाम का सामाजिक उपन्यास लिखा. हिंदी साहित्य के इतिहासकारों में से बहुतों ने इसे ही हिंदी का पहला उपन्यास माना है।

आधुनिक हिंदी गद्य साहित्य की पूर्वपीठिका यहाँ पूरी होती है. सन् 1868 ई. में हिंदी

साहित्याकाश में भारतेंदु के उदित होते ही हिंदी भाषा और स्वरूप संबंधी संशय के बादल छंट जाते हैं और आधुनिक हिंदी गद्य साहित्य अधिक व्यवस्थित एक निश्चित आकार लेने लगता है।

आइये! आगे चलने से पहले प्रश्नों के माध्यम से अपने पढ़े हुए को दुहरा लें. निम्नलिखित प्रश्नों के सही उत्तर पर निशान लगाइए

(1) उन्नीसवीं शती के आरंभ में हिंदी गद्य भाषा के विकास के संदर्भ में निम्न में से कौन महत्वपूर्ण है?

(क) फोर्ट वीलियम कॉलेज (ग) सेरामपुर मिशन प्रेस

(ख) आर्य समाज (घ) उपर्युक्त सभी

(2) हिंदी का पहला समाचार पत्र है?

(क) बनारस अ़खबार (ग) सुधाकर

(ख) उदंत मार्तंड (घ) समाचार सुधावर्षण

(3) 'शकुंतला' नाटक के रचनाकार हैं?

(क) कालिदास (ग) सदल मिश्र

(ख) राजा शिवप्रसाद सिंह 'सितारे हिंद' (घ) राजा लक्ष्मण सिंह

(4) हिंदी का पहला उपन्यास माना जाने वाला 'भाग्यवती' किसका लिखा हुआ है?

(क) बाबू नवीनचंद्र राय (ग) पं. श्रद्धाराम फिल्लौरी

(ख) इंशाल्लाह खाँ (घ) पं. सदासुखलाल 'नियाज़'

(5) फोर्ट वीलियम कॉलेज से जुड़े हुए लेखक द्वय कौन-कौन हैं?

(क) लल्लूजी लाल और सदल मिश्र

(ख) सदासुखलाल 'नियाज़' और सदल मिश्र

(ग) लल्लूजी लाल और सदासुखलाल 'नियाज़'

(घ) सदल मिश्र और इंशाल्लाह खाँ

- **सही जोड़े मिलाइए**

(1)	इंशाअल्लाह खाँ	(क)	'प्रेमसागर'
(2)	सदासुखलाल 'नियाज़'	(ख)	'नासिकेतोपाख्यान'
(3)	सदल मिश्र	(ग)	'रानी केतकी की कहानी'
(4)	लल्लूजी लाल	(घ)	'सुखसागर'

- **सुमेलित कीजिए**

(1)	उदंत मार्तंड	(क)	मुंशी सदासुखलाल	(i)	1845 ई.
(2)	बनारस अ़खबार	(ख)	बाबू तारामोहन मित्र	(ii)	1826 ई.
(3)	सुधाकर	(ग)	श्यामसुंदर सेन	(iii)	1855 ई.
(4)	बुद्धिप्रकाश	(घ)	राजा लक्ष्मण सिंह	(iv)	1867 ई.
(5)	समाचार सुधावर्षण	(ङ)	नवीनचंद्र राय	(v)	1850 ई.
(6)	प्रजा हितैषी	(च)	जुगलकिशोर शुक्ल	(vi)	1852 ई.
(7)	ज्ञानप्रदायिनी पत्रिका	(छ)	राजा शिवप्रसाद सिंह	(vii)	1854 ई.

2.5 आधुनिक हिंदी गद्य साहित्य का अंकुरण – भारतेंदु युग

आधुनिक हिंदी गद्य साहित्य के संबंध में अब तक आपने जो पढ़ा वह भाषा और साहित्य के इतिहास की दृष्टि से तो महत्वपूर्ण है, परंतु आज यदि शुद्ध रूप से हिंदी की साहित्यिक कृतियों को चुनने की बात आए, तो उनमें से हम शायद ही किसी का उल्लेख करें इस तथ्य के बावजूद कि इस पूर्वपीठिका के बिना आगे चलना असंभव था. हम कह सकते हैं कि तब आधुनिक हिंदी गद्य साहित्य का बीज बोया गया था जिसका अंकुरण भारतेंदु के समय में हुआ.

सन् 1868 ई. में पहली बार भारतेंदु का लेखन प्रकाश में आया और इसी समय से हिंदी भाषा और साहित्य ने एक नयी करवट ली एक नये युग की शुरुआत हुई, जिसे उस युग के केंद्रीय व्यक्तित्व और अकेले अपनी प्रतिभा के बल पर पूरे युग को दिशा देने वाले भारतेंदु हरिश्चंद्र के नाम पर 'भारतेंदु युग' कहा गया. आचार्य रामचंद्र शुक्ल के शब्दों में – "भारतेंदु हरिश्चंद्र का प्रभाव भाषा और साहित्य दोनों पर बड़ा गहरा पड़ा. उन्होंने जिस प्रकार गद्य की भाषा को परिमार्जित करके उसे बहुत ही चलता मधुर और स्वच्छ रूप दिया, उसी प्रकार हिंदी साहित्य को भी नये मार्ग पर ला खड़ा कर दिया. उनके भाषा-संस्कार की महत्ता को सब लोगों ने मुक्त कंठ से स्वीकार किया और वे वर्तमान हिंदी गद्य के प्रवर्तक माने गये. ..... हमारे साहित्य को नये-नये विषयों की ओर प्रवृत्त करने वाले हरिश्चंद्र ही हुए।" ('हिंदी साहित्य का इतिहास' पृ. 449 - 450)

2.5.1 भारतेंदु हरिश्चंद्र

भारतेंदु हरिश्चंद्र का जन्म 09 सितंबर, 1850 ई. को वाराणसी के एक प्रतिष्ठित वैश्य कुल में हुआ था. उनके पिता बाबू गोपालचंद्र स्वयं साहित्यप्रेमी और ब्रजभाषा के कवि थे. हरिश्चंद्र को बचपन से घर में ही समृद्ध साहित्यिक वातावरण सुलभ हुआ. सन् 1863 ई. में वे परिवार के साथ जगन्नाथ पुरी की तीर्थयात्रा पर गये थे. इस यात्रा में उनका परिचय बंगाल की नयी साहित्यिक प्रगति से हुआ, जिसका खासा प्रभाव उन पर पड़ा. फिर सन् 1868 ई. में वह खास घटना घटी जिसने उन्हें निर्णायक रूप से साहित्य के क्षेत्र में उतार दिया. यह घटना थी काशीनरेश महाराज ईश्वरीप्रसाद नारायण सिंह की प्रेरणा से पं. शीतलाप्रसाद त्रिपाठी द्वारा लिखित नाटक 'जानकीमंगल' का वाराणसी के कैंटोन्मेंट क्षेत्र में स्थित अंग्रेजों के 'क्लब हाउस' के मंच पर धूमधाम से अभिनय, जिसको देखने उस समय के बनारस का सकल कुलीन समाज पधारा था और जिसमें युवा हरिश्चंद्र ने आकस्मिक रूप से लक्ष्मण की भूमिका सफलतापूर्वक निभाई थी. नाटक और अभिनेता दोनों की प्रशंसा सभ्य समाज ने मुक्त कंठ से की.

इसी वर्ष भारतेंदु ने बांग्ला नाटक 'विद्यासुंदर' का हिंदी अनुवाद प्रस्तुत कर दिया और इसके साथ ही आधुनिक हिंदी गद्य परंपरा नाट्य विधा के पथ पर चल पड़ी. भारतेंदु ने न केवल स्वयं सबसे अधिक नाटक लिखे और खेले, बल्कि दूसरों को भी इसके लिए प्रेरणा दी, सहयोग दिया. इस युग में हिंदी नाटक की जो प्रगति हुई, उसे देखते हुए नाट्यविद श्री कुँवरजी अग्रवाल ने इसे ठीक ही 'नाट्ययुग' नाम दिया है.

भारतेंदु के मौलिक और अनूदित मिलाकर 16 नाटक मिलते हैं, जिनमें से प्रमुख हैं :- 'वैदिक हिंसा हिंसा न भवति', 'श्रीचंद्रावली', 'विषयस्य विषमौषधम', 'भारतदुर्दशा', 'नीलदेवी', 'अंधेरनगरी', 'प्रेमजोगिनी', 'सत्य हरिश्चंद्र', 'विद्यासुंदर', 'मुद्राराक्षस', 'दुर्लभबंधु' आदि.

भारतेंदु जी ने यद्यपि सबसे अधिक नाटक ही लिखे, पर हिंदी साहित्य की हर तरह से अभिवृद्धि के लिए भी वे प्रयत्नशील रहे. सन् 1885 ई. में 35 वर्ष की अल्पायु में अपनी

मृत्यु से पहले उन्होंने यथासंभव गद्य की सभी विधाओं में रचना करने की कोशिश की, जिनमें से कुछ उल्लेखनीय रचनाएँ हैं:

1. 'पूर्णप्रकाश चन्द्रप्रभा' (उपन्यास)
2. 'अद्‌भुत अपूर्व स्वप्न' (कहानी)
3. 'कुछ आपबीती, कुछ जगबीती' (आत्मकथात्मक रचना, केवल आरंभ ही लिखा था)
4. 'सरयूपार की यात्रा' (यात्रा वृत्तांत)
5. 'लखनऊ' (यात्रा वृत्तांत)
6. 'नाटक' (नाट्यशास्त्रीय निबंध)
7. 'संगीत सार' (संगीत संबंधी निबंध)
8. 'हिंदी भाषा' (भाषा संबंधी निबंध)
9. 'काश्मीर कुसुम' (इतिहास संबंधी निबंध)
10. 'भारतवर्षोन्नति कैसे हो सकती है?' (विचारात्मक निबंध)
11. 'पाँचवे (चूसा) पैगंबर' (व्यंग्य)
12. 'लेवी प्राण लेवी' (व्यंग्य)
13. 'स्वर्ग में विचार सभा का अधिवेशन' (व्यंग्य)
14. 'कालचक्र' (जर्नल)

इतना ही नहीं, हिंदी साहित्य के विविध अंगों के संवर्धन के उद्देश्य से उन्होंने पत्र-पत्रिकाएँ भी शुरु कीं. सन् 1868 ई. में 'कविवचनसुधा' का मासिक प्रकाशन आरंभ हुआ जो बाद में पाक्षिक और फिर साप्ताहिक हो गया. सन् 1873 ई. में 'हरिश्चंद्र मैग़जीन' मासिक पत्र के रूप में शुरू हुई जिसे अगले वर्ष 'हरिश्चंद्र चंद्रिका' नाम मिला. सन् 1874 ई. में 'बालबोधिनी' नाम का मासिक पत्र निकला, जो विशेष रूप से स्त्रियों को समर्पित था.

आइये! जानें हमने कितना समझा. निम्न वाक्यों में रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:

1. भारतेंदु का जन्म .... को .... में हुआ था.
2. भारतेंदु ने .... नाटक में आकस्मिक रूप से अभिनय किया था.
3. भारतेंदु की पहली रचना सन् .... में प्रकाशित हुई.
4. भारतेंदु द्वारा लिखित मौलिक और अनूदित नाटकों की कुल संख्या .... है.
5. भारतेंदु ने ...., ... और .... पत्रिकाएँ निकालीं.

2.5.2 भारतेंदु मंडल

भारतेंदु की प्रखर प्रतिभा के प्रभामंडल में उस युग के अन्य प्रौढ़ और प्रतिभाशाली लेखकों का तेज भी शामिल था, जिनमें उपाध्याय पंडित बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन', पंडित प्रतापनारायण मिश्र, बाबू तोताराम, ठाकुर जगमोहन सिंह, लाला श्रीनिवासदास, पंडित बालकृष्ण भट्ट, पंडित केशवराम भट्ट, पंडित अंबिकादत्त व्यास, पंडित राधाचरण गोस्वामी आदि नाम प्रमुख हैं. इस समूह को हिंदी साहित्य के इतिहास में 'भारतेंदु मंडल' के नाम से जाना जाता है. भारतेंदु के साथ और भारतेंदु के बाद भी उस युग के साहित्य को समृद्ध करने में इस मंडल का उल्लेखनीय योगदान है.

हिंदी गद्य साहित्य की सभी विधाएँ, जो आगे चलकर पल्लवित पुष्पित हुईं, इसी युग

में शुरू होती हैं और भारतेंदु मंडल के लेखकों ने लगभग सभी संभावित विधाओं में अपना हाथ आजमाया और लगभग सभी लेखकों ने पत्र-पत्रिकाएँ निकालकर साहित्य के प्रचार-प्रसार का काम भी खूब किया.

उपाध्याय पं. बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' अपने भावों और विचारों के प्रकाशन के लिए 'आनंदकादंबिनी' और 'नागरीनीरद' नामक पत्रिकाएँ निकालते थे. 'आनंदकादंबिनी' में प्रकाशित बाबू गदाधर सिंह द्वारा किये गये 'बंगविजेता' बांग्ला उपन्यास के अनुवाद की आलोचना और लाला श्रीनिवास दास लिखित नाटक 'संयोगिता स्वयंवर' की आलोचना 'प्रेमघन' जी के विशिष्ट कार्य हैं.

पंडित प्रतापनारायण मिश्र ने विविध विषयों पर गद्य प्रबंध लिखने के लिए मासिक पत्र 'ब्राह्मण' का प्रकाशन शुरू किया था. 'बात', 'मनोयोग', 'वृद्ध', 'भौं' आदि उनके निबंध हैं. 'हठी हम्मीर', 'कलि प्रभाव', 'जुआरी मुआरी' आदि उनकी नाट्यरचनाएँ हैं.

पं. बालकृष्ण भट्ट ने अपने गद्य लेखन के लिए 'हिंदी प्रदीप' नाम का पत्र प्रकाशित करना शुरू किया था. 'आँख', 'कान', 'नाक' निबंध; 'कलिराज की सभा', 'रेल का विकट मेल' नाटक और 'नूतन ब्रह्मचारी', 'सौ अजान एक सुजान' उपन्यास आदि उनकी कुछ प्रसिद्ध कृतियाँ हैं. उन्होंने 'प्रेमघन' के पहले ही लाला श्रीनिवास दास के नाटक 'रणधीरप्रेममोहिनी' नाटक की समीक्षा - 'सच्ची समालोचना' के नाम से 'हिंदी प्रदीप' में की थी. आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने भट्ट जी और 'प्रेमघन' द्वारा की गयी इन आलोचनाओं को ही हिंदी में सम्यक आलोचना का सूत्रपात करने वाली माना है.

लाला श्रीनिवास दास के 'प्रह्लादचरित', 'तप्तासंवरण नाटक', 'रणधीर और प्रेममोहिनी', 'संयोगिता स्वयंवर' आदि प्रसिद्ध नाटक हैं. उनके लिखे उपन्यास 'परीक्षागुरु' को आधुनिक ढंग का पहला उपन्यास होने का गौरव प्राप्त है.

ठाकुर जगमोहन सिंह प्रकृतिवर्णन के सिद्धहस्त लेखक थे. उपन्यास 'श्यामास्वप्न' उनकी प्रसिद्ध रचना है.

पं. राधाचरण गोस्वामी ने अच्छे मौलिक नाटकों की रचना की है. 'सुदामा नाटक', 'सती चंद्रावली', 'अमरसिंह राठौड़', 'तनमन धन श्री गोसाईं जी के अर्पण' उनकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं.

बाबू राधाकृष्ण दास भारतेंदु हरिश्चंद्र के फुफेरे भाई थे. इन्होंने भारतेंदु का अधूरा रह गया नाटक 'सतीप्रताप' पूरा किया. 'दुखिनी बाला', 'महारानी पद्मावती' अथवा 'मेवाड़कमलिनी' और 'महाराणा प्रताप' या 'राजस्थान केसरी' इनके मौलिक नाटक हैं. इन्होंने 'निस्सहाय हिंदू' नामक एक छोटा उपन्यास भी लिखा था.

आइये, अपनी जानकारी जाँचें. सुमेलित कीजिए

क्र.सं.	भारतेंदु मंडल के लेखक	रचना	विधा
1.	बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन'	(क) 'निस्सहाय हिंदू'	(i) आलोचना
2.	प्रतापनारायण मिश्र	(ख) रणधीर और प्रेममोहिनी'	(ii) पत्रिका
3.	बालकृष्ण भट्ट	(ग) 'भौं'	(iii) उपन्यास
4.	लाला श्रीनिवास दास	(घ) 'आनंदकादंबिनी'	(iv) निबंध
5.	राधाकृष्ण दास	(ङ) 'सच्ची समालोचना'	(v) नाटक

2.5.3 'काशी नागरीप्रचारिणी सभा'

मित्रो! एक ओर तो भारतेंदु और उनके सहयोगी हिंदी में सर्जनात्मक लेखन करने और पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से हिंदी का प्रचार-प्रसार करने में व्यस्त थे, दूसरी ओर साहित्येतर क्षेत्रों, जैसे शिक्षा के क्षेत्र में और सरकारी दफ्तरों में, हिंदी भाषा के प्रवेश का बहुत बड़ा प्रश्न सामने खड़ा था. ऐसे में सन् 1893 ई. में वाराणसी के क्वीन्स कॉलेज के तीन उत्साही छात्रों बाबू श्यामसुंदर दास, पं. रामनारायण मिश्र और ठाकुर शिवकुमार सिंह की अगुआई में 'काशी नागरीप्रचारिणी सभा' की स्थापना हुई और भारतेंदु के फुफेरे भाई और स्वयं समर्थ साहित्यकार बाबू राधाकृष्ण दास इसके पहले सभापति हुए. इस संस्था ने न केवल अपने अथक मैमथ प्रयत्नों से सरकारी और अदालती कामकाजों के लिए हिंदी और उसकी देवनागरी लिपि का ही उपयोग सुनिश्चित करवाया, बल्कि हिंदी के संवर्धन के लिए हर स्तर पर हरसंभव प्रयत्न किये. तत्कालीन परिदृश्य के सभी बड़े नाम सभा से जुड़े हुए थे और एक लंबे समय तक यह हिंदी भाषा और साहित्य की नियामक संस्था मानी जाती रही. हिंदी का प्रमाणिक व्याकरण, प्रमाणिक शब्दकोष, प्रमाणिक इतिहास सभा की छत्रछाया में ही तैयार हुए. हिंदी के प्राचीन ग्रंथों का संकलन, संपादन, प्रकाशन जितना सभा ने किया, उतना किसी और संस्था ने नहीं. हिंदी ग्रंथों का सबसे बड़ा पुस्तकालय 'आर्यभाषा पुस्तकालय' सभा के पास था. आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के संपादकत्व में जिस 'सरस्वती' पत्रिका ने आधुनिक हिंदी साहित्य को आकार और दिशा देने का काम किया, उसके शुरुआती अंकों का संपादन सभा ने ही किया था. संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि यदि 'काशी नगरीप्रचारिणी सभा' न होती तो हिंदी भाषा और साहित्य अपनी विकास यात्रा कम से कम इतनी तेजी के साथ तो नहीं ही तय कर पाता!

सन् 1900 ई. में 'सरस्वती' पत्रिका के प्रकाशन से हिंदी साहित्य फिर एक नयी करवट लेता है. अतः मोटे तौर पर भारतेंदु युग की समयसीमा सन् 1868 ई. से सन् 1900 ई. तक मानी जाती है.

आइये, अपनी जानकारी परखें! निम्नलिखित वाक्य सही हैं अथवा गलत बताइए:

1. क्या 'काशी नागरीप्रचारिणी सभा' की स्थापना सन् 1893 ई. में हुई?
2. क्या 'काशी नागरीप्रचारिणी सभा' दिल्ली में स्थित है?
3. क्या 'काशी नागरीप्रचारिणी सभा' की स्थापना भारतेंदु ने की थी?
4. क्या 'काशी नागरीप्रचारिणी सभा' का पहला महत्वपूर्ण काम सरकारी कार्यालयों और अदालतों में हिंदी और उसकी लिपि का प्रयोग सुनिश्चित कराना था?
5. क्या भारतेंदु युग की समयसीमा सन् 1868 ई. से सन् 1900 ई. तक मानी जाती है?

2.6 आधुनिक हिंदी गद्य साहित्य का पल्लवन – द्विवेदी युग

द्विवेदी युग का नामकरण इस युग के केंद्रीय व्यक्तित्व आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के नाम पर हुआ है. सन् 1903 ई. से सन् 1920 ई. तक 'सरस्वती' पत्रिका के संपादक के रूप में द्विवेदी जी ने हिंदी की साहित्यिक भाषा और स्वरूप का निरंतर परिमार्जन करते हुए साहित्यकारों की पूरी पीढ़ी को प्रभावित किया और अपनी प्रेरणा से मँझे हुए साहित्यकारों को तैयार भी किया.

जनवरी, सन् 1900 ई. को 'काशी नागरीप्रचारिणी सभा' के संपादकमंडल के सहयोग से इंडियन प्रेस, प्रयाग से 'सरस्वती' पत्रिका का प्रकाशन आरंभ हुआ था, इसी समय को द्विवेदी युग का प्रारंभ माना जाता है जो सन् 1920 ई., (जब तक द्विवेदी जी इसके संपादक रहे,) तक कायम रहा.

भारतेंदु युग की चिंता हिंदी का गद्य खड़ा करने की ज्यादा थी, भाषा पर समुचित ध्यान दे पाने की फुर्सत उस समय नहीं थी. नतीजतन भारतेंदु युग की भाषा में वर्तनी और व्याकरण की भूलें प्रायः देखने में आ जाती हैं. स्थानीय बोलियों के शब्द भी अपनी घुसपैठ बराबर बनाये रखते थे. द्विवेदी जी ने भाषा पर विशेष ध्यान देना शुरू किया. 'सरस्वती' पत्रिका में छपने वाली एक-एक रचना के एक-एक शब्द को द्विवेदी जी अपने कसौटी पर कसे बिना जाने नहीं देते थे. फलस्वरुप हिंदी भाषा का मानक परिनिष्ठित रूप निखर कर सामने आने लगा. इसके साथ ही विभिन्न विधाएँ भी निश्चित आकार लेने लगीं. अन्य भाषाओं, विशेषकर बांग्ला और अंग्रेजी से अनुवाद भी खूब हुए.

भारतेंदु युग नाट्ययुग के रूप में पहचाना जाता है, जबकि कहानी उपन्यास कोई बहुत उल्लेखनीय नहीं लिखे गए. द्विवेदी युग में कहानी उपन्यास में विशेष अभिरुचि देखने को मिली, हालाँकि नाटक कोई बहुत ठोस प्रकार से सामने नहीं आ सका. कहानी, निबंध, आलोचना आदि विधाएँ, जिनके बीज भारतेंदु युग में पड़े थे, अब अधिक परिपक्व रूप में सामने आईं।

इस युग के उपन्यासकारों में बाबू देवकीनंदन खत्री प्रमुख हैं जिनके तिलिस्म और ऐयारी की आश्चर्यजनक घटनाओं से भरे उपन्यास 'चंद्रकांता', 'चंद्रकांता संतति', 'भूतनाथ' आदि ने अपूर्व लोकप्रियता हासिल की और हिंदी कथासाहित्य का एक विशाल पाठकवर्ग निर्मित किया. दूसरे खूब लिखने वाले उपन्यासकार पंडित किशोरीलाल गोस्वामी हुए, जिन्होंने अपने उपन्यास नियमित रूप से प्रकाशित करने की गरज से 'उपन्यास' नामक एक मासिक पत्र ही निकाल दिया और मुख्य रूप से सामाजिक विषयों पर 65 छोटे बड़े उपन्यास लिख डाले. उस काल के प्रसिद्ध कवि पं. अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' के दो चर्चित उपन्यास हैं 'ठेठ हिंदी का ठाट' और 'अधखिला फूल'. एक और उपन्यासकार बाबू गोपालराम गहमरी का उल्लेख किया जा सकता है, जिन्होंने बांग्ला भाषा से बहुत सारे उपन्यासों का अनुवाद किया और जासूसी उपन्यास की परंपरा शुरू की. इसके लिए उन्होंने सन् 1900 ई. से 'जासूस' पत्रिका का प्रकाशन शुरू किया. यह पत्रिका 38 वर्षों तक प्रकाशित होती रही और गहमरी जी ने लगभग 200 उपन्यास इसके लिए लिखे. गहमरी जी को हिंदी का 'कानन डायल' कहा गया.

हिंदी कहानियों की परंपरा का आरंभ भी इसी युग में होता है. आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने सन् 1900 ई. में 'सरस्वती' पत्रिका में प्रकाशित पं. किशोरीलाल गोस्वामी की कहानी 'इंदुमती' के हिंदी की पहली कहानी होने का प्रस्ताव किया है. हिंदी की पहली लेखिका मानी जाने वाली राजेंद्रबाला घोष, जो बंगमहिला के नाम से लिखती थीं, की कहानी 'दुलाईवाली' सन् 1907 ई. में प्रकाशित हुई थी. बाद को हिंदी के श्रेष्ठ कहानीकार के रूप में प्रतिष्ठित होने वाले कई लेखकों, जैसे – जयशंकर प्रसाद ('ग्राम', सन् 1911 ई.); पं. विश्वंभरनाथ शर्मा 'कौशिक' ('रक्षाबंधन', सन् 1913 ई.); पं. चंद्रधर शर्मा 'गुलेरी' ('उसने कहा था', सन् 1915 ई.); आचार्य चतुरसेन शास्त्री और प्रेमचंद ने इसी समय लिखना शुरू किया था.

निबंध और समालोचना के क्षेत्र में भी उच्चकोटि का गंभीर लेखन इस युग में खासा हुआ. आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी, आचार्य रामचंद्र शुक्ल, पं. माधव प्रसाद मिश्र, बाबू बालमुकुंद गुप्त, बाबू श्यामसुंदरदास, पं. चंद्रधर शर्मा 'गुलेरी', अध्यापक पूर्णसिंह, पं. पद्मसिंह शर्मा, पं. कृष्णबिहारी मिश्र जी के निबंध और समालोचनाएँ आज भी पढ़ी और पढ़ाई जा रही हैं. अन्य गद्य विधाओं में भी लेखन आगे बढ़ा.

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि आधुनिक हिंदी गद्य साहित्य का जो अंकुरण भारतेंदुकाल में हुआ था, वह द्विवेदी युग में गद्य की विविध विधाओं के रूप में पल्लवित हो कर वैविध्यपूर्ण हरे-भरे विशाल वृक्ष होने की संभावनाओं को स्पष्ट रूप से प्रकट करने लगा.

आइये, अब जरा अपने पढ़े-समझे को जाँचें! निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर के रूप में सही विकल्प का चयन कीजिए

(1) हिंदी भाषा और साहित्य के लिए 'सरस्वती' पत्रिका का क्या योगदान है?

(क) हिंदी भाषा को एकरूपता प्रदान करना.

(ख) गद्य की सभी विधाओं में लेखन को प्रोत्साहन देना.

(ग) तत्कालीन नवोदित लेखकों को प्रतिष्ठित मंच प्रदान करना.

(घ) उपर्युक्त सभी.

(2) द्विवेदी युग की समय सीमा कब से कब तक है?

(क) सन् 1900 ई. से सन् 1950 ई. तक

(ख) सन् 1900 ई. से सन् 1920 ई. तक

(ग) सन् 1903 ई. से सन् 1920 ई. तक

(घ) सन् 1903 ई. से सन् 1950 ई. तक

(3) निम्नलिखित में विधा - रचना - लेखक का संयोजन किसमें सही नहीं है?

(क) उपन्यास - 'ठेठ हिंदी का ठाट' - पं. अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'

(ख) उपन्यास - 'रक्षाबंधन' - पं. विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक.

(ग) कहानी - 'दुलाईवाली' - बंगमहिला

(घ) कहानी - 'ग्राम' - जयशंकर प्रसाद

(4) द्विवेदी युग में निम्न में से किस विधा में उल्लेखनीय लेखन नहीं हुआ?

(क) नाटक (ख) निबंध (ग) कहानी (घ) उपन्यास

(5) निम्नलिखित में से किसका परिगणन द्विवेदी युग के लेखकों में नहीं होता?

(क) आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी (ख) बाबू देवकीनंदन खत्री

(ग) पं. चंद्रधर शर्मा 'गुलेरी' (घ) प्रेमचंद

2.7 द्विवेदी युग के बाद

द्विवेदी युग तक आधुनिक हिंदी भाषा के परिमार्जन और उसे साहित्य के अनुकूल तैयार करने का कार्य बख़ूबी हो चुका था. विशाल हिंदी क्षेत्र में हिंदी के पाठक वर्ग का धीरे धीरे विस्तार हो रहा था. सन् 1918 ई. में कलकत्ता विश्वविद्यालय में हिंदी विभाग स्थापित होने के साथ ही उच्च्य शिक्षा में भी हिंदी का प्रवेश हो गया था. अब हिंदी पुस्तकों की माँग बढ़ रही थी. यह वह समय था जब हिंदी साहित्य की प्रत्येक विधा में विपुल लेखन हुआ.

हिंदी कथासाहित्य के क्षेत्र में प्रेमचंद का पदार्पण हुआ, जिन्होंने विषय और शिल्प दोनों के स्तर पर कहानी और उपन्यास में युगांतरकारी परिवर्तन किया. प्रेमचंद ने साहित्य को कोरी उपदेशात्मकता या महज मनोरंजन के उद्देश्य से हटाकर सीधे जन-जीवन से जोड़ दिया. उनका कथासाहित्य जहाँ एक ओर लोगों से जुड़े मुद्दों को सामने लाता है, वहीं उन मुद्दों पर स्वयं उन्हें सोचने के लिए झकझोरता भी है. अपने 'आदर्शोन्मुखी यथार्थवाद' के माध्यम से उन्होंने तत्कालीन समाज को आइना भी दिखाया और उसे बेहतरी का एक स्वप्न भी दिया. हिंदी कथासाहित्य के क्षेत्र में वे मानक बन गये. कथासाहित्य के लिए द्विवेदी युग के बाद का समय 'प्रेमचंद युग' कहलाता है. और उसके बाद का समय 'प्रेमचंदोत्तर युग'.

भारतेंदु युग के बाद द्विवेदी युग में नाटकों की परंपरा में एक ठहराव-सा, बल्कि ह्रास-सा दिखाई देता है. द्विवेदी युग के बाद जयशंकर प्रसाद साहित्यिक दृष्टि से उच्च कोटि के अपने नाटकों से उसे नया जीवन, नयी दिशा प्रदान करते हैं. हिंदी नाटकों के इतिहास में यह युग 'प्रसाद युग' के नाम से जाना जाता है और इसके बाद का युग 'प्रसादोत्तर युग' के नाम से.

निबंधों की अजस्र धारा भारतेंदुकाल से निरंतर बहती आ रही थी. भारतेंदु काल में वह हास्य-व्यंग्य की ओर झुकी थी, तो द्विवेदी युग में उसे बहुत से प्रश्नों के उत्तर खोजने थे, इसके बाद आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने निबंधों को विश्लेषणात्मकता का नया तेवर दिया और 'शुक्ल युग' का प्रारंभ हुआ, जिसके बाद 'शुक्लोत्तर युग' आया.

अपने आरंभ होने के बाद से हिंदी गद्य साहित्य लगातार बहुविध और सघन होता गया, जिसे एक स्थान पर समेट पाना न संभव है, न उपयुक्त. तो यह चर्चा यहाँ एक बार विराम लेती है. इसके आगे की कहानी यथास्थान फिर कही जायेगी.

अब समय है अपनी जानकारी जाँचने का! निम्नलिखित वाक्यों में रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए:

1. द्विवेदी युग के बाद कथासाहित्य में .... युग आया.
2. द्विवेदी युग के बाद नाटक के इतिहास में .... मानक व्यक्तित्व का दर्जा रखते हैं.
3. शुक्ल युग का नामकरण .... के नाम पर हुआ है.
4. प्रेमचंद ने कथासाहित्य में .... वाद का अनुसरण किया.
5. जयशंकर प्रसाद के नाटक साहित्यिक दृष्टि से .... के हैं.

2.8 सारबिंदु

मित्रो! आशा है आपने इकाई अच्छी तरह से पढ़कर समझ ली है. यदि आप पाठ के दौरान पूछे गये प्रश्नों के उत्तर बिना किसी मदद के अपने आप तुरंत दे पा रहे हैं, तो इसका अर्थ है कि आपने सचमुच अच्छी तरह इकाई समझ ली है. यदि ऐसा नहीं है, तो आपको पुनः इकाई पढ़ने की आवश्यकता है. दुबारा इकाई पढ़ते समय आप अपनी कॉपी कलम साथ में लेकर बैठें और पढ़े गये अनुच्छेद में कही गयी सबसे महत्वपूर्ण बात को बिंदु के रूप में नोट कीजिए. पूरा पढ़ने के बाद आप अपने लिखे बिंदुओं को नीचे लिखे बिंदुओं से मिलाइए.

- हिंदी गद्य के नमूने नवीं दसवीं शताब्दी से मिलने शुरू हो जाते हैं.
- आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने 'भाषायोगवासिष्ठ' को हिंदी के परिमार्जित गद्य की पहली पुस्तक कहा है और इसके लेखक रामप्रसाद निरंजनी को हिंदी गद्य का पहला लेखक.
- आधुनिक हिंदी गद्यभाषा का स्वरूप उन्नीसवीं शती में बनना शुरू हुआ, जिसके लिए फोर्ट वीलियम कॉलेज, ईसाई मिशनरियों, प्रेसों, बुकसोसाइटियों, समाजसुधार आन्दोलनों, पत्र पत्रिकाओं का योगदान महत्वपूर्ण है.
- उन्नीसवीं शती के आरंभ में आधुनिक हिंदी गद्य साहित्य की कृतियों के रूप में लल्लूजी लाल के 'प्रेमसागर'; सदल मिश्र के 'नासिकेतोपाख्यान'; सदासुखलाल के 'सुखसागर' और इंशाअल्लाह खाँ की 'रानी केतकी की कहानी' का नाम लिया जाता है.
- राजा शिवप्रसाद सिंह 'सितारे हिंद' और राजा लक्ष्मण सिंह का आधुनिक हिंदी गद्य भाषा और साहित्य के विकास में उल्लेखनीय योगदान है.

- उन्नीसवीं शती के उत्तरार्ध में भारतेंदु हरिश्चंद्र हिंदी गद्यभाषा को परिमार्जित स्वरूप देते हैं और साहित्य की विभिन्न विधाओं में रचना कर न केवल हिंदी साहित्य को समृद्ध करते हैं, बल्कि अन्य लेखकों के लिए उदाहरण भी प्रस्तुत करते हैं.
- भारतेंदु को आधुनिक हिंदी गद्य साहित्य का प्रवर्तक कहा जाता है.
- सन् 1868 ई. से सन् 1900 ई. तक का समय 'भारतेंदु युग' कहलाता है.
- हिंदी साहित्य को समृद्ध करने के लिए भारतेंदु युग में भारतेंदु के अलावा 'भारतेंदुमंडल' के लेखकों और 'काशी नागरीप्रचारिणी सभा' का योगदान भी अविस्मरणीय है.
- सन् 1900 ई. से सन् 1920 ई. तक का समय 'द्विवेदी युग' के नाम से जाना जाता है.
- 'द्विवेदी युग' का नामकरण आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के नाम पर हुआ है, जिन्होंने 'सरस्वती' पत्रिका के माध्यम से भाषा के परिमार्जन के साथ साथ विभिन्न विधाओं के स्वरूप का भी परिमार्जन किया और अपनी प्रेरणा से नये सशक्त लेखकों को तैयार किया.
- द्विवेदी युग के बाद विभिन्न विधाओं में प्रभूत लेखन हुआ. कथासाहित्य में 'प्रेमचंद' युग आया; नाट्यसाहित्य में 'प्रसाद युग' और निबंध लेखन में 'शुक्ल युग'.

2.9 परीक्षोपयोगी प्रश्नावली

- **निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लगभग 800 शब्दों में दें**

(1) उन्नीसवीं शती के पूर्व के हिंदी गद्य साहित्य का परिचय दीजिए.

(2) उन्नीसवीं शती में किन कारकों ने हिंदी गद्य के विकास में उल्लेखनीय योगदान दिया?

(3) भारतेंदु युग का लेखा जोखा प्रस्तुत कीजिए.

(4) द्विवेदी युग में हिंदी गद्यसाहित्य की प्रगति का विवरण दीजिए.

- **निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए**

(1) फोर्ट वीलियम कॉलेज

(2) भारतेंदु हरिश्चंद्र

(3) 'काशी नागरीप्रचारिणी सभा'

(4) हिंदी गद्य के विकास में ईसाई मिशनरियों का योगदान

(5) हिंदी की आरंभिक पत्र-पत्रिकाएँ

(6) 'सरस्वती' पत्रिका

(7) हिंदी गद्य के विकास में समाजसुधार आंदोलनों की भूमिका

2.10 उपयोगी पाठ्यसामग्री

नीचे कुछ ऐसी पुस्तकों के नाम और कुछ वेबसाइट लिंक हैं, जिनका उपयोग इस इकाई की सामग्री तैयार करने के लिए किया गया है और आपके अध्ययन के लिए भी उपयोगी हो सकते हैं.

(1) हिंदी साहित्य का इतिहास; लेखक – आचार्य रामचंद्र शुक्ल; प्रकाशक काशी नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी.

(2) आधुनिक हिंदी गद्य; संपादक – श्रीनिवास चतुर्वेदी, डॉ. इंद्रनाथ मदान; प्रकाशक हिंदी भवन, लाहौर.

(3) https://archive.org/details/in.ernet.dli.2015.262905/page/n1/mode/2up?view=theater

(4) https://hi.wikipedia.org/wiki/सरस्वती-पत्रिका

(5) https://www.hindisamay.com/content/1072/1/राजा-शिवप्रसाद-सितारे-हिंद-कहानियाँ-राजा-भोज-का-सपना.बजॅट

(6) https://archive.org/details/20201022_20201022_1122/mode/2up

(7) https://tetforum.com/hindi-letter-and-magazines-and-their-editors/

(8) https://hi.wikipedia.org/wiki/नागरीप्रचारिणी_सभा

(9) http://www.mgcub.ac.in/elerning.php

(10) https://www.youtube.com/watch?v=SzfYleyXkYA

इकाई 3 हिन्दी कहानी का स्वरूप और विकास

रूपरेखा

3.1 उद्देश्य

3.2 प्रस्तावना

3.3 हिन्दी कहानी : विकासात्मक वर्गीकरण

3.4 हिन्दी कहानी का प्रारंभ एवं विकास

3.4.1 पूर्व प्रेमचन्द युग

3.4.2 प्रेमचन्द युग

3.4.3 प्रेमचन्दोत्तर युग

3.5 नयी कहानी

3.6 सचेतन कहानी

3.7 अ-कहानी

3.8 समांतर कहानी

3.9 जनवादी कहानी

3.10 सक्रिय कहानी

3.11 सन् 1980 से 2000 की कहानी

3.12 सारबिंदु

3.13 परीक्षोपयोगी प्रश्नावली

3.14 उपयोगी पाठ्यसामग्री

3.1 उद्देश्य

विद्यार्थी मित्रो! प्रस्तुत इकाई हिंदी कहानी की यात्रा से संबंधित है, जिसमें आपको हिंदी कहानी के उद्‍भव और विकास का परिचय मिलेगा. इस इकाई को पढ़ने के बाद आप –

- हिन्दी कहानी के प्रारंभ के बारे में जान सकेंगे.
- प्रारंभिक हिन्दी कहानी के स्वरूप का परिचय प्राप्त कर सकेंगे.
- हिन्दी कहानी के विकास काल के बारे में जान सकेंगे.
- प्रमुख हिन्दी कहानीकारों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे.
- हिन्दी कहानी के बदलते स्वरूप से अवगत होंगे.
- हिन्दी कहानी में प्रवर्तित विभिन्न आंदोलनों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे.
- हिन्दी कहानी के प्रारंभ से लेकर आज तक की विकास यात्रा से अवगत होंगे.

3.2. प्रस्तावना

हिन्दी साहित्य में आधुनिक कहानी का विकास बीसवीं सदी से माना जाता है. कहानी कला के तत्वों के आधार पर देखा जाए तो सन् 1900 ई. में प्रकाशित पं. किशोरीलाल गोस्वामी की कहानी 'इन्दुमती' हिन्दी की प्रथम कहानी मानी जाती है. पूर्व प्रेमचन्द युग से लेकर आज तक हिन्दी कहानी की विकास यात्रा अनेक पड़ावों को पार करती हुई, इक्कीसवीं सदी में आगे बढ़ रही है. हिन्दी कहानी में इस दौरान कई मोड़ आये, अनुभूति और अभिव्यक्ति को लेकर

कई कहानी आंदोलन चले. कुछ भारतीय राजनीतिक एवं सामाजिक परिस्थितियों और कुछ पश्चिमी साहित्य के प्रभाव स्वरूप कहानी के रूप में परिवर्तन आया. कहानी के क्षेत्र में कई नये लेखक आये और इस परंपरा को आगे बढ़ाया. इन आंदोलनों को हम निम्न रूप से देख सकते हैं।

3.3 हिन्दी कहानी : विकासात्मक वर्गीकरण

1. पूर्व प्रेमचन्द युग (सन् 1900 ई. से सन् 1910 ई.)
2. प्रेमचन्द युग (सन् 1910 ई. से सन् 1936 ई.)
3. प्रेमचन्दोत्तर युग (सन् 1936 ई. से सन् 1950 ई.)
4. नयी कहानी (सन् 1950 ई. के बाद)

सन् 1950 ई. के बाद कहानी की विकास यात्रा को निम्न रूप से देखना आसान होगा –

1.	नयी कहानी	मोहन राकेश, कमलेश्वर, राजेन्द्र यादव
2.	सचेतन कहानी	महीपसिंह
3.	समकालीन/अ-कहानी	डॉ. गंगाप्रसाद विमल
4.	समांतर कहानी	कमलेश्वर
5.	सहज कहानी	अमृत राय
6.	सक्रिय कहानी	राकेश वत्स
7.	बीसवीं सदी के अंतिम दो दशकों की कहानियाँ	

3.4 हिन्दी कहानी का प्रारंभ एवं विकास

प्रारंभिक हिन्दी कहानी से लेकर आज तक के कहानी का विकासात्मक परिचय तीन खंडो में देखा जा सकता है.

3.4.1 पूर्व प्रेमचन्द युग (प्रारंभिक युग, द्विवेदी युग)

हिन्दी भाषा के उद्भव एवं विकास के समान आधुनिक हिन्दी कहानी का व्यवस्थित क्रमानुसार इतिहास नहीं है. उन्नीसवीं शताब्दी के राष्ट्रीय आन्दोलनों ने जो हिन्दी मासिकों एवं साप्ताहिकों के प्रकाशन की भूमिका उपस्थित की उसी ने कहानी के जन्म की पीठिका तैयार की ऐसा कहा जा सकता है. हिन्दी कहानी के प्रारंभ की दृष्टि से सन् 1900 ई. में प्रकाशित पत्रिका 'सरस्वती' की भूमिका महत्वपूर्ण है. इसके जून 1900 ई. के अंक में छपी किशोरी लाल गोस्वामी की कहानी 'इंदुमती' हिन्दी साहित्य की प्रथम कहानी मानी जाती है. लेकिन इस विषय में सभी विद्वान एकमत नहीं हैं और विभिन्न कारणों से प्रारंभिक दौर की कुछ अन्य कहानियों को 'हिंदी की प्रथम कहानी' का पद दिया जाता रहा है. ये कहानियाँ हैं –

'एक टोकरी भर मिट्टी' : माधवराव सप्रे (1901)

'प्लेग की चुडैल' : भगवानदास (1902)

'पंडित और पंडितानी' : पं. गिरिजादत्त वाजपेयी (1903)

'ग्यारह वर्ष का समय' : आ. रामचंद्र शुक्ल (1903)

'दुलाईवाली' : बंग महिला (1907)

हिन्दी के आरंभिक मौलिक कहानीकारों में यही नाम आते हैं. हिन्दी में ऐतिहासिक कहानियों की परंपरा वृन्दावनलाल वर्मा ने 'राखीबंद भाई' और 'तातार : एक वीर राजपूत'

(1909) द्वारा प्रारंभ की. कुल मिलाकर यह हिन्दी कहानी का प्रथम दौर माना जा सकता है जिसमें हिन्दी कहानी अपने पैरों पर खड़ी होने की कोशिश में नजर आती है.

हिन्दी कहानी के विकास की दृष्टि से उन्नीसवीं सदी का दूसरा दौर महत्वपूर्ण कहा जा सकता है. सन् 1909 ई. में काशी से 'इन्दु' पत्रिका का प्रकाशन एक महत्वपूर्ण घटना है. 'सरस्वती' में प्रकाशित कहानियों से अलग विचारधारा वाली कहानियों को पृष्ठ देने हेतु इसका आरंभ हुआ. यहीं से हिन्दी कहानी की दो धाराएँ : (1) समाज परक यथार्थवादी कहानियाँ और (2) भाववादी और व्यक्तिवादी कहानियों की धारा अलग होती दिखाई देती है. इस दशक की प्रमुख कहानियाँ जयशंकर प्रसाद की 'छाया' (1912) और राधिकारमणप्रसाद सिंह लिखित 'कानों में कंगना' (1913) हैं.

इस समय तक प्रेमचंद भी हिन्दी कहानी के क्षेत्र में प्रविष्ट हो चुके थे. उनकी 'सौत' (1910), 'पंच परमेश्वर' (1916), 'सज्जनता का दंड' (1916), 'ईश्वरीय न्याय' (1917) आदि कहानियाँ सरस्वती में प्रकाशित हुईं थीं. इसी के साथ हिन्दी कहानी जगत में भावपक्ष और कलापक्ष की दृष्टि से नयी शुरुआत करनेवाले यशस्वी कहानीकार चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' की कहानी 'उसने कहा था' (1915) में प्रकाशित हुई. कई विद्वान इसी कहानी से आधुनिक हिन्दी कहानी का प्रारंभ मानते हैं. सन् 1905 ई. से सन् 1917 ई. के बीच ज्वालादत्त शर्मा की 'मिलन', विश्वभरनाथ शर्मा कौशिक की 'रक्षाबंधन' आदि कहानियाँ 'सरस्वती' में प्रकाशित हुईं.

इस विचार व विमर्श से कहा जा सकता है कि हिन्दी कहानी का जन्म लगभग सन् 1900 ई. में हुआ और सन् 1918 ई. तक वह अपने पैरों पर खड़ी होकर चलने लगी. किसी भी साहित्यिक विधा के उद्‌भव और विकास के लिए यह बहुत कम समय कहा जा सकता है. इस युग में बांग्ला कहानियों के हिन्दी अनुवाद भी हुए.

बोध प्रश्न

(1) 'रक्षाबंधन' कहानी किस पत्रिका में प्रकाशित हुई?
   (अ) इन्दु (ब) सरस्वती
   (स) माधुरी (द) हंस

(2) पूर्व प्रेमचंद युग कब से कब तक माना जाता है?
   (अ) 1900 – 1910 (ब) 1910 – 1936
   (स) 1910 – 1920 (द) 1900 – 1920

(3) 'इंदुमती' किसके द्वारा रचित कहानी है?
   (अ) पं. किशोरीलाल गोस्वामी (ब) प्रेमचंद
   (स) बंगमहिला (द) भगवानदास

(4) सक्रिय कहानी के प्रवर्तक कौन है?
   (अ) महीप सिंह (ब) अमृत राय
   (स) राकेश वत्स (द) मोहन राकेश

(5) आचार्य रामचंद्र शुक्ल द्वारा रचित कहानी कौन-सी है?
   (अ) 'प्लेग की चुडैल' (ब) 'एक टोकरी भर मिट्टी'
   (स) 'ग्यारह वर्ष का समय' (द) 'पंच परमेश्वर'

3.4.2 प्रेमचंद युग

प्रेमचन्द ने एक जगह कहा है कि उन्होंने कहानियाँ लिखने की शुरुआत सन् 1907 ई.

में की. प्रेमचन्द ने लगभग तीन सौ कहानियाँ लिखकर हिन्दी कहानी साहित्य के एक युग को अपने नाम कर लिया. उनकी ये तीन सौ कहानियाँ 'मानसरोवर' के आठ भागों में संकलित हैं. प्रेमचन्द के कहानी लेखन की सब से बड़ी विशेषता यह है कि उनकी रचनाओं में हिन्दी कहानी के विकास की पूर्ण रूपरेखा दिखाई देती है. उनकी प्रारंभिक कहानियों में किस्सागोई, आदर्शवाद और सोद्देश्यता अधिक है. रचनात्मकता की दृष्टि से उनकी कहानियाँ प्रायः ही दो विषम स्तरों की अनुभूति छोड़ती हैं. वैचारिकता की दृष्टि से उनकी कहानियाँ सामाजिक सोद्देश्यता, सांप्रदायिक सद्भाव, जातीय एकता एवं राष्ट्रीय चेतना के प्रसार का आदर्श उदाहरण पेश करती है. उनकी कहानियों के प्रमुख विषय राष्ट्रीय आंदोलन, दलित वर्ग की दुर्दशा, सामाजिक, आर्थिक, पारिवारिक, राष्ट्रीय, मानसिक, धार्मिक, राजनीतिक, मनोवैज्ञानिक आदि समस्याओं का चित्र है. उनकी कहानियों का फलक ग्रामीण अँचल से लेकर कस्बा, नगर, महानगर से विलायत तक विस्तृत है. उनकी कुछ प्रमुख कहानियाँ निम्न हैं –

'बलिदान' (1918)	'आत्माराम' (1920)
'बूढ़ी काकी' (1921)	'विचित्र होली' (1921)
'गृहदाह' (1922)	'परीक्षा' (1923)
'आप बीती' (1923)	'उद्धार' (1924)
'सवा सेर गेहूँ' (1924)	'शतरंज के खिलाड़ी' (1925)
'कजाकी' (1926)	'सुजान भगत' (1927)
'इस्तीफा' (1928)	'अलग्योझा' (1929)
'पूस की रात' (1930)	'होली का उपहार' (1931)
'ठाकुर का कुआँ' (1932)	'बेटों वाली विधवा' (1933)
'ईदगाह' (1933)	'नशा' (1934)
'बड़े भाईसाहब' (1934)	'कफन' (1936)

इन कहानियों में ग्रामीण और कस्बाई जिन्दगी, सत्याग्रह आंदोलन, स्कूल और कॉलेज का वातावरण तथा जमींदारों, साहूकारों, सरकारी दफ्तरों के क्लर्कों और उच्च पदाधिकारियों द्वारा आम आदमी के किये जा रहे शोषण की समस्याओं का चित्रण मिलता है.

उनकी कहानियों के बीच तक विभाजक रेखा सन् 1930 ई. मानी जा सकती है. सन् 1930 ई. के पूर्व की कहानियाँ अपने संदर्भों से गहरे जुड़ी रहने के बावजूद प्रभाव की दृष्टि से कमजोर हैं. इनमें उनका आदर्शवादी दृष्टिकोण, परंपरागत मूल्यों में आस्था, अन्धविश्वास आदि दिखाई देता है. सन् 1930 ई. के बाद की कहानियों में स्थितियों को उनकी पूरी मनोवैज्ञानिकता और यथार्थता में उभारने की कोशिश की गयी है. प्रेमचन्द की इस काल की कहानियों में सच्चाई को उसके नग्नतम रूप में देखने का प्रयास किया गया है. 'पूस की रात', 'तावान' और 'कफन' तो प्रेमचन्द की ही नहीं, समग्र हिन्दी साहित्य की बेजोड़ कहानियाँ हैं. उनकी 'सोजेवतन', 'आहुति', 'जुलूस', 'समर यात्रा', 'सत्याग्रह' आदि कहानियाँ राष्ट्रीय आंदोलन की चेतना से भरी हैं, तो 'शतरंज के ख़िलाड़ी' रियासतदारों के चारित्रिक पतन को उजागर करती है. 'गृहदाह' और 'अलग्योझा' जैसी कहानियों में संयुक्त परिवार का महत्व दिखाई देता है. पीड़ित और वंचित वर्ग के अभिशप्त जीवन, उन पर होनेवाले अत्याचार, बेगार और उनके निर्मम शोषण के बड़े यथार्थ, आत्मीय और प्रामाणिक चित्र इन कहानियों में उभरे हैं.

शोषण और अत्याचार पर आधारित व्यवस्था का भयावह रूप 'सवा सेर गेहूँ', 'सद्गति', 'ठाकुर का कुआँ', 'पूस की रात' आदि कहानियों में दिखता है. विचारों की दृष्टि से प्रेमचंद के

अंतिम दौर की कहानियाँ 'कश्मीरी सेब' और 'मनोवृत्ति' निश्चित परिवर्तन ई. प्रस्तुत करती हैं. भारत देश के सामाजिक एवं राजनीतिक परिदृश्यों के दो दशक - सन् 1916 ई. से सन् 1936 ई. तक के घटनाक्रमों, जन संघर्षों और सामाजिक परिवर्तन की आकांक्षा के प्रामाणिक और विश्वसनीय अंकन की दृष्टि से यह कहा जा सकता है कि प्रेमचंद से बेहतर कोई नहीं हैं.

- **रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए**

1. प्रेमचंद ने कहानियाँ लिखने की शुरुआत सन् .... से की.
2. प्रेमचंद ने लगभग .... कहानियाँ लिखी.
3. 'शतरंज के खिलाड़ी' .... ई. में लिखी गयी थी.
4. 'गृहदाह' और 'अलग्योझा' जैसी कहानियों में .... का महत्व दिखाई देता है।
5. 'सद्गति' में .... और .... पर आधारित व्यवस्था का भयावह रुप दिखता है।

प्रेमचंद ने अपैल सन् 1936 ई. के प्रगतिशील लेखक सम्मेलन में साहित्य के लिए परिवर्तित कसौटी की मांग उठाते हुए सामाजिक संदर्भों में साहित्य की भूमिका पर प्रकाश डाला था. फलस्वरूप हिन्दी कहानी ने करवट बदली. इस बदलते स्वरूप को अपनी कहानियों में मूर्त रुप देने वाले प्रमुख कहानीकार हैं – जयशंकर प्रसाद, विश्वंभरनाथ शर्मा 'कौशिक', सुदर्शन, चतुरसेन शास्त्री, पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' आदि.

प्रेमचंद युग के दूसरे प्रमुख कहानीकार हैं – जयशंकर प्रसाद, उनकी प्रथम कहानी 'ग्राम' सन् 1911 ई. में 'इंदु' पत्रिका में प्रकाशित हुई थी. उनके महत्वपूर्ण कहानी संग्रह हैं – 'प्रतिध्वनि' (1926), 'आकाशदीप' (1926), 'आँधी' (1931), 'इन्द्रजाल' (1936) आदि. प्रसाद जी ने अपनी कहानियों में प्रेमचन्द से अलग सामान्य यथार्थ को कम और हमारे देश के भव्य अतीत के गौरव, मसृण भावुकता, कल्पना की ऊँची उड़ान तथा काव्यात्मक चित्रण को अधिक महत्व दिया है. उनकी कहानियों में प्रेम और करुणा का, त्याग और बलिदान का, दार्शनिकता और काव्यात्मकता का, भावुकता और चित्रमयता का प्राधान्य है. 'आकाशदीप', 'कला', 'देवदासी', 'आँधी', 'महुवा', 'इन्द्रजाल', 'सालवती' आदि कहानियों में मानसिक द्वन्द्व का सफल चित्रण है. 'आकाशदीप' की चम्पा, 'देवरथ' की समता, 'पुरस्कार' की मधुलिका आदि विशेष प्रकार के नारीपात्र उनकी विशिष्ट नारी भावना को प्रस्तुत करते हैं.

3.4.3 प्रेमचंदोत्तर युग

जैनेन्द्र, अज्ञेय और यशपाल इस दौर के सर्वाधिक महत्वपूर्ण और प्रतिनिधि कहानीकार है. जैनेन्द्र का कहानी संग्रह 'फाँसी' सन् 1929 ई. में प्रकाशित हुआ. उनकी कहानियों का आधार आस-पास का जीवन और परिचित यथार्थ है. उन्होंने प्रेम में उत्सर्ग की भावना को कम कर कहानी को सामान्य जीवन से निकट लाने की कोशिश की है. उनकी नायिकाएँ केवल हाड़-मांस की पुतला नहीं बल्कि वास्तविक स्त्रियाँ हैं. उन्होंने कहानी को घटना के स्तर से उठाकर 'चरित्र' और 'मनोवैज्ञानिक सत्य' पर लाने का प्रयास किया. उनके नारी पात्र घर ही नहीं पतिव्रत्य की चार दिवारी से बाहर निकलकर मुक्ति की साँस लेना चाहती है. जैनेन्द्र जी की प्रमुख कहानियाँ हैं – 'हत्या', 'गदर के बाद', 'जयसंधि', 'रानी महामाया', 'स्पर्धा', 'एक कैदी', 'खेल', 'पत्नी', 'दो चिड़ियाँ', 'बाहुबली', 'तत्सत', 'लाल सरोवर', 'नीलम देश की राजकन्या', 'घुँघरू', 'मास्टरजी', 'जाह्नवी', 'दृष्टिदोष', 'ब्याह', 'भाभी' आदि.

हिन्दी कहानी को एक नयी दिशा देने का श्रेय सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' को जाता है. भारतीय समाज की रूढ़िप्रियता, शोषण, वर्तमान विश्व में व्याप्त संघर्ष आदि को लेकर उन्होंने मार्मिक कहानियाँ लिखी हैं. उनके प्रथम कहानी संग्रह 'त्रिपथगा' (1931) में विश्वयुद्ध के कारणों की खोज की गयी है और नारी का चित्रण क्रान्ति की अग्रदूत के

रूप में किया गया है. इनमें आज की स्वीकृत शासन व्यवस्था तथा परंपरागत मान-मूल्यों का अस्वीकार है. इनमें एक ओर प्रेम और कर्तव्य तथा दूसरी ओर आदर्श और सहज वृत्ति के मार्मिक चित्रण है. इनमें अज्ञेय ने व्यक्तिमन की ग्रंथियों, प्रेरणाओं तथा अंतर्द्वंद्वों का सूक्ष्म विश्लेषण किया है. ये कहानियाँ मनोवैज्ञानिक होकर भी सामाजिक संघर्ष और विद्रोह का तीखापन लिए हुए हैं. देश की पृष्ठभूमि और संदर्भों को अंकित करनेवाली क्रांति संबंधी एक घंटे में, 'दरोगा अमीचंद', 'पगोडा वृक्ष', 'विपथगा', 'अकलंक', 'द्रोही' आदि कहानियाँ सहज और ग्राह्य हैं. उनकी प्रमुख कहानियाँ हैं - 'कड़ियाँ', 'अमरवल्लरी', 'मैना', 'रोज', 'रेल की सीटी', 'हारिति', 'हरसिंगार', 'कविप्रिया', 'लेटर बॉक्स', 'शरणदाता', 'बदला', 'जिजीविषा', 'चिड़ियाघर', 'पहाड़ी जीवन', 'साँप', 'पठार का धीरज', 'हीली बोन की बतखें' आदि. अज्ञेयजी की अंतिम कहानी कलाकार को मुक्ति सन् 1954 ई. में प्रकाशित हुई थी. प्रेमचंदोत्तर हिन्दी कहानी में अज्ञेय को एक नयी दिशा के अन्वेषक का श्रेय दिया जाता है.

इस दौर के एक और प्रमुख कहानीकार हैं - यशपाल. उनका प्रथम कहानी संग्रह 'पिंजरे की उड़ान' (1939) है. उनकी पहले दौर की कहानियों में समाज की असंगत और अन्यायपूर्ण स्थितियों पर व्यंग्य करते हुए सामाजिक न्याय के लिए संघर्ष को वाणी दी गई है. इसमें 'कुत्ते की पूँछ', 'परदा', 'गंडेरी', 'अस्सी बटा सौ', 'या साईं सच्चे', 'आदमी का बच्चा', 'ज्ञानदान', 'शंबूक' आदि कहानियाँ शामिल हैं. उनके दूसरे दौर की कहानियाँ 'भस्मावृत चिनगारी', 'फूलो का कुर्ता', 'प्रतिष्ठा का बोझ', 'धर्मरक्षा', 'आतिथ्य', 'तुमने क्यों कहा था कि मैं सुंदर हूँ' आदि विवादास्पद, पर विचारोत्तेजक हैं. तीसरे दौर में यशपाल पौराणिक संदर्भों की ओर मुड़ते नजर आते हैं. इस दौर में 'उत्तमी की माँ', 'सच बोलने की भूल', 'खच्चर और आदमी', 'भूख के तीन दिन' आदि कहानियाँ आती हैं.

अन्य कहानीकार

इस युग के कहानीकारों में कुछ और नाम जोड़े बगैर चर्चा पूर्ण नहीं हो सकती. जैसे-

भगवती प्रसाद वाजपेयी : 'मधुपर्क', 'दीपमालिका', 'हिलोर', 'मिठाईवाला', 'तारा', 'शबनम', 'निंदिया लागी'

भगवतीचरण वर्मा : 'इंस्टालमेंट', 'दो बाँके', 'मुगलों ने सल्तनत बख्श दी'

राहुल सांकृत्यायन : 'वोल्गा से गंगा', 'सतमी के बच्चे'

उपेन्द्रनाथ अश्क : 'कांकड़ा का तेली', 'डाची', 'अंकुर', 'पलंग', 'बेबसी', 'ठहराव', 'अजगर'

विष्णु प्रभाकर : 'कितना झूठ', 'सूरज', 'तांगेवाला', 'चाची', 'हिमालय की बेटी', 'मारिया'

अमृतलाल नागर : 'लंगूर का बच्चा', 'दो आस्थाएँ', 'मरघट के कुत्ते', 'तुलाराम शास्त्री'

अमृत राय : 'एक साँवली लड़की', 'गीली मिट्टी', 'एक गुमनाम आदमी', 'तिरंगा', 'कथन'

रांगेय राघव : 'महायात्रा', 'बाप का दोस्त', 'धूल की आँधी', 'गदल', 'मृगतृष्णा'

भैरवप्रसाद गुप्त : 'सपने का अंत', 'सिविल लाइन का कमरा', 'इंसान और मक्खियाँ'

चन्द्रकिरण सौनरेक्सा : 'आदमखोर', 'नासमझ', 'कवयित्री', 'बर्थ डे', 'आत्महंता'

इस प्रकार समग्र रूप से देखें तो हिन्दी कहानी की विकास यात्रा में इन तीन चरणों का उल्लेखनीय महत्व है. प्रेमचन्द ने हिन्दी कहानी को मजबूत नींव देते हुए उन्हें कलात्मक ऊँचाई तक पहुँचाया. प्रसाद, यशपाल, कौशिक, सुदर्शन, उग्र, राहुल आदि ने कहानी को सामाजिक पीड़ा की अभिव्यक्ति का सफल माध्यम बनाया. जैनेन्द्र और अज्ञेय कहानी की मनोवैज्ञानिक

धारा के अग्रदूत बने. कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि इस दौर में हिन्दी कहानी अपनी विकास यात्रा के अगले चरण में बढ़ने के लिए हर तरह से पुख्ता हुई.

3.5 नयी कहानी

छायावादोत्तर युग में हिन्दी कहानियों के क्षेत्र में बहुत परिवर्तन आया. बहुत से साहित्यिक आंदोलन हुए, गोष्ठियाँ हुईं और पत्र-पत्रिकाओं के विशेषांक निकले. भारत के राष्ट्रीय जीवन में यह स्वाधीनता के बाद के मोहभंग का दौर था. कहानी ने इस समकालीनता को गहरे अर्थ में रेखांकित करने का प्रयास किया और जीवन की जटिलताओं को उनकी समग्रता में आंकने की कोशिश की. नयी कविता की तरह नयी कहानी शब्द चल पड़ा. इस युग के आरंभ में प्रगतिवादी और व्यक्तिवादी प्रवृत्तियाँ दिखाई दीं. हिन्दी में जिस समय की कहानी को 'नयी कहानी' कहा गया वह लगभग सन् 1954 ई. से सन् 1963 ई. का है. नामवर सिंह के अनुसार कहानी की चर्चा में अनायास ही 'नयी कहानी' शब्द चल पड़ा है और सुविधानुसार इसका प्रयोग आलोचकों और कहानीकारों ने किया है .... (कहानी : नयी कहानी, पहला संस्करण, सन् 66, पृ. 53). दिसम्बर, सन् 1957 ई. में प्रयाग में हुए साहित्यकार सम्मेलन तक 'नयी कहानी' शब्द लगभग स्वीकृत हो गया था. इस आंदोलन को चलाने वाले तीन प्रमुख कहानीकार माने जाते हैं – राजेन्द्र यादव, मोहन राकेश और कमलेश्वर.

नयी कहानी की विशेषताएँ

1. यथार्थ और जीवन की वास्तविकताओं का अंकन
2. परंपरागत और रुढ़ तत्वों के आधार पर मूल्यांकन का विरोध
3. जीवन की उसकी समग्रता और संश्लिष्टता में प्रस्तुति
4. शिक्षा, नौकरी, संघर्ष, असफल प्रेमसंबंधों का चित्रण
5. महिलाओं की समस्याओं का चित्रण
6. विदेशी पृष्टभूमि पर कहानियाँ
7. राजनीति के प्रति प्रतिक्रियाएँ
8. महिला कहानीकारों की सक्रिय साझेदारी
9. भोगे हुए यथार्थ का चित्रण

नयी कहानी यथार्थ और जीवन की वास्तविकताओं के अंकन के आधार पर अपने को पिछली कहानी से अलग करती है. इसमें कहानी के परंपरागत और रुढ़ तत्वों के आधार पर कहानी के मूल्यांकन का विरोध किया गया. राजेन्द्र यादव ने व्यक्ति और समाज की दो धाराओं को मिलाकर जीवन को उसकी समग्रता और संश्लिष्टता में प्रस्तुत करने की बात कही. अपने कथ्य और संवेदना के धरातल पर नयी कहानी परिवर्तन का स्पष्ट आभास देती है. नयी कहानी का प्रमुख कथ्य शिक्षा और नौकरी के लिए किया जानेवाला संघर्ष, बेरोजगारी से उपजी हताशा और भ्रष्टाचार के प्रति समाज की बढ़ती हुई उदासीनता और स्वीकृति है. समाज की वर्जनाओं एवं निषेधों के कारण निष्फल प्रेम सम्बन्धों का, उनकी अपनी हताशा का चित्रण इनमें खुलकर हुआ है. कामकाजी महिलाओं की समस्याओं और परिवार में उनकी बढ़ती हुई हैसियत को केन्द्र में रखकर इस युग में कई कहानियाँ लिखी गयीं. विदेशी पृष्ठभूमि पर लिखी गई कहानियों में नूतन कथ्य और संवेदनाएँ प्रस्तुत हुईं. परम्परागत रिश्तों को पुनःपरिभाषित करने का प्रयास हुआ और अपरंपरागत और नयी संवेदनशीलता से बने रिश्तों को महत्व दिया जाने लगा.

नयी कहानी ने राजनीति के प्रति उदासीनता और उपेक्षा का रुख अपनाया. फिर भी

नयी कहानी के अनेक कहानीकार वामपंथी राजनीति के प्रति सहानुभूतिशील नजर आते हैं. इस तरह दो धाराएँ स्पष्ट दिखाई देती हैं - पहले वे जो उनसे वैचारिक स्तर पर जुड़े थे, दूसरे जो उनसे बचकर चलते थे. अपने कथ्य और संवेदनशीलता की दृष्टि से नयी कहानी अनेक स्तरों पर निष्ठा और आस्थाओं के मोहभंग की कहानी है. पुराने विचार, परंपरागत संबंध, आदर्शों आदि के प्रति मोहभंग की हताशा हर तरफ व्याप्त है. नये कथ्य और संवेदनाओं को अभिव्यक्ति देने के लिए भाषा के नये रूप अपनाये गये. विदेशी और स्थानीय अन्य भाषाओं का मेलजोल किया गया.

नये कहानीकारों ने प्रामाणिकता और अपने अनुभव के अपनेपन पर विशेष बल दिया. इसी को उन्होंने 'भोगा हुआ यथार्थ कहा' और यही नयी कहानी का आधार बना. नये कहानीकारों का आग्रह था कि लेखक को अपने अनुभव जगत का ही चित्रण करना चाहिए, इस प्रकार कहानी के प्रत्येक पहलू में नयेपन की चाह और प्रस्तुति के कारण इस युग की कहानी का नयी कहानी नामकरण हुआ, जो कि सार्थक भी है.

नयी कहानी के प्रमुख साहित्यकार

वैसे तो नयी कहानी के प्रारंभ में तीन प्रमुख नाम सामने आते हैं राजेन्द्र यादव, मोहन राकेश और कमलेश्वर. इनके अलावा कई छोटे बड़े कहानीकारों ने इस नयी कहानी आंदोलन में अपनी सक्रिय उपस्थिति दर्ज की है.

मोहन राकेश

आपकी कहानियों का कथ्य, आसपास का जीवन, भोगा हुआ यथार्थ, स्त्री-पुरुष संबंध, पारिवारिक संघर्ष, संबंधों की नयी व्याख्या, कुंठित वासना आदि है. इनकी प्रमुख कहानियाँ 'इंसान के खंडहर', 'सीमाएँ', 'उर्मिल जीवन', 'दोराहा', 'लक्ष्यहीन', 'मरुस्थल', 'कंबल', 'वासना की छाया', 'ग्लास टैंक', 'एक ठहरा हुआ चाकू', 'खाली क्वार्टर', 'फौलाद का आकाश', 'आखिरी सामान', 'सुहागिनें', 'क्लेम', 'परमात्मा का कुत्ता', 'मलबे का मालिक' आदि हैं.

राजेन्द्र यादव

राजेन्द्र यादव की कहानियों में आधुनिक भावबोध को व्यापक सामाजिकता में देखने का प्रयास है. यादव जी मध्यमवर्गीय जीवन के लेखक थे. भारतीय समाज में स्त्री के बहुविध उत्पीड़न के प्रति वे सजग और संवेदनशील हैं. व्यक्तिगत, पारिवारिक और सामाजिक तीनों स्तरों के संबंधों का विस्तृत चित्रण एवं विश्लेषण यादव जी की कहानियों में मिलता है. बनी बनायी आस्थाओं और प्रचलित विश्वासों से नयी पीढ़ी के मोहभंग के दृश्य इन कहानियों में प्रस्तुत हुए हैं. स्त्री पुरुष संबंधों की नयी व्याख्या एवं पति-पत्नी के बीच तीसरे की उपस्थिति को लेकर भी काफी कहानियाँ हैं.

यादव जी की प्रमुख कहानियाँ हैं – 'जहाँ लक्ष्मी कैद है', 'अभिमन्यु की आत्मकथा', 'छोटे छोटे ताजमहल', 'किनारे से किनारे तक', 'प्रतीक्षा', 'अपने पार', 'लहरें और परछाइयाँ', 'देवताओं की मूर्तियाँ', 'खेल खिलौने', 'नास्तिक', 'लकड़हारा', 'तीन पत्र और आलपीन', 'लंच टाइम', 'तलवार', 'पंजहजारी', 'प्रश्नवाचक पेड़', 'पास फेल', 'एक कमजोर लड़की की कहानी', 'पुराने नाले पर नया फ्लेट', 'पेट्रोलपंप', 'सिंहवाहिनी' आदि.

कमलेश्वर

नयी कहानी आंदोलन में कमलेश्वर की महत्वपूर्ण उपस्थिति है. इनकी कहानियों में युगीन संक्रमण का मूल्यान्वेषी स्वर मिलता है. इनमें पुरानी पीढ़ी के जीवन का चित्रण, युगीन महानगरीय बोध, अकेलापन आदि को अभिव्यक्ति मिली है. इनकी कहानियों में स्त्री या तो सामाजिक विसंगतियों की शिकार है या फिर ढोंग भरा जीवन जीने को मजबूर है। कमलेश्वर नयी कहानी

के अत्यंत सशक्त कहानीकार हैं. उनकी प्रमुख कहानियाँ हैं – 'राजा निरबंसिया', 'कस्बे का आदमी', 'देवा की माँ', 'खोई हुई दिशाएँ', 'माँस का दरिया', 'मुरदों की दुनिया', 'सींखचे', 'तीन दिन पहले की रात', 'दिल्ली में एक मौत', 'एक अश्लील कहानी', 'प्रेमिका', 'एक थी विमला', 'लाश', 'जोखिम', 'नीली झील' आदि.

अन्य कहानीकार

1. निर्मल वर्मा – 'परिंदे', 'सूखा और अन्य कहानियाँ', 'अंधेरे में', 'कौवे और काला पानी', 'डेक', 'जानीन', 'एक शुरुआत', 'धूप का एक टुकड़ा', 'अंतर', 'वीकतंड', 'आदमी और लड़की', 'पिता और प्रेमी'.
2. फणीश्वरनाथ 'रेणु' – 'ठेस', 'विघटन के क्षण', 'तीसरी कसम', 'रसप्रिया', 'एक आदिम रात्रि की महक', 'लाल पान की बेगम', 'टेबुल', 'लफड़ा', 'नैना जोगिन', 'जलवा', 'आत्मसाक्षी'.
3. शिवप्रसाद सिंह – 'आरपार की माला', 'नयी पुरानी तस्वीरें', 'हीरों की खोज', 'दादी माँ', 'गुलरा के बाबा', 'सपेरा', 'बेहया', 'रेती', 'केवड़े का फूल', 'अरुंधती', 'धरातल'.
4. हरिशंकर परसाई – 'हँसते हैं रोते हैं', 'सेवा का शौक', 'भीतर का धाव', 'सदाचार का ताबीज', 'रानी नागफनी की कहानी', 'भोलाराम का जीव', 'राग विराग', 'मुंडन'.
5. कृष्णा सोबती – 'बादलों के घेरे', 'यारों के यार', 'तीन पहाड़', 'ए लड़की', 'नाम पट्टिका', 'नथीसा', 'लामा', 'दो राहें दो बाहें', 'दोहरी साँझ', 'सिक्का बदल गया', 'कलंगी', 'आज़ादी शम्मोजान', 'बदली बरस गई'.
6. उषा प्रियंवदा – 'फिर बसंत आया', 'कच्चे धागे', 'दो अंधेरे', 'मोहबंध', 'पूर्ति', 'जाले', 'कँटीली छाँह', 'दृष्टि दोष', 'जिन्दगी और गुलाब के फूल', 'वापसी', 'एक कोई दूसरा', 'मछलियाँ', 'सागर पार का संगीत', 'पिघलती हुई बर्फ', 'सम्बन्ध', 'द्वीप' आदि.
7. मन्नू भंडारी – 'मैं हार गई', 'दो कलाकार', 'घुटन', 'ईसा के घर इन्सान', 'दीवार', 'बच्चे और बरसात', 'कुलटा', 'खोटे सिक्के', 'सयानी बुआ', 'अकेली', 'मजबूरी', 'अभिनेता', 'अलगाव', 'नकली हीरे', 'नशा', 'बाहों का घेरा', 'एक बार और ऊँचाई' आदि.

इस प्रकार इन सभी कहानीकारों की सफल अभिव्यक्ति ने नयी कहानी को वह ऊँचाई दी जो आगे के लिए पथप्रदर्शक बनी. नयी कहानी सामूहिक संघर्ष और उपलब्धियों का प्रतिफल थी. नयी कहानी आंदोलन के कहानीकार आपसी मतभेद और विरोध के बावजूद सजगतापूर्वक सक्रिय थे, परिणाम स्वरूप हिन्दी कहानी साहित्य में नयी कहानी ने अपना महत्वपूर्ण स्थान बनाया.

- **बोघप्रश्न**

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए

1. हिन्दी कहानी का प्रारंभ कब से माना जाता है?
2. नयी कहानी का कालखंड कब से कब तक माना जाता है?
3. हिन्दी की प्रथम कहानी कौन-सी है?
4. हिन्दी कहानी के विकास के विभिन्न युगों के नाम बातइए?
5. नयी कहानी आंदोलन के प्रमुख कहानीकार कौन हैं?

3.6 सचेतन कहानी

नयी कहानी की रुढ़ि और मैनेरिज्म से हटकर फिर कुछ सार्थक करने के लिए जो

आंदोलन उभरे, उनमें सचेतन कहानी एक महत्वपूर्ण आंदोलन है. उसका प्रारंभ नवंबर 1969 ई. में प्रकाशित आधार (सं. डॉ. महीप सिंह) के सचेतन कहानी विशेषांक से माना जाता है. सचेतन कहानीकारों ने मनुष्य को सर्वांग और संपूर्ण रूप में देखना चाहा, उसके अचेतन और अवचेतन अस्तित्व से लेकर उसके सचेतन रूप का 'सचेतन कहानी' तक विशेष वैचारिक आंदोलन एवं शिल्पगत प्रयोग हैं. डॉ. महीप सिंह ने सचेतन कहानी आंदोलन, नयी कहानी में सक्रिय आत्मपरकता के विरोध में किया था. इस कहानी आंदोलन के प्रमुख हस्ताक्षर हैं – डॉ. महीप सिंह, मनहर चौहान, योगेश गुप्त, कुलभूषण, सुरेन्द्र अरोड़ा, रामकुमार भ्रमर आदि.

सचेतन कहानी की विशेषताएँ

जैसा कि पहले देखा गया है कि सचेतन कहानी नयी कहानी की आत्मपरकता के विरोध में उठाया गया आंदोलन है, इसमें हर स्तर की चेतना पर विशेष बल दिया गया है. जिंदगी जैसी है, वैसा स्वीकार कर कहानी में ढालने की बात है. इसमें रचना और अवधारणा दोनों स्तरों पर ही निषेध, विरोध और अस्वीकार की भूमिका का विशेष महत्व रहा है. सचेतन कहानी के प्रवर्तक डॉ. महीप सिंह के अनुसार, "सचेतन दृष्टि आधुनिकता की दृष्टि है. आधुनिकता एक गतिशील स्थिति है और हमारे सक्रिय जीवनबोध पर निर्भर है. विकासशील व्यक्ति ही आधुनिक हो सकता है. आधुनिकता नवीन परिस्थितियों के संदर्भ में अपना संस्कार करती है और संस्कारित परिस्थितियों को अनुभूति की संपृक्ति से चित्रित करना सचेतन कहानी की विशेषता है." (आधार, सचेतन कहानी विशेषांक, सन् 64, संपादकीय पृ. 15-16)

सचेतन कहानी ने ही पहली बार रूपवाद, व्यक्तिवाद, मृत्युवाद, अनास्थावाद, अस्पष्ट रहस्यवाद तथा नियतिवाद के विरुद्ध मोर्चा लिया और हिन्दी कहानी को इन भवरों से दूर रहने का संकेत दिया.

सचेतन कहानी के प्रमुख कहानीकार

1. **डॉ. महीप सिंह**

हिन्दी कहानी के इतिहास में सचेतन कहानी के प्रवर्तक डॉ. महीप सिंह को माना जाता है. उनकी कहानियाँ निम्न मध्यमवर्गीय जीवन की सामान्य स्थितियों पर केन्द्रित हैं. बहुत हल्के-फुल्के ढंग से स्थितियों पर चिढ़ाते और व्यंग्य करते हुए वे आगे बढते हैं. उनकी कहानी स्वराधात में महानगर में मृत्यु से संबंधित प्रतिक्रियाओं का तादृश्य चित्रण एवं आकलन है. उन्होंने करीब 125 कहानियाँ लिखी हैं. उनके प्रमुख कहानी संग्रह हैं - 'सुबह के फूल', 'एक लड़की शोभा', 'उजाले के उल्लू', 'कुछ और कितना', चर्चित कहानियाँ-'धूप की उँगलियों के निशान', 'इक्यावन कहानियाँ' आदि.

2. मनहर चौहाण

इनकी उल्लेखनीय कहानियों में 'घरधुसरा' और 'बीस सुबहों के बाद' की चर्चा की जा सकती है. 'बीस सुबहों के बाद' में महानगर - बम्बई के जीवन की व्यस्तता और विसंगतियों को पर्यात विश्वसनीय और आकर्षक ढंग से अंकित किया गया है. महानगर का अपरिचय, औपचारिकता, व्यस्तता, संकोच और कुंठाएँ 'बीस सुबहों के बाद' में बिना किसी दार्शनिक मुखौटे के सहज रूप में अंकित है.

3. योगेश गुप्त

महानगर का आंतक और अलगाव योगेश गुप्त की कहानी 'इन्कलोजर' में है लेकिन वहाँ उसकी अभिव्यक्ति ऐसी सहज और पारदर्शी न होकर उलझाव और दार्शनिक छद्म से आसक्त है. अपनी अन्य कहानियों में भी योगेश गुप्त मध्यवर्गीय अभावों और रोजमर्रा के संधर्षों को अस्तित्ववादी मुहावरें और छद्म दार्शनिकता के साथ अंकित करने का प्रयास करते हैं. 'चितकोबरा'

भी उनकी एक ऐसी ही कहानी है. 'टूटता हुआ कोला' और 'बहुत सारी बातें' अपने अस्तित्वादी मुहावरें के बावजूद मध्यवर्गीय जीवन की विसंगतियों और विद्रूप को अंकित करने का प्रयास करती हैं. 'प्रलाप', 'गतिसीमा', 'बहता शून्य' और 'टेलीफोन बूथ', 'द केव' और 'अबरक के फूल' आदि कहानियाँ उलझाव और अमूर्तन की प्रवृत्ति का शिकार है. 'भीड नम्बर दो' में समूचे मजदूर आंदोलन को अंकित किया गया है.

4. कुलभूषण

सचेतन कहानी से जुड़ने वाले लेखकों में कुलभूषण भी एक महत्वपूर्ण नाम है. हिंदी और उर्दू के प्रसिद्ध साहित्यकार पण्डित बद्रीनाथ भट्ट उर्फ 'सुदर्शन' के पुत्र होने के नाते कहानी के संस्कार उन्हें विरासत में मिले थे. मध्यवर्गीय जीवन की पृष्ठभूमि पर उन्होंने जीवन की विदूपताओं और मूल्य - संकट को पर्याप्त संवेदनशील ढंग से अंकित किया. आधार के सचेतन कहानी विशेषांक में प्रकाशित उनकी कहानी 'पहली सीढ़ी' उनकी उल्लेखनीय कहानियों में से एक हैं.

3.7 अ–कहानी

नयी कहानी में वैचारिकता की कमी और राजनीति के निषेध वाली दृष्टि का विकास होकर अ-कहानी का उद्भव हुआ. हिन्दी में सन् 60 के बाद कविता के क्षेत्र में जैसे विद्रोह का स्वर अ-कविता बनकर उभरा, उसी प्रकार अ-कहानी का मूल स्वर भी विरोध और निषेध का है. गंगाप्रसाद विमल और रवीन्द्र कालिया इस आंदोलन के प्रवर्तक माने जाते हैं. वे इसे एक आंदोलन न मानकर एक दृष्टि मानते हैं जो कहानी विधा के स्वीकृत मूल्यों के निषेध पर बल देती हैं. उनके अनुसार 'अ-कहानी' का संदर्भ इस दृष्टि से आंदोलन नहीं हैं. वस्तुतः अ-कहानी कथा के स्वीकृत आधारों का निषेध तथा किसी तरह के मूल्य स्थापन का अस्वीकार है ... (हिन्दी कहानीः पहचान और परख, सं. डों. इन्द्रनाथ मदान, पृ. 93)

अ-कहानी की विशेषताएँ

अ-कहानी में तत्कालीन यूरोप में सक्रिय कला एवं साहित्य जगत के अनेक प्रभावों को घुला-मिला कर प्रस्तुत किया गया है. एब्सर्ड थिएटर, एंटी स्टोरी, अस्तित्ववाद और बीट जनरेशन आदि के तत्व अ-कहानी की प्रकृति का निर्धारण करते हैं. राजनीति के प्रति अ-कहानी का मूल स्वर उदासीनता और अस्वीकार का है. जीवन की अनगढ़ता को उसके वास्तविक और मूल स्वर में प्रस्तुत करने के आग्रह के कारण अ-कहानी का कला पक्ष सहज है. इनमें बिम्बात्मकता एवं प्रतीकात्मकता को कोई विशेष स्थान नहीं, बल्कि तिरस्कार-सा है. इन कहानियों में कथा तत्व नहीं के बराबर है. घटनाएँ और ब्यौरे अत्यल्प हैं. यहाँ घटनाएँ और पात्रों पर उनके प्रभाव का वर्णन महत्वपूर्ण नहीं है. समकालीन स्थितियों के अनुभव का विस्तृत एवं बहुकोणीय विस्तार अ-कहानी में मिलता है. इन कहानियों में सामाजिक सम्पर्क, सुख, नैतिकता तथा प्रेम आदि बेहद झूठे एवं काल्पनिक ढंग से प्रस्तुत हुए हैं. इनके द्वारा कहानी लेखक यथार्थ से पलायन करते हैं. उस युग में कहानी अत्यधिक लोकप्रिय होने के कारण कहानी लेखक प्रयोग करने में झिझकते थे, अ-कहानी इसी प्रयोगशीलता पर बल देती है.

अ-कहानी के प्रमुख साहित्यकार

1. गंगाप्रसाद विमल

गंगाप्रसाद विमल की कहानियों में अंकित स्थितियाँ अधिकांश में बनावटी हैं और इसलिए इन स्थितियों के चौखटे में फिट किए गए पात्र भी जीते-जागते, हँसते-बोलते इंसान न होकर एकदम ठंडे और किताबी पात्र हैं। जो बड़े दार्शनिक अंदाज में प्रतीक्षा, त्रास, आंतक, अनिश्चय और निर्णयहीनता के तनाव की जिन्दगी जीते हैं. दरअसल ये कहानियाँ जैनेंद्र और अज्ञेय

की कृत्रिम, अमूर्त छद्म दार्शनिकता के तहत लिखी गई कहानियों के ही विस्तार हैं जिनमें अस्तित्ववाद और पश्चिम के कुछ अन्य कला आंदोलनों की छौंक लगाई गई है. कोई शुरूआत, 'नाटक अधूरा', 'शीर्षकहीन', 'झूठ', 'विध्वंस', 'अभिशाप और बीच की दरार' आदि ऐसी ही झूठी और बनावटी स्थितियों की नकली कहानियाँ हैं. विमल की कुछ अन्य कहानियाँ हैं- 'किसी दिन के लिए', 'दूसरे का भोग', 'एरीना और संबंध' आदि जो इसे प्रमाणित करती हैं कि स्थितियों की कृत्रिमता और आरोपण से बचकर फिर आगे गलतियों को दोहराने की बाध्यता से बचा जा सकता है.

2. रवीन्द्र कालिया

रवीन्द्र कालिया भी जीवन की विसंगतियों और विद्रूपताओं के कहानीकार हैं और अर्थहीनता बोध को अलग-अलग संदर्भों में संप्रेषित करते हैं. इन विसंगतियों को वे व्यंग्य के माध्यम से उद्‌घाटित करते हुए हर प्रकार की व्यवस्था और स्थापित मूल्यों के अस्वीकार की मुद्रा अपनाते हैं. 'मैं बड़े शहर का आदमी', 'पचास सौ पचपन' आदि कहानियाँ मान्यताप्राप्त संबंधों और मूल्यों के नकार की कहानियाँ हैं. 'त्रास' संबंधों के बदलाव और उसमें निहित संकट को अपेक्षाकृत गंभीरता पूर्वक व्यक्त करती है. 'नौ साल छोटी पत्नी', 'एक प्रामाणिक झूठ', 'कोजी कार्नर' और 'डरी हुई औरत' आदि कहानियाँ प्रेम और स्त्री संबंधों को केन्द्र में रखती हैं.

3. दूघनाथ सिंह

एक कहानीकार के रूप में दूधनाथ सिंह की शुरूआत अ-कहानी आंदोलन से पहले हो चुकी थी. 'सपाट चहेरे वाला आदमी' में संकलित उनकी कहानियाँ इस आंदोलन की सीमाओं का एक उल्लेखनीय उदाहरण प्रस्तुत करती हैं. 'आइसबर्ग', 'रक्तपात और रीछ' आदि उनकी संश्लिष्ट और कुछ हद तक जटिल बनावट तथा प्रतीक विधान का उदाहरण हैं. 'शिनाख़्त' अ-कहानी के घोषणापत्र के अनुरूप, रागात्मक संबंधों के क्षरण और अंततः निषेध की कहानी हैं. अपनी रचनात्मकता के दूसरे दौर में लिखी गयीं उनकी कहानियाँ - 'माई का शोक गीत', 'हँटार' आदि हैं.

4. राजकमल चौधरी

राजकमल चौधरी की कहानियों की आधी से अधिक दुनिया आवारा, पेशेवर बाजारु औरतों की दुनिया है और उसके पुरुष भी उसके धंधे की जरुरतों को पूरा करने वाले लोग हैं. 'अग्निस्नान' की लुलु और शीरी, 'जलते हुए मकान में कुछ लोग' की दीपू और चंद्रावती, 'एक काली दो काली तीन काली' की श्याम और सीता, 'व्याकरण का तृतीय पुरुष' की एलीसा और वियेट्रिस तथा 'एक अजनबी रात के लिए एक शाम की बन्या' महापात्र-बोनी आदि सारी औरतें इसी प्रकार की हैं. 'मछली जाल' की कहानियों में राजकमल चौधरी कभी-कभी अपना ही अतिक्रमण करने की कोशिश करतें हैं. 'झील' कहानी हमारे समय की राजनीतिक दुनिया को उसके सारे ढोंग और अंतर्विरोधों के साथ अंकित करने की कोशिश करती हैं.

5. जगदीश चतुर्वेदी

जगदीश चतुर्वेदी की कहानियों में बार-बार एक ऐसा पुरुष सामने आता है जो किसी पहाड़ी कस्बे में बिताए गये बचपन की सघन स्मृतियों के साथ अब किसी महानगर में आ बसा हैं. 'उदास गुलमहोर', 'विवर्त और अधखिले गुलाब' कहानियाँ या तो असामान्य यौनेच्छा और यौनावेग को अपने केन्द्र में रखती हैं या फिर 'उदासीन' की तरह निष्क्रियता को दर्शाती हैं.

जगदीश चतुर्वेदी की 'फ्लर्ट', 'बुढ़ापी की गंध' और 'निहंग' जैसी कहानियाँ इसे प्रमाणित करती हैं कि अ-कहानी आंदोलन के संक्रामक प्रभाव से निकालकर वे जब-तब उस आंदोलन की मूल स्थापनाओं का अतिक्रमण भी करना चाहतें हैं. 'निहंग' अ-कहानी की सारी घोषणाओं

और वक्तव्यों से मुँह चुराते हुए सामाजिक निरपेक्षता के दर्शन की भर्त्सना करती हैं.

अ-कहानी स्थापित मूल्यों के अस्वीकार और निषेध पर आधारित हैं. लेकिन इस अस्वीकार का कोई सामाजिक और रचनात्मक आधार यहाँ पूरी तरह से गायब है.

आइये! आगे चलने से पहले प्रश्नों के माध्यम से अपने पढ़े हुए को दुहरा लें.

- **निम्नलिखित प्रश्नों के सही उत्तर दीजिए**

    (1) नयी कहानी के प्रवर्तक कहानीकार किसे माना जाता है?

    (2) पूर्व प्रेमचन्द युग के प्रमुख कहानीकारों के नाम बताइए?

    (3) प्रेमचन्द की कहानियों की विशेषताएँ क्या हैं?

    (4) प्रेमचन्दयुगीन अन्य कहानीकार कौन-कौन हैं?

    (5) प्रेमचन्दोत्तर युग में कौन-से कहानी आंदोलन दिखाई देते हैं?

    (6) सचेतन कहानी आंदोलन के प्रमुख कहानीकार कौन-कौन से हैं?

3.8 समांतर कहानी

हिन्दी कहानी क्षेत्र में सन् 1972 ई. में कमलेश्वर ने 'सारिका' पत्रिका के संपादकीय में एक नये कहानी आंदोलन का प्रारंभ किया और उसे समांतर कहानी नाम दिया. उन्होंने सारिका पत्रिका के धारावाहिक रूप में समांतर कहानी पर तीन विशेषांक निकाले. समांतर कहानी ने व्यक्ति की असहायता, नैतिक संकट, मूल्यहीनता तथा विघटन को समग्र सामाजिक तंत्र के परिप्रेक्ष्य में देखा. समांतर कहानी आंदोलन को आगे बढ़ाने का यानी प्रचार का कार्य 'सारिका' पत्रिका ने ही किया. समांतर कहानी स्थितियों के प्रति दृष्टि की प्रतिबद्धता से मुक्त होकर जनता के बीच जाने का आग्रह करती है. यह समांतर पीढ़ियों और समांतर सोच की कहानी है. इसमें सामान्य या आम आदमी की चिन्ता को केन्द्र में रखने का प्रयास किया गया है. इस कहानी आंदोलन के प्रमुख लेखक हैं - कमलेश्वर, भीष्म साहनी, राजेन्द्र यादव, शैलेष मटियानी, सूर्यबाला, से. रा. यात्री, दिनेश पालीवाल, जितेन्द्र भाटिया, मेहरुन्निसा परवेज आदि.

प्रमुख साहित्यकार

1. **कमलेश्वर –** कमलेश्वर ने 'सारिका' के अपने संपादन काल में, आठवें दशक के प्रारंभ में समांतर कहानी आंदोलन की शुरुआत की. उन्होंने वाद और पींढ़ीमुक्त कहानी का प्रारंभ किया. उन्होंने 'सारिका' के माध्यम से कई क्रांतिकारी 'युवा लेखकों की फौज' तैयार की. उन्होंने सन् 2003 ई. में 'साहित्य अकादमी' और सन् 2005 ई. में 'पद्मभूषण' से सम्मानित किया गया. उनके प्रमुख कहानी संग्रह हैं – 'राजा निरबंसिया', 'कस्बे का आदमी', 'खोई हुई दिशाएँ', 'जिंदा मुर्दे', 'कथा प्रस्थान', 'कोहरा', 'इतने अच्छे दिन' आदि. कमलेश्वर दूरदर्शन के प्रथम पटकथा लेखक के रूप में जाने जाते हैं. आज हिन्दी दलित साहित्य आंदोलन की – जो रूपरेखा है उसके पीछे कमलेश्वर का बड़ा हाथ है.

2. **से. रा. यात्री –** से. रा. यात्री समांतर कहानी के महत्वपूर्ण कहानीकार हैं. उनकी कहानी 'अंधेरे का सैलाब' में दो परिवार - एक रईस और दूसरा गरीब की समांतर चलती कथा है.

3. **इब्राहिम शरीफ –** 'बहुत बड़ी लड़ाई', 'गणित', 'दिग्भ्रमित', 'पूर्वाभास', 'बौद्धिक', 'फैसले के बाद' आदि कहानियों में गरीबी, वर्गसंघर्ष, विधवा स्त्री के दर्द का चित्रण है.

4. **दामोदर सदन –** 'श्मशान' में एक पढ़े लिखे बेकार युवक का चित्रण है. 'कन्फेशन' में एक अधिकारी के पश्चाताप की कथा है.

5. **निरूपमा सेवती –** उनकी कहानियों का स्वर आत्मसजग युवती का संघर्ष है. 'तलाश के बाद', 'आंतरबीज', 'काले खरगोश', 'कब तक', 'विरासत' आदि कहानियों में आधुनिक युवतियों के संघर्ष एवं भटकाव तथा आत्मनिर्भरता का चित्रण है.

6. **आलमशाह खान –** 'पराई प्यास का सफर', 'ऑर्डर', 'एक और सीता', 'मरती हुई धूप' आदि कहानियों में यथास्थितिवाद के स्तरों को उजागर करने का प्रयास है.

7. **सुधा अरोडा –** 'बगैर तराशे', 'मरी हुई चीज', 'युद्ध विराम', 'बलवा', 'दमनचक्र', 'तानाशाही', 'पति परमेश्वर' आदि कहानियों में रुढ़ियों और दुराग्रहों से मुक्त होने की चाह है.

8. **मेहरुन्निसा परवेज –** 'आंतक भरा सुख' पारिवारिक अभावों की कहानी हैं.

9. **मधुकर सिंह** : 'हरिजन सेवक' अछूतों और हरिजनों पर आए दिन होने वाले अत्याचारों की कहानी हैं.

10. **जितेन्द्र भाटिया –** उनकी कहानी 'शहादतनामा' में वर्ग संघर्ष और व्यवस्था के घिनौने रुप को प्रस्तुत किया गया है.

3.9 जनवादी कहानी

जनवादी कहानी का वास्तविक आरंभ आठवें दशक में दिखाई देता है. कहानी को निम्न वर्ग तक ले जाने का कार्य जनवादी कहानीकारों ने किया. एक तरह से प्रेमचंदीय परंपरा में फिर से जुड़कर उसे आगे बढ़ाने का प्रयास जनवादी कहानी है. जनवादी कहानी आम आदमी के अधिकारों को हासिल करने की लड़ाई है. शोषण मूलक हर व्यवस्था के असली चहेरों को उजागर कर शोषितों, दलितों को वर्ग संघर्ष के लिए तत्पर करना इसका उदेश्य है ... अधिकतर जनवादी कहानियाँ राजनैतिक हैं. (बीसवीं शताब्दी की अंतिम दो दशक की हिन्दी कहानी : पृ. 154) इस धारा के प्रमुख कहानीकार हैं - भीष्म साहनी, अमरकांत, मार्कण्डेय, शेखर जोशी, काशीनाथ सिंह, मधुकर सिंह, रमेश उपाध्याय आदि.

जनवादी कहानी के प्रमुख साहित्यकार

1. **भीष्म साहनी –** सामाजिक यथार्थ और वर्ग चेतना दृष्टि से सक्रिय कहानीकारों में भीष्म साहनी प्रमुख हैं. उनकी कहानियों में धार्मिक एवं सांप्रदायिक दृष्टि की संकीर्णता और उसके जीवन विरोधी स्वरूप का उद्धाटन है. वर्ग चेतना का स्वस्थ्य रुप, वर्ग संक्रमण, राजनीति का अनुशासित रुप, रुढ़ियों से मुक्ति आदि भीष्म साहनी की कहानियों की विशेषताएँ हैं. उनकी प्रमुख कहानियाँ हैं – 'पहला पाठ', 'भाग्य रेखा', 'शिष्टाचार', 'मुर्गी की कीमत', 'पाप-पुण्य', 'एक धर्म सनातन', 'पहचान', 'चीफ की दावत', 'अमृतसर आ गया है', 'पटरियाँ', 'दालखोर' आदि.

2. **अमरकांत –** अमरकांत नयी कहानी आंदोलन के बीच विकसित हुए कहानीकार हैं. उनकी कहानियों के चरित्रों के द्वारा देश के असंख्य लोगों की सोच और मानसिकता को स्वर मिलता हैं. जीवन का वैविध्य, राजनीति, युवा की हताशा, स्त्री-पुरुष संबंध, निम्न मध्यमवर्गीय मानसिकता, रोमान्स आदि का चित्रण इनकी कहानियों में है. प्रमुख कहानी 'डिप्टी कलक्टरी', 'दोपहर का भोजन', 'जिन्दगी और जोंक', 'गले की जंजीर', 'नौकर' आदि हैं.

3. **मार्कण्डेय –** जनवादी कहानी में ग्राम कहानी के प्रवक्ता और सूत्रधार मार्कण्डेय हैं. ग्राम-कथानक, रागात्मक संबंधों का चित्रण, नारी जीवन, सरकारी तंत्र एवं न्याय व्यवस्था पर व्यंग्य, वैचारिक क्रांति का चित्रण आदि उनकी कहानियों की विशेषताएँ हैं, प्रमुख कहानियाँ 'पानफूल', 'गुलरा के बाबा', 'धूरा', 'महुए का पेड़', 'भूदान', 'हंसा जाई

अकेला’, ‘कल्याण मन’, ‘गनेसी’, ‘दूध और दवा’ आदि हैं.

4. **शेखर जोशी –** शेखर जोशी ने सामाजिक संदर्भ को आधार बनाकर कहानियाँ लिखी हैं. सांस्कृतिक और कलात्मक मूल्यों पर हावी होते पूँजीवाद के प्रति चिंता, रुढ़ियों और अंधविश्वासों से संघर्ष, औधोगिक संस्थानों की शोषणखोरी, मध्यमवर्गीय परिवेश एवं पात्रों का चित्रण, वर्ग चेतना का आग्रह, श्रम का महत्व आदि इन कहानियों की विशेषताएँ हैं. प्रमुख कहानियाँ ‘कोसी का घटवार’, ‘दाज्यू’, ‘उस्ताद’, ‘शुभोदीदी’, ‘कविप्रिया’, ‘जी-हजूरियाँ’, ‘साथ के लोग’, ‘मृत्यु’, ‘तरु का निर्णय’ आदि हैं.

5. **काशीनाथ सिंह –** ‘लोग बिस्तरों पर’, ‘आदमीनामा’, ‘लाल किले के बाज’, ‘निधन’, ‘अधूरा आदमी’, ‘मुसईचा’, ‘जंगल जातकम’, ‘कौन कुमति तोहें लागी पाँडे’ आदि.

6. **सतीश जमाली –** ‘पुल’, ‘युद्ध’, ‘अर्थतंत्र’, ‘जीव’, ‘सड़क’, ‘थके हारे’, ‘ठाकुर संवाद’, ‘सत्ताधारी’, ‘प्रथम पुरुष’ आदि.

7. **मधुकर सिंह –** ‘भगोड़े’, ‘पूरा सन्नाटा’, ‘लहू पुकारे आदमी’, ‘गर्दिश के दिन’.

8. **रमेश उपाध्याय –** ‘चतुर्दिक कामधेनु’, ‘अग्निसंभवा’, ‘जमी हुई झील’.

9. **विजयकांत –** ‘ब्रह्मफाँस’, ‘राह’, ‘बान्ह’, ‘जाग’, ‘बलैत माखुन भगत’.

3.10 सक्रिय कहानी

हिन्दी पत्रिका ‘मंच’ के संपादक श्री राकेश वत्स को सक्रिय कहानी का प्रवर्तक माना जाता है. उन्होंने सक्रिय कहानी को चेतनात्मक उर्जा और जीवंतता की कहानी कहा. उनके अनुसार– “सक्रिय कहानी उस समझ और असंडाव की कहानी है, जो आदमी को बेबसी, निहत्थेपन और नपुंसकता से निजात दिलाकर, स्वयं अपने अंदर की कमजोरियों के खिलाफ खड़े होने के लिए तैयार करने की जिम्मेदारी अपने सिर लेती है.” (बीसवीं शताब्दी की अंतिम दशक की कहानी : पृष्ठ : 156) सक्रिय कहानी वाम चेतना को स्वीकार करती है, मगर मार्क्सवाद से बंधी नहीं हैं. इसमें समाज में व्यापक शोषण के विरुद्ध आम आदमी की आवाज को उठाया गया है. इनमें सच्चाई, ईमानदारी तथा दूसरो की बर्बादी के लिए संघर्षरत चरित्रों का चित्रण है. सक्रिय कहानी का पूर्ण विकास आठवें दशक में दिखाई देता हैं.

कुछ प्रमुख सक्रिय कहानियाँ

‘जंगली जुगरकिया’ (रमेश बतरा), ‘काले पेड़’ (राकेश वत्स), ‘एक-न-एक दिन’ (नवेंदु) ‘आखिरी मोड़’ (कुमारसंभव) ‘लोग हाशिए पर’ (धीरेन्द्र अस्थाना) आदि.

3.11 सन् 1980 से 2000 की कहानी

बीसवीं शताब्दी के अंतिम दो दशकों की कहानी अपने समकालीन जीवन के समानांतर चलनेवाली कहानियाँ हैं. इस दौर में कहानियों के प्रमुख विषय –

दलित चेतना

शोषण मूलक व्यवस्था का विरोध

परंपरागत रुढ़ियों, भ्रष्ट मान्यताओं का विरोध

लोकतंत्र में आस्था

तीव्र संवेदनशीलता

समता - समानता - स्वतंत्रता, भाईचारा

अन्याय, अत्याचार, शोषण के प्रति संघर्ष

परिवेश के प्रति जागरुकता

नारी शोषण का यथार्थ चित्रण

पाश्चात्य संस्कृति एवं भूमंडलीकरण का प्रभाव

प्रमुख कहानियाँ

'गंडासा' (विमांशु दिव्याल)

'आजादी' (स्वरुपचंद)

'भूख' (विश्वजीत)

'बयान' (रमाकांत)

'सुरंग' (दयानंद बटोही)

'आरक्षण' (जसराम हरनौटिया)

'तहकीकात' (शत्रुध्न कुमार)

'बित्तेभर जमीन' (डॉ. प्रेमशंकर)

'लटकी हुई शर्त' (प्रहलादचन्द्र दास)

'हारे हुए लोग' (मोहनदास नैमिषराय)

'सलाम', 'सपना' (ओमप्रकाश वाल्मीकि)

'चन्द्रमौली का रक्तबीज' (सत्यप्रकाश)

'जीवन साथी', 'हरिजन' (प्रेम कपाडिया)

'फूलवा', 'क्षितिज' (रक्तकुमार संभारिया)

'हैरी कब आयेगा' (सूरजपाल सिंह चौहान)

'समय के शिलालेख' (डॉ. कुसुम मेघवाल)

'खाल खिंचने वाले' (अब्दुल बिस्मिल्लाह)

'जरुरत, मुक्ति की तलाश' (जयप्रकाश कर्दम)

'चार इंच की कलम', 'आटे सने हाथ' (डॉ. कुसुम वियोगी)

- **निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत, बताएँ**

(1) क्या समांतर कहानी आंदोलन की शुरुआत कमलेश्वर ने की?

(2) क्या जनवादी कहानी का वास्तविक आरंभ सातवें दशक में दिखाई देता है?

(3) क्या अधिकतर जनवादी कहानियाँ राजनैतिक हैं?

(4) क्या अमरकांत प्रेमचंद काल के कहानीकार हैं?

(5) क्या 'मंच' के संपादक राकेश वत्स हैं.

3.12 सारबिंदु

निष्कर्षत: देखा जा सकता है कि नयी कहानी से लेकर बीसवीं सदी के अंत तक की कहानियों में आधुनिक भाव-बोध और भाव–भूमि के कारण आशय, विषय और शैली की दृष्टि से पर्याप्त परिवर्तन हुआ है. इन सब में नवीनता तो है पर पुरानी कहानी से वह पूर्णतया मुक्त नहीं है, और यह जड़ों का जुड़ाव अच्छा भी हैं. कहानी की इस विकास यात्रा

में अ-**कहानी, सचेतन कहानी, सहज कहानी, समकालीन कहानी, समांतर कहानी, जनवादी कहानी, सक्रिय कहानी, लघु कहानी** जैसे कई पड़ाव नजर आतें हैं. नयी रचनाशीलता को लेकर काफी वाद-विवाद हुए, मगर इन सबके बावजूद कहानी अपने सभी अंगों में सकारात्मक परिवर्तित दिखाई देती है. इन समग्र कहानी आंदोलनों के अध्ययन से यह पता चलता है कि इन सभी में अनुभूति तो वही है, बस अभिव्यक्ति बदली है. बीसवीं सदी के अंत तक आगे के आंदोलनों में जो दलित चेतना को वाणी मिलनी बाकी थी यह भी मिल गई. इस प्रकार कुल मिलाकर हिन्दी कहानी साहित्य का प्रारंभ और विकास हुआ.

3.13 परीक्षोपयोगी प्रश्नावली

(अ) निम्नलिखित प्रश्न के उत्तर संक्षिप्त में लिखिए

(1) अ-कहानी आंदोलन किस ने शुरु किया था?

(2) समांतर कहानी में क्या विशेषता नजर आती है?

(3) जनवादी कहानी के प्रवर्तक किसे माना जाता है?

(4) प्रमुख जनवादी कहानीकारों के नाम बताइए!

(5) सक्रिय कहानी आंदोलन के प्रमुख कहानीकार कौन है?

(6) बीसवीं सदी के अंतिम दो-दशक के पाँच कहानीकारों के नाम उनकी रचना के नाम के साथ बताइए?

(7) हिन्दी कहानी की प्रमुख दस कहानियाँ कौन-सी मानी जा सकती हैं?

(ब) रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए

(1) सारिका पत्रिका के संपादक .... थे.

(2) शेखर जोशी ने .... संदर्भों को लेकर कहानियाँ लिखीं.

(3) .... की कहानी ‘भीड नंबर दो’ में समूचे मजदूर आंदोलन को अंकित किया गया है.

(4) सचेतन कहानी की दृष्टि .... दृष्टि है.

(5) जैनेन्द्र और अज्ञेय .... कहानी के अग्रदूत हैं.

(स) निम्नलिखित प्रश्न के उत्तर विस्तार से लिखिए

(1) कहानी विधा में प्रेमचंद का योगदान समझाइए.

(2) सचेतन कहानी की विशेषताएँ दर्शाइए.

(3) प्रेमचंद युग की कहानियों पर प्रकाश डालिए.

(4) प्रेमचंद की कहानियों की विशेषता क्या है?

(5) प्रेमचंद युग और प्रेमचंदोत्तर कहानी के बीच का अंतर स्पष्ट कीजिए.

(द) निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए

(1) हिन्दी कहानी का प्रारम्भ और विकास

(2) प्रेमचंद युग की कहानियाँ

(3) नयी कहानी की विशेषताएँ

(4) समांतर कहानी

(5) जनवादी कहानी के प्रमुख साहित्यकार

3.14 उपयोगी पाठ्यसामग्री

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास, आ. रामचन्द्र शुक्ल.
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास, डॉ. नगेन्द्र.
3. हिन्दी कहानी का विकास, मधुरेश, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद.
4. हिन्दी कहानी का विकास, डॉ. मंजुश्री.
5. हिंदी साहित्य एक वस्तुनिष्ठ इतिहास, गोविंद पांडेय एवं सरस्वती पांडेय, प्रोग्रेसिव बुक सेंटर, वाराणसी.
6. www.hindibook.com

इकाई 4 ‘उसने कहा था’ - चंद्रधर शर्मा ‘गुलेरी’

रूपरेखा

4.1 उद्देश्य

4.2 प्रस्तावना

4.3 लेखक परिचय

4.3.1 जीवन परिचय

4.3.2 कृतित्व परिचय

4.4 कहानी कला की दृष्टि से ‘उसने कहा था’ कहानी की समीक्षा

4.4.1 कथावस्तु

4.4.2 चरित्र चित्रण

4.4.3 संवाद

4.4.4 देशकाल और वातावरण

4.4.5 भाषाशैली

4.4.6 उद्देश्य

4.5 ‘उसने कहा था’ : शीर्षक की सार्थकता

4.6 मुख्य अंशों की व्याख्या

4.7 सारबिंदु

4.8 परीक्षोपयोगी प्रश्नावली

4.9 उपयोगी पाठ्यसामग्री

4.1 उद्देश्य

विद्यार्थी मित्रो! इस इकाई 4 के साथ खंड 2 की शुरुआत हो रही है. इस खंड में आप विभिन्न फलकों से चुनी हुई कुल 6 कहानियों का अध्ययन करेंगे. प्रस्तुत इकाई के अंतर्गत आप अमर कथाकार चंद्रधर शर्मा ‘गुलेरी’ कृत ‘उसने कहा था’ कहानी का अध्ययन करेंगे. इस इकाई को पढ़ने के बाद आप –

- चंद्रधर शर्मा ‘गुलेरी’ का जीवन परिचय एवं साहित्यिक योगदान की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे.
- ‘उसने कहा था’ कहानी का सारांश लिख सकेंगे.
- कहानी के प्रमुख चरित्रों का चरित्र चित्रण कर सकेंगे.
- कहानी के उद्देश्य से परिचित होंगे.
- इस कहानी का अध्ययन करने के बाद आप कर्तव्यनिष्ठ और ईमानदारी जैसे जीवन मूल्यों को समझकर आत्मसात कर सकेंगे.
- ‘उसने कहा था’ शीर्षक की सार्थकता को समझ सकेंगे.

4.2 प्रस्तावना

इस इकाई में हम चंद्रधर शर्मा ‘गुलेरी’ कृत ‘उसने कहा था’ कहानी का अध्ययन करने जा रहे हैं. कहानी लेखकों में चंद्रधर शर्मा ‘गुलेरी’ का नाम आदर के साथ लिया जाता

है. उनके द्वारा रचित 'उसने कहा था' कहानी बहुत ही लोकप्रिय हुई है. आज के यंत्र युग में जहाँ प्रेम, सत्य, समर्पण आदि जैसे मूल्यों का ह्रास हुआ है. वहीं इस कहानी में कर्तव्यनिष्ठ और ईमानदारी जैसे जीवन मूल्यों को आत्मसात करके जीवन जीने की प्रेरणा दी गई है. एक कहे हुए को आदमी जिंदगी भर कैसे निभाता है, यह इस कहानी में बख़ूबी बताया गया है. 'उसने कहा था' प्रेम संवेदना की कहानी है. 'उसने कहा था' फ्लैश बैक पद्धति (पूर्वदीप्ति शैली) पर लिखी गयी प्रथम कहानी है.

नि:स्वार्थ प्रेम और बलिदान जैसे शाश्वत मूल्यों की पहचान कराने वाली यह कहानी कहानीकला की दृष्टि से कैसे सफल सिद्ध हुई है, यह हम इस इकाई के माध्यम से पढ़ेंगे. साथ ही हम इस कहानी के कुछ ऐसे तत्वों का अध्ययन करेंगे जिसके बल पर कहानी रुपी भवन खड़ा होता है.

4.3 लेखक परिचय

4.3.1 जीवन परिचय

चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' हिन्दी साहित्य भवन में उदित होनेवाला एक ऐसा मेधावी नाम है, जो अपनी विद्वत्ता और बुद्धि प्रतिभा के कारण अमर बन गया है. उनका जन्म सन् 1883 ई. में हिमाचल प्रदेश के गुलेर नामक गाँव में हुआ था. उनके पिता पंडित शिवराम शास्त्री बहुत बड़े ज्योतिर्विद थे. उनकी माता का नाम लक्ष्मीदेवी था, जो धर्म और कर्म पर विश्वास रखनेवाली एक सुशील नारी थीं. उनके घर में संस्कृत, वेद, पुराण, पूजापाठ, संध्यावंदन, धार्मिक कर्मकाण्डों का वातावरण हमेशा बना रहता था. साहित्यिक संस्कारों की विरासत लेखक को अपने घर से मिली थी. प्रयाग विश्वविद्यालय से बी.ए. की उपाधि प्राप्त करने के बाद 'समालोचक' नामक पत्र के संपादन का कार्य किया.

राजपंडित कुल में जन्म लेनेवाले गुलेरी जी का राजघरानों के साथ घनिष्ठ संबंध रहा है. खेतड़ीनरेश जयसिंह जैसे राजा महाराजाओं ने उन्हें प्रोत्साहित भी किया था. 'काशी नागरी प्रचारिणी सभा' के सदस्य के रुप में इनकी भूमिका महत्वपूर्ण रही है. उन्होंने सन् 1916 ई. में अजमेर के मेयो कॉलेज में अध्यापक का कार्य किया. तत्पश्चात सन् 1920 ई. में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में प्राचार्य के पद को भी गुलेरी जी ने सुशोभित किया. सन् 1922 ई. में केवल 39 वर्ष की अल्पआयु में ही इस नश्वर संसार को त्याग कर वह अलविदा हुए.

4.3.2 कृतित्व परिचय

चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति थे. धर्म, ज्योतिष विद्या, पुरातत्व, दर्शनशास्त्र, भाषाविज्ञान, संगीत, चित्रकारी, लोककथा, राजनीति, साहित्यशास्त्र आदि विभिन्न विषयों में उनकी रुचि रही है. बाल्यावस्था में मिली साहित्यिक प्रतिभा से उनका व्यक्तित्व बहुआयामी बना. हिन्दी साहित्य में उनका विशेष योगदान रहा है, जिन्हें हम इस प्रकार प्रस्तुत कर सकते हैं:-

कहानियाँ

(1) 'सुखमय जीवन' (2) 'बुद्धू का काँटा' (3) 'उसने कहा था'

निबंध

(1) 'मोरेसि मोहिं कुठाँउ' (2) 'कछुआ-धर्म'

कविताएँ

(1) 'झुकी कमान' (2) 'भारत की जय'

- **बोध प्रश्न**

(1) ‘उसने कहा था’ कहानी के लेखक कौन हैं?

(क) चंद्रधर शर्मा ‘गुलेरी’ (ग) प्रेमचन्द

(ख) अज्ञेय (घ) जैनेन्द्र

(2) चंद्रधर शर्मा ‘गुलेरी’ का जन्म कहाँ हुआ था?

(क) अजमेर (ग) काशी

(ख) हिमाचल प्रदेश (घ) दिल्ली

(3) ‘कछुआ धर्म’ क्या है?

(क) कहानी (ग) लघुकथा

(ख) कविता (घ) निबंध

(4) ‘गुलेरी’ जी ने किस पत्रिका का संपादन किया?

(क) आलोचना (ग) समालोचना

(ख) विवेचना (घ) कथालोचना

(5) ‘फ्लैश बैक’ पद्धति पर लिखी गई प्रथम कहानी कौन-सी है?

(क) ‘उसने कहा था’ (ग) ‘ग्यारह वर्ष का समय’

(ख) ‘इंदुमती’ (घ) ‘ईदगाह’

4.4 कहानी कला की दृष्टि से ‘उसने कहा था’ कहानी की समीक्षा

कहानी लेखन की प्रारंभिक कहानी होने के बावजूद ‘उसने कहा था’ कहानी इतनी सफल और लोकप्रिय हुई कि आज भी यह कहानी पाठकों के दिलो-दिमाग को आंदोलित करने में समर्थ है. हिंदी कहानी जगत में यह मार्मिक और लोकप्रिय कहानी मील का पत्थर कही जा सकती है. नि:स्वार्थ प्रेम और बलिदान जैसे शाश्वत मूल्यों की पहचान कराने वाली यह कहानी, कहानी कला की दृष्टि से भी सफल सिद्ध हुई है.

4.4.1 कथावस्तु

कथानक कहानी के निर्माण का प्रमुख आधारबिंदु है. वास्तव में यहीं से कहानी का पूरा ढाँचा तैयार होता है. इस दृष्टि से कहानी में कथानक का स्थान, रीढ़ की हड्डी के समान है. कथानक जीवन में घटित होनेवाली घटनाओं, प्रसंगों के माध्यम से तैयार होता है. ‘उसने कहा था’ कहानी के कथानक में लेखक ने जीवन की कई घटनाओं को एकसूत्रता में जोड़ा है. इस कहानी की कथावस्तु अत्यंत रोचक और मार्मिक भी है.

प्रस्तुत कहानी लहनासिंह नामक व्यक्ति के साथ जुड़ी हुई है, जो इस कहानी में नायक की भूमिका में है. साथ ही साथ कहानीकार ने हजारासिंह, बोधासिंह, सूबेदारनी होराँ आदि पात्रों के द्वारा कहानी की कथावस्तु का निर्माण किया है.

‘उसने कहा था’ कहानी का प्रारंभ अमृतसर के बाज़ार से होता है. अमृतसर के बाज़ार की छोटी गलियाँ और उनमें चलने वाले बम्बूकार्टवालों की मधुर आवाजों के बीच कथा का आरंभ होता है. इसी शहर में एक चौक पर एक सिक्ख लड़का और लड़की का मिलन होता है. लड़का अपने मामा के केश धोने के लिए दही और लड़की रसोई के लिए बड़ियाँ लेने वहाँ आई थी. वे दोनों छुट्टियाँ मनाने अपने-अपने मामा के घर आये हुए थे. दुकान से चीजें खरीदने के बाद लड़का ठिठोली में लड़की से पूछता है कि ‘तेरी कुड़माई हो गई!’ लड़की जवाब में ‘धत्’ कहकर वहाँ से भाग जाती है.

महीने भर तक लड़के का यही पूछने का सिलसिला चलता रहता है. लेकिन एक दिन लड़की कह देती है – “हाँ हो गई, देखते नहीं यह रेशम से कढ़ा हुआ सालू.” अपनी आशा के विरुद्ध उत्तर सुनकर लड़के के दिलोदिमाग में जो हलचल मच जाती है, उसका चित्रण करते हुए लेखक ने लिखा है - “रास्ते में एक लड़के को मोरी में धकेल दिया, एक छाबड़ीवाले ने दिनभर की कमाई खोई, एक कुत्ते पर पत्थर मारा और एक गोभीवाले के ठेले में दूध उड़ेल दिया.”

इस घटना के 24 वर्ष बीत जाने पर वही सिक्ख बालक लहनासिंह 77 राइफल्स में जमादार बनकर सामने आता है. फौज में भर्ती होने के बाद लहनासिंह अपनी ज़मीन के मामले में छुट्टी लेकर घर आता है. लेकिन विदेशी जमीन पर युद्ध आरंभ होने के कारण आदेश पाकर वापस जाने पर मजबूर होता है. वापस युद्ध में जाते समय वह अपने सूबेदार हजारासिंह के घर जाता. तब वहाँ, वह आठ वर्षीय सिक्ख बालिका उसे सूबेदारनी होरा के रूप में मिलती है. सूबेदारनी उसे पहचान लेती है. वह अपनी जिदंगी के बीते हुए दिनों को याद दिलाती हुई लहनासिंह से कहती है कि जिस प्रकार अमृतसर के बाज़ार में एक दिन तुमने मुझे घोड़े के नीचे आने से बचाया था, उसी प्रकार युद्धभूमि में मेरे पति हजारासिंह और मेरे बेटे बोधासिंह की रक्षा करना. बालपन के स्नेह का मान रखते हुए उसकी बातों को सर आँखों पर रख लहनासिंह युद्ध के मैदान की तरफ निकल पड़ता है.

विश्वयुद्ध का वातावरण है. इस कहानी में कहानीकार ने युद्ध की पृष्ठभूमि पर लहनासिंह जैसे कर्मवीर को माध्यम बनाकर कर्तव्य परायणता का मार्ग बताया है. फ्रांस और बेल्जियम के मैदान में जर्मनी के साथ युद्ध करने लहनासिंह अपने सूबेदार के साथ निकल पड़ता है. सूबेदारनी होरा के वचन को वह भूलता नहीं. समय आने पर अपनी जान पर खेलकर उन दोनों को बचाने का मंसूबा उसके मन में था. जिस प्रांत में उनके रहने के लिए खन्दक की व्यवस्था थी, वहाँ कड़ाके की ठंड थी. अभी उन लोगों को तीन दिन वहाँ रहना था. रात का समय, खन्दक के आसपास घनघोर अँधेरा था और गहरा सन्नाटा छाया हुआ था. लहनासिंह अपनी खन्दक में पहरा दे रहा था. बोधासिंह बीमार हालत में था. लहनासिंह अपने गर्म वस्त्र उतारकर उसे पहनाता है. ऐसे में वेश बदलकर जर्मन अफसर सूबेदार हजारासिंह को धोखा देकर फौज के साथ बहुत दूर भेज देता है. बोधासिंह बीमार अवस्था में था. इसलिए हजारासिंह लहनासिंह को उसकी देखभाल के लिए खन्दक में कुछ सैनिकों के साथ रहने का आदेश देता है. हजारासिंह एक टुकड़ी को अपने साथ लेकर चला जाता है. उनके जाते ही छद्म जर्मन जासूस जो अंग्रेज अफसर बनकर आया था, वह खन्दक में प्रवेश करता है. लहनासिंह उसके साथ वार्तालाप करता है. उसे इस बात का विश्वास हो जाता है कि वह अफसर नहीं, बल्कि दुश्मन जासूस है, जो यहाँ छल-कपट करने आया है. सिगरेट जलाने के प्रकाश में लहनासिंह उस जर्मन जासूस को भलीभाँति पहचान लेता है.

लहनासिंह बहाना बनाकर खाई में चला जाता है और तुरंत निर्णय लेता है कि क्या करना चाहिए. वह वजीरासिंह को सूबेदार और अन्य सैनिक, जो अभी दूर चले गये थे, उनको बुला लाने के लिए कहता है. लेकिन वजीरासिंह अपने सूबेदार के आदेश का जिक्र करता है तब लहनासिंह कहता है - “ऐसी-तैसी हुकुम की! मेरा हुकुम जमादार लहनासिंह, जो इस वक्त यहाँ सबसे बड़ा अफसर है - उसका हुकुम है.”

वजीरा के चले जाने के बाद लहनासिंह अपनी वाणी विलास से बनावटी लपटन साहब को बातों में उलझाता है. लेकिन इधर वह जासूस अफसर खन्दक की दीवार में तीन बम के गोले रख देता है. उसके इस षडयंत्र को लहनासिंह देख लेता है. वह तुरंत ही अफसर की कुहनी पर चोट करके उसे मूर्छित कर देता है और उसकी तलाशी भी लेता है.

जर्मन अफसर की जेब में पिस्तौल थी. पिस्तौल की एक गोली लहनासिंह की जाँघ

में लगती है और वह अपाहिज हो जाता है. गोली लगने के बावजूद वह उस जर्मन का सामना निर्भीकता के साथ करता है. सूबेदार हजारासिंह भी अपनी फौज लेकर खन्दक में पहुँच आते हैं. 70 जर्मन सैनिकों का केवल 08 सिक्खों के साथ भीषण युद्ध होता है. पूरी जर्मन बटालियन ढेर हो जाती है. इस प्रकार लहनासिंह की दूरदर्शिता से खन्दक की रक्षा होती है और सेना भी नष्ट होने से बच जाती है.

युद्ध में घायल हुए सैनिकों को अस्पताल ले जाने के लिए गाड़ी आती है. जिसमें सभी के लिए पर्याप्त जगह नहीं थी अतः बोधासिंह, हजारासिंह को भेजा जाता है स्वयं लहनासिंह घायल होने पर भी नहीं जाता. सूबेदार हजारासिंह के बहुत कहने पर भी वह कहता है - "सूबेदारनी होरा को चिट्ठी लिखो तो मेरा मत्था टेकना लिख देना और जब घर जाओ तो कह देना कि मुझसे जो उसने कहा था, वह मैंने कर दिया."

प्रस्तुत कहानी में नायक लहनासिंह अपनी वीरता का परिचय देता है. वह अपने उस वचन को पूरा करता है, जो उसने सूबेदारनी होरा को दिया था. लहनासिंह अपनी मृत्यु शैय्या पर पड़ा था. वह बेहोश था. बेहोशी में वह अपने बीते हुए कल को याद करता है. जिंदगी की इस अंतिम घड़ी में उसे 08 साल की लड़की के साथ अमृतसर में गुजरे हुए दिन याद आते हैं. जिंदगी के इस अंतिम समय में वह अपने मित्र वजीरासिंह के साथ कुछ वार्तालाप करता हुआ कहता है -

"हाँ, अब ठीक है. पानी पिला दे!"

इसके साथ लहनासिंह के प्राण पखेरू उड़ जाते हैं.

कुछ दिनों के बाद अखबार में युद्ध में मरने वाले सैनिकों की सूची में नाम आता है - फ्रांस-बेल्जियम के युद्ध में 77 राइफल्स जमादार लहनासिंह की मृत्यु. लहनासिंह निर्दोष एवं निःस्वार्थ प्रेम और कर्तव्य के लिए मृत्यु का वरण कर लेता है.

इस प्रकार 'उसने कहा था' कहानी चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' रचित एक सफल कहानी है. इसकी कथावस्तु बड़ी ही रोचक है, जो पाठक को अपनी ओर खींचती है. कथावस्तु के प्रत्येक पृष्ठ पर जिज्ञासा और कौतूहल विद्यमान है. कथा में आरंभ, विकास, चरमसीमा और अंत जैसी सभी अवस्थाओं का निर्वाह हुआ है. लहनासिंह के साथ जुड़ी इसकी कथावस्तु ने ही इस कहानी को साहित्य जगत में अमर बनाया है.

4.4.2 चरित्र-चित्रण

कहानी का दूसरा तत्व पात्र और चरित्रचित्रण है. कहानीकार अपनी कथा को पात्रों के माध्यम से प्रस्तुत करता है. 'उसने कहा था' कहानी में कथा के प्रसंगों के हिसाब से 4-4 पात्र प्रयुक्त हुए हैं. इनमें सूबेदार हजारासिंह, बोधासिंह, वजीरासिंह, जर्मन जासूस का समावेश होता है. साथ ही सूबेदारनी होराँ का पात्र प्रत्यक्ष रूप से सामने न होने पर भी कहानी की मूल संवेदना के साथ जुड़ा होने के कारण महत्वपूर्ण स्थान रखता है. लहनासिंह नायक की भूमिका में हमारे सामने आता है. विभिन्न घटनाओं के द्वारा पात्रों का भलीभाँति परिचय प्राप्त हुआ है.

प्रस्तुत कहानी में सभी पात्र मानवीय धरातल पर क्रिया-कलाप करने वाले सजीव व स्वाभाविक हैं. चरित्रचित्रण के लिए लेखक के पास कहानी के कथ्य के अनुसार केवल एक ही पात्र के चरित्रचित्रण का अवकाश था, जिसे उन्होंने बड़ी तन्मयता के साथ उद्घाटित किया है.

लहनासिंह का चरित्र-चित्रण

चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' रचित 'उसने कहा था' कहानी के अध्ययन में हमें लहनासिंह नामक पात्र का परिचय प्राप्त होता है. पूरी कहानी की बागडोर को संभालने वाला यह चरित्र

मुख्य चरित्र के रूप में सामने आता है. प्रस्तुत कहानी में वह नायक की भूमिका निभाता है. इस कहानी में उनके चरित्र संबंधी जो विशेषताएँ दृष्टिगत होती हैं, उन्हें निम्न रूप में प्रस्तुत कर सकते हैं.

(1) सामान्य परिचय

लहनासिंह 'उसने कहा था' कहानी का मुख्य पात्र है. इस कहानी में सर्वप्रथम वह 12 वर्षीय बालक के रूप में सामने आता है. अमृतसर शहर में अपने मामा के यहाँ वह छुट्टियाँ मनाने आया हुआ है. जाति से वह सिक्ख है. कहानी में आगे वह 77 राइफल्स में एक फौजी बनकर सामने आता है. उसका शरीर सुगठित है. फैशन से दूर रहनेवाला वह बिलकुल निर्व्यसनी है. इस कहानी में लेखक ने उनके बचपन से लेकर मृत्यु तक की जीवन-यात्रा का वर्णन किया है. प्रस्तुत कहानी में उनके चरित्र से जुड़े कई पहलुओं का परिचय प्राप्त होता है.

(2) आदर्श प्रेमी

'उसने कहा था' कहानी में लहनासिंह सर्वप्रथम आर्दश प्रेमी के रूप में हमारे सामने आता है. भोला-भाला किशोर, जिसकी अमृतसर के चौक बाज़ार में एक दूकान पर एक अनजानी लड़की से मुलाकात होती है. उसी लड़की को वह एक दिन घोड़े के टांगों के नीचे आ जाने से बचाता है. इतना ही नहीं 24 साल बाद उस लड़की के कहने मात्र से वह उसके बेटे बोधासिंह और पति हजारासिंह को भी बचाता है. यह कार्य उसके विशुद्ध और सात्विक प्रेम व कर्तव्य की पहचान है. उसके प्रेम में कहीं भी स्वार्थ, छल-कपट या दंभ नहीं दिखाई देता.

वह प्रेमी है, परंतु उसे अपने प्रेम का प्रतिदान नहीं मिलता है. फिर भी वह इस प्रेम को कर्तव्य की वेदी पर बलि के रूप में चढ़ाकर मन में जरा भी अफ़सोस या गर्व का भाव नहीं आने देता.

(3) त्याग, बलिदान और समर्पण की भावना

लहनासिंह के चरित्र में त्याग, बलिदान और समर्पण का सुभग समन्वय हुआ है. वह अपनी जान पर खेलकर अपनी बाल्यावस्था की प्रियतमा के वचन पालन हेतु उनके पुत्र और पति को बचाता है. लहनासिंह की मौत निकट थी, किन्तु उसे कोई डर नहीं था. उसे इस बात का संतोष था कि किसी का दिया हुआ वादा पूरा किया. "प्राण जाय, किन्तु वचन न जाय" को मानने वाला लहनासिंह प्रेम की वेदी पर अपने प्राणों का समर्पण करता है.

प्रणपालन की यह उत्सुकता और कर्तव्यपालन की यह सजगता मानव-हृदय की विशालता का आलेखन करती है.

(4) निर्भयता, साहसिकता और सतर्कता

लहनासिंह एक निर्भय वीर सैनिक है. वह फ़ौज में 77 नं. राइफल्स का जमादार है. वह कठिन परिस्थितियों में भी लोहा लेते हुए तनिक भी हड़बड़ाता नहीं है. अपनी निड़रता से वह जर्मन आक्रमण को असफल बना देता है और अपने सैनिकों में भी निर्भयता का जोश भर देता है. जब वजीरासिंह उससे कहता है कि हमारे पास मात्र 8 सैनिक है, तब वह कहता है -

"आठ नहीं, दस लाख. एक एक अकालिया सिक्ख सवा लाख के बराबर होता है."

लहनासिंह में सजगता और सतर्कता की कोई कमी नहीं है. अपनी सजग, सर्तक और तीक्ष्ण बुद्धि से वह बनावटी लपटन साहब को पहचान लेता है.

"यह सीखा कि सिक्ख सिगरेट पीते हैं. यह सीखा कि जगधारी के जिले में नीलगायें होती हैं और उनके दो फुट चार इंच के सींग होते हैं. यह सीखा कि मुसलमान खानसामा मूर्तियों पर जल चढ़ाते हैं और साहब खोते पर चढ़ते हैं."

कहानी में प्रयुक्त यह कथन हमें उसकी सतर्कता का परिचय करवाता है.

(5) जवांमर्दी और जिंदादिली

लहनासिंह एक कर्तव्यनिष्ठ सैनिक और जिंदादिल युवक है. फौज में भर्ती होने के बाद वह धीरता, वीरता और सतर्कता से अपना कर्तव्य निभाता है. वह मस्तमौला जिंदादिल इंसान है.

(6) विनोदप्रिय

लहनासिंह विनोदी स्वभाववाला एक हँसमुख सैनिक है. जर्मन भूमि पर अपनी खन्दक में वह अन्य सैनिकों के साथ हास्य-विनोद करता है. उनका परम मित्र वजीरासिंह भी उनकी विनोदवृत्ति से बेहद प्रभावित होता है. इतना ही नहीं, फ़िरंगी मेमों के संदर्भ में भी हास्यात्मक बातें करके अपने साथियों का मन बहलाता है -

"अपने हाथों को झटका करेंगे और पेट-भर खाकर सो रहेंगे उसी फ़िरंगी मेम के बाग में मखमल की-सी हरी घास है. फल और दूध की वर्षा करती है. लाख कहते हैं, पर दाम नहीं लेती. कहती है तुम राजा हो, मेरे मुल्क को बचाने आये हो."

(7) चतुर

लहनासिंह विनोदप्रिय होने के साथ-साथ चतुर-चालाक भी है. चतुरता उनमें कूट-कूट कर भरी हुई है. अपनी चतुराई के कारण ही वह अन्य सैनिकों के प्राण बचाता है. उसकी चतुराई के कारण ही वेश बदलकर आनेवाला जर्मन अफसर मारा जाता है. कहानी में कई स्थानों पर उनकी चतुरता का चित्रण हुआ है.

(8) कर्तव्यनिष्ठता

कर्तव्यनिष्ठता लहनासिंह के चरित्र में छिपा एक अनमोल रत्न है. सूबेदारनी के पति और पुत्र को एक वचन के कारण बचाता है. इतना ही नहीं बल्कि अपने कर्तव्य को पूरा करने के लिए वह अपनी जान की बाज़ी लगा देता है. वह कहता है -

"सूबेदारनी होराँ को चिठ्ठी लिखो तो मेरा मत्था टेकना लिख देना. और जब घर जाओ तो कह देना कि मुझसे जो उसने कहा था वह मैंने पूरा कर दिया."

फौज में भी अपनी जिम्मेदारी को पूरे कर्तव्य के साथ निभाता हुआ नज़र आता है.

(9) व्युत्पन्न बुद्धि

लहनासिंह अत्यन्त सचेत, जागरुक, कुशाग्र बुद्धिवाला धीरपुरुष है. वह धूर्तता और छल-कपट युक्त व्यवहार को समझने की सूझ-बूझ रखता है. कहानी में हम देखते हैं कि वह दुश्मन के चंगुल में फँस जाने पर भी घबराता नहीं है, बल्कि धैर्य के साथ उनका सामना करता है. कहानी का नायक लहनासिंह कपटी लपटन साहब की धूर्तता, चालाकी और मक्कारी को पहचान लेता है और पूरी फौज को बचाता है.

(10) त्वरित निर्णायक शक्ति

लहनासिंह के चरित्र में अन्य गुणों के साथ-साथ त्वरित निर्णय करने की शक्ति भी है. अपनी बुद्धि से जो भी निर्णय करता है, उसमें वह सफल सिद्ध होता है. प्रस्तुत कहानी में जब उसे पता चलता है कि लपटन साहब कोई छद्मवेशी जर्मन है तो वह तुरंत हजारासिंह को वापस लेने के लिए भेजता है. जब वजीरासिंह मना करता है, तब वह कहता है -

"ऐसी की तैसी हुक्म की! मेरा हुक्म जमादार लहनासिंह जो इस वक्त यहाँ सबसे बड़ा अफसर है उसका हुक्म है."

सूबेदार हजारासिंह भी उनकी निर्णय शक्ति से प्रभावित होकर कहता है -

"तू न होता तो आज सबके सब मारे जाते."

इस प्रकार 'उसने कहा था' कहानी में लहनासिंह एक नायक की भूमिका निभाता है. वह भावुकतापूर्ण सच्चा प्रेमी, युद्धवीर, धैर्य एवं सहनशील, विनय-विवेकी, सदाचारी, परोपकारी, सहिष्णुव्यक्ति है. यह चरित्र आर्दश, उज्ज्वल और गरिमामय है. मानवीय धरातल पर मानवीय मूल्यों से भरा हुआ यह चरित्र भव्य और अमर है.

4.4.3 संवाद

'उसने कहा था' कहानी में संवादों की भी उचित ढंग से व्यवस्था हुई है. इस कहानी के संवाद सरल, सहज, रोचक व आकर्षक हैं. प्रस्तुत कहानी के संवादों में संक्षिप्तता अंत तक दिखाई देती है. जैसे -

"अच्छा, मेरी जरसी पहन लो,

और तुम?

मेरे पास सिगड़ी है और मुझे गर्मी लगती है, पसीना आ रहा है."

इन संवादों से कहानी के पात्रों की मन:स्थितियों का परिचय होता है. कहानी के प्रारंभ में किशोर-किशोरी का अमृतसर के बाज़ार में एक दूकान पर मिलन होता है, तब जो वार्तालाप होता है, वह आकर्षण पैदा करनेवाला है. यथा –

"तेरे घर कहाँ हैं?

मगरे में और तेरे?

माँझे में - यहाँ कहाँ रहती है?

अतरसिंह की बैठक में, वे मेरे मामा होते हैं."

'उसने कहा था' कहानी के संवादों की प्रमुख विशेषता है - उनकी नाटकीयता. कहानी में प्रत्येक पात्र नाटकीय ढंग से वार्तालाप करते हुए दिखाई देते हैं. जैसे –

"हाँ, क्यों लहना, क्या कयामत आ गई, जरा तो आँख लगने दी होती.

होश में आओ ! कयामत आई है और लपटन साहब की वर्दी पहनकर आई है."

इस प्रकार 'उसने कहा था' कहानी के संवाद हास्य-व्यंग्य, सांकेतिक तथा घटनापूर्ण हैं, जो कथा एवं पात्रों की मनोव्यथा को प्रकट करने में सहायक सिद्ध हुए हैं.

4.4.4 देशकाल और वातावरण

प्रस्तुत कहानी में लेखक ने जिस वातावरण का निरूपण किया है, उससे कहानी सहज, स्वाभाविक और वास्तविक बन पड़ी है. इस कहानी में प्रथम विश्वयुद्ध सन् 1914 ई. के समय का वर्णन हुआ है. लेखक ने परिवेश को समय की मांग के अनुरूप सँवारा है. 'उसने कहा था' कहानी में जिस परिवेश का चित्रण हुआ है, वह जीवंत है. प्रारंभ में अमृतसर के बाज़ार का दृश्य बड़ा ही आकर्षक है. युद्धभूमि का वातावरण भी ध्यानाकर्षक है. जैसे -

"गनीम कहीं दिखता नहीं, घंटे-दो-घंटे में कान के परदे फाड़नेवाले धमाके के साथ सारी खन्दक हिल जाती है और सौ-सौ गज धरती उछल पड़ती है."

इस प्रकार पूरी कहानी में देशकाल और वातावरण प्रभावोत्पादक ढंग से चित्रित हुआ है.

4.4.5 भाषाशैली

भाषा के द्वारा कहानीकार अपने भावों और विचारों को पाठकों के पास पहुँचाता है. इस दृष्टि से भाषा सम्प्रेषण का सफल माध्यम है. प्रस्तुत कहानी में सरल, सुबोध एवं प्रभावशाली

भाषा का प्रयोग हुआ है. 'उसने कहा था' कहानी की भाषा सरलता, सहजता, स्वाभाविकता, प्रवाहात्मकता आदि गुणों से संपन्न है. भाषा में क्लिष्टता व जटिलता लेश मात्र भी नहीं है. प्रसंगानुकूल और पात्रानुकूल भाषा के प्रयोग से कहानी की सफलता में चार चाँद लग गये हैं. भाषा शुद्ध साहित्यिक एवं सौष्ठवपूर्ण है. यथा -

"ऐसे बम्बूकार्टवालों के बीच में होकर एक लड़का और लड़की चौक की एक दुकान पर आ मिले."

'उसने कहा था' कहानी की भाषा में पंजाबी, उर्दू, अंग्रेजी आदि विभिन्न भाषाओं के शब्दों का प्रयोग हुआ है. जैसे -

पंजाबी भाषा के शब्द : हट जा, जीणे जोगिए, हट जा-करमाँ वालिए, हट जा पुतराँ प्यारिये, बच जा लम्बी उमराँ वालिये, सिक्ख, कुड़माई, सालू आदि.

उर्दू भाषा के शब्द : मरहम, कयामत, सिपाही, खानसामा, तरस आदि.

अंग्रेजी भाषा के शब्द : जनरल, रेजिमेंन्ट, लपटन, मेम, मीन गैट्ट, पिस्तौल आदि.

कहावतें और मुहावरों का प्रयोग

इस कहानी में कहावतें और मुहावरों का भी उचित ढंग से प्रयोग हुआ है. जैसे –

सन्नाटा छा जाना, रोम-रोम में तार दौड़ना, आँख मारना, चकमा देना, दाढ़ी मूंडना, कपाल क्रिया करना आदि.

'उसने कहा था' कहानी में लेखक ने वर्णनात्मक, विवरणात्मक शैली का प्रयोग किया है. शैली में कहीं-कहीं पर नाटकीयता का प्रभाव भी परिलक्षित होता है. पूर्वदीप्ति शैली का जो प्रयोग हुआ है वह अद्वितीय है. कुछ स्थानों पर गुलेरी जी ने हास्य- व्यंग्यात्मक निरूपण प्रणाली को भी अपनाया है. कुल मिलाकर भाषाशैली की दृष्टि से यह कहानी सफल सिद्ध होती है.

4.4.6 उद्देश्य

चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' रचित 'उसने कहा था' कहानी एक भारतीय सैनिक की जीवनगाथा है. प्रस्तुत कहानी का मूल प्रतिपाद्य आदर्श वीरोचित प्रेम है. एक ऐसे उदात्त प्रेम का निरूपण करना, जिसमें किसी भी प्रकार के स्वार्थ, ईर्ष्या, द्वेष, वासना, छल-कपट का कोई स्थान नहीं है. वह प्रेम जो विश्वासघात, कामवासना, जात-पात, धर्म-मजहब से मीलों दूर है. वह प्रेम जो अमरत्व का प्रतीक है. इस कहानी में प्रयुक्त अमर चरित्र लहनासिंह इसी प्रेम का परिचायक है. यहाँ स्वाभाविक सवाल खड़ा होता है कि आज के युग में ऐसा विशुद्ध विकार रहित प्रेम क्या संभव है? लेकिन लहनासिंह इन सारे सवालों का जवाब बखूबी दे देता है.

लहनासिंह जैसा एक सामान्य युवक अपनी बालप्रेयसी के द्वारा मांगे हुए दो वचन पति-पुत्र की रक्षा के लिए अपने प्राणों का बलिदान देता है. यह कहानी हमें अपने आदर्श के लिए मर मिटने का अमर संदेश देती है. इस कहानी में गुलेरी जी ने वचनपालन और त्याग का सबसे श्रेष्ठ उदाहरण हमारे सामने पेश किया है. प्रेम का ऐसा त्यागमय रूप शायद अन्यत्र उपलब्ध नहीं है. अतः ऐसा निष्काम और समर्पित निःस्वार्थ प्रेम का चित्रण प्रस्तुत कहानी का उद्देश्य है.

सामान्यतया ऐसा माना जाता है कि सैनिक का हृदय इतना कठोर होता है कि उसके हृदय में दयाभावना, प्रेम, करुणा, ममता आदि भावनाओं का कोई स्थान नहीं होता. लेकिन यहाँ ये सारी धारणाएँ भ्रामक सिद्ध होती हैं. यह कहानी हमें स्पष्ट संकेत देती है कि युद्ध में

मारकाट करना सैनिक का नित्यकर्म होता है, तथापि लहनासिंह के हृदय के किसी कोने में प्रेम का एक ऐसा पवित्र झरना बहता है, जो जीवन के उपवन को हराभरा बना देता है.

इस प्रकार मानवीय भावों को झंकृत करनेवाली यह कहानी हमें प्रेम, त्याग, करुणा और बलिदान जैसे शाश्वत मूल्यों की पहचान करवाने में सफल रही है. आज जब सारे रिश्तों में स्वार्थ ही स्वार्थ की गंध विद्यमान है, तब यह कहानी हमें बहुत कुछ कह जाती है. यकीनन 'उसने कहा था' कहानी में आदर्श त्यागमय एवं गरिमामय पवित्र प्रेम की गूंज विद्यमान है.

- **बोध प्रश्न**
- **निम्नलिखित विधान सही हैं या गलत बताइए**

(1) लहनासिंह स्वभाव से हँसमुख है.

(2) इस कहानी में द्वितीय विश्वयुध्द का वर्णन है.

(3) लहनासिंह बोधासिंह की देखभाल करता है.

(4) लहनासिंह अपना कर्तव्य भूल जाता है.

(5) 70 जर्मन सैनिकों का केवल 8 सिक्खों के साथ भीषण युध्द होता है.

4.5 'उसने कहा था' : शीर्षक की सार्थकता

शीर्षक कहानी का मूल आधारस्तंभ होता है. कई विद्वानों ने शीर्षक को कहानी का प्रवेशद्वार माना है. जिस प्रकार बिना द्वार के घर में प्रवेश कर पाना कठिन होता है, ठीक उसी प्रकार बिना शीर्षक के कहानी की ओर जिज्ञासु पाठक का आकृष्ट होना भी संभव नहीं है. 'उसने कहा था' कहानी का शीर्षक विचारकों को विचार-विमर्श के लिए प्रेरित करता है.

सामान्यतया कहानी के शीर्षक की विभिन्न प्रणालियाँ प्रचलित हैं. कहानी साहित्य में निम्नलिखित रूपों में शीर्षक देने की पद्धतियाँ हैं.

- कथावस्तु के आधार पर
- प्रमुख पात्र के आधार पर
- किसी घटना, प्रसंग या तथ्य के आधार पर

'उसने कहा था' कहानी का शीर्षक कथा में प्रयुक्त एक घटना पर आधारित है. 12 वर्षीय लहनासिंह उस सिक्ख बालिका को 'क्या तेरी कुड़माई हो गई?' बार बार पूछता है. एक दिन लड़की सगाई हो जाने की बात कहती है तो उसके ऊपर मानो आसमान फट पड़ता है. 24 साल के बाद वही लड़की सूबेदार हजारासिंह की पत्नी के रूप में सामने आती है. वह लाड़ी होराँ लहनासिंह से अपने पति और पुत्र की रक्षा हेतु वचन माँगती है. लहनासिंह अपनी जान की बाज़ी लगाकर उन दोनों को बचाता है. इस कहानी का नामकरण लाड़ी होराँ के द्वारा माँगे गये वचन की घटना पर आधारित है. इस घटना के आधार पर यह शीर्षक बिलकुल उचित सिद्ध होता है.

किसी भी कहानी के शीर्षक में कुछ विशेषताएँ भी होती हैं, जो उसमें होनी चाहिए. उनमें से खरे उतरने वाले शीर्षक को ही यथायोग्य एवं सार्थक माना जाता है.

संक्षिप्तता

संक्षिप्तता कहानी के शीर्षक की प्रमुख विशेषता है. कहानी का शीर्षक बहुत ही संक्षिप्त होना चाहिए. कम से कम शब्दों में अधिक से अधिक विचारों का वहन उसमें होना चाहिए.

'उसने कहा था' यह शीर्षक बिलकुल इसी विशेषता को परिपूर्ण करने में समर्थ व सक्षम है.

सरलता

'उसने कहा था' कहानी का नामकरण बहुत ही सरल है. यह शीर्षक कहीं नाम मात्र को भी बोझिल या जटिल नहीं लगता. इस नामकरण को कोई भी व्यक्ति आसानी से बोल सकता है और समझ भी सकता है.

आकर्षक

'उसने कहा था' यह शीर्षक अत्यंत आकर्षक है. यह शीर्षक ही पाठक को कहानी की ओर खींचता है. शीर्षक पढ़कर प्रत्येक पाठक कहानी पूरी पढ़ने के लिए प्रेरित होता है. अतः पाठकों को आकर्षित करने का सहज गुण 'उसने कहा था' शीर्षक में विद्यमान है.

जिज्ञासा

जिज्ञासा कहानी के शीर्षक की आत्मा है. शीर्षक जितना जिज्ञासापूर्व होगा, कहानी उतनी ही सफल होगी. प्रस्तुत कहानी का शीर्षक जिज्ञासायुक्त है. कहानी के आरंभ से लेकर अंत तक पाठकों में जिज्ञासा बनी रहती है. यह शीर्षक पाठक के मन में विभिन्न प्रश्न खड़े करता है. जैसे -

– किसने कहा था?

– किससे कहा था?

– क्यों कहा था?

– क्या कहा था?

ये सभी जिज्ञासाएँ सभी के मन में उत्पन्न होती हैं. लेकिन अंत में जो रहस्य छिपा हुआ था, वह लहनासिंह प्रकट करता हुआ कहता है -

"सूबेदारनी होराँ को चिट्ठी लिखो, तो मेरा मत्था टेकना लिख देना और जब घर जाओ तो कह देना कि मुझसे जो उसने कहा था वह मैंने कर दिया."

इस प्रकार निष्कर्ष के रूप में यही फलित होता है कि 'उसने कहा था' कहानी चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' द्वारा सन् 1914 ई. में लिखित एक महत्वपूर्ण कहानी है. इसमें प्रेम, त्याग, समर्पण और बलिदान जैसे मानवीय भावों की अभिव्यक्ति हुई है. लहनासिंह जैसे एक जाँबाज सिपाही की कथा कहनेवाली प्रस्तुत कहानी में कहानी कला के सभी तत्व विद्यमान हैं. इसमें नवीनता, विषयानकूलता, निश्चयबोधकता, रोचकता, सुसंगतता आदि जैसे शीर्षक से जुड़े सभी लक्षणों का निर्वाह हुआ है. अतः 'उसने कहा था' शीर्षक बिल्कुल सार्थक एवं उचित है.

4.6 मुख्य अंशों की व्याख्या

(1) "आठ नहीं दस लाख. एक-एक अकालिया सिक्ख सवा लाख के बराबर होता है. चले जाओ."

संदर्भ

यह गद्यांश चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' विरचित 'उसने कहा था' कहानी से उद्धृत किया गया है.

प्रसंग

कहानी के मध्यभाग में जब जासूस लपटन साहब की भनक सुनकर लहनासिंह अपने मित्र वजीरासिंह को यह कथन कहता है.

व्याख्या

'उसने कहा था' कहानी में लेखक ने प्रेम, त्याग और बलिदान जैसे मानवमूल्यों की प्रतिष्ठा की है. लहनासिंह अपने सूबेदार हजारासिंह की फौज के साथ फ्रांस और बेल्जियम की भूमि पर जर्मन के साथ युद्ध लड़ने जाता है. युद्ध की तैयारियाँ हो जाने के कुछ दिनों के बाद उनका पड़ाव जिस जगह पर था, वहाँ एक जर्मन जासूस उनका लपटन बनकर आता है और सूबेदार तथा उनके साथी सैनिकों को वहाँ से दूर भेज देता है.

सूबेदार हजारासिंह के वहाँ से चले जाने के बाद वह जर्मन जासूस अपना रंग बदलता है. वह बनावटी लपटन लहनासिंह को सिगरेट पीने को देता है, तब लहनासिंह को उसके वार्तालाप से स्पष्ट हो जाता है कि यह उनका लपटन साहब नहीं, बल्कि जर्मन है. इसलिए वह खन्दक के भीतर आकर अपने साथी वजीरासिंह को जगाता है और कहता है कि तुम फौरन सूबेदार की पूरी फौज को वापस बुला लाओ. वजीरासिंह उनकी बात का इंकार करता हुआ कहता है कि हमारे पास केवल 08 सैनिक ही हैं. कैसे उनका सामना करेगें? तब लहनासिंह यह कथन कहता है.

यहाँ लहनासिंह अपनी मर्दानगी का परिचय देता हुआ कहता है कि हम सिक्खों में शक्ति और ताकत की कोई कमी नहीं होती. हमें अपने बाहुबल पर पूरा भरोसा है. केवल एक सिक्ख हजारों दुश्मनों को मार सकता है. इसलिए आठ के हिसाब से सवा लाख का हिसाब करो तो दस लाख होता है. अतः अभी जर्मन फौज के पास यदि दस लाख सैनिक हैं, तब भी हम आठ भी उन पर भारी पड़ेगें. यहाँ लहनासिंह को अपने बाहुबल पर पूरा भरोसा है.

विशेषताएँ

1. यहाँ पर लहनासिंह का उदात्त चरित्र उद्घाटित हुआ है.
2. लहनासिंह एक ऐसा फौज़ी है, जो अपने शौर्य, बाहुबल और मर्दानगी से दुश्मनों की सारी योजनाओं को नाकाम कर देता है.
3. यह कथन हमें यह संदेश देता है कि यदि व्यक्ति में आत्मविश्वास है और उनके पास जिगर और हिम्मत है तो बड़ी-से-बड़ी बाधाओं के सामने भी लड़ा जा सकता है. अतः जिंदगी में विकट परिस्थितियों में निराश नहीं होना चाहिए.
4. भाषा बहुत ही सरल, सहज और सटीक है. भाषा में मार्मिकता आद्यंत विद्यमान है.
5. कहावतों और मुहावरों का प्रयोग यथायोग्य मात्रा में हुआ है.

(2) "बिना फेरे घोड़ा बिगड़ता है और बिना लड़े सिपाही. मुझे तो संगीन चढ़ाकर मार्च का हुक्म मिल जाये. फिर सात जर्मनों को अकेला मारकर न लौटूं तो मुझे दरबार साहब की देहली पर मत्था टेकना नसीब न हो."

संदर्भ

प्रस्तुत कथन चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' की लोकप्रिय कहानी 'उसने कहा था' में से लिया गया है.

प्रसंग

'उसने कहा था' कहानी के प्रारंभ में जब युद्धभूमि पर लहनासिंह अपने सूबेदार हजारासिंह की पूरी फौज के साथ जाता है, तब वहाँ युद्ध के संदर्भ में अपने सूबेदार को यह कहता है.

व्याख्या

'उसने कहा था' कहानी की कुछ घटनाएँ पाठकों को काफी हद तक प्रभावित करती

हैं. प्रस्तुत कहानी के प्रारंभ में अमृतसर के बाज़ार में एक लड़का और लड़की का मिलन एक ऐसी ही कौतूहलवर्धक घटना है. उस घटना के बाद कहानी का नायक लहनासिंह फौजी बनकर सामने आता है. फ्रांस और बेल्जियम की भूमि पर युद्ध का माहौल है. सूबेदार हजारासिंह अपनी पूरी सेना के साथ पर्वतीय स्थान पर एक खन्दक बनाकर तैयारियों में व्यस्त है. युद्ध का खौफनाक दृश्य जहाँ बमगोलों का कंपन पैदा करनेवाला वातावरण है. लहनासिंह उसी जगह पर अपने साथियों के साथ युद्ध संबंधी कुछ योजनाएँ बना रहा है. वह अपने सूबेदार को इसी योजना के तहत यह कथन कहता है.

लहनासिंह अपना आशय स्पष्ट करता हुआ कहता है कि घोड़े का धर्म होता है - फेरा लेना. यदि घोड़ा प्रतिदिन कुछ मील फेरे नहीं लेता तो वह दौड़ने में नाकाम हो जाता है. इसलिए लोग घोड़े को हर रोज 2-4 किलोमीटर दौड़ाते हैं. घोड़े की भाँति ही सैनिक का भी धर्म और कर्म युद्ध करना है. क्योंकि उसको तालीम ही कुछ इस प्रकार की दी जाती है कि उनके दिमाग में से मौत का खौफ निकल जाता है. लड़ाई के बिना सैनिक आधा-अधूरा ही है.

इसलिए लहनासिंह कहता है कि मुझमें युद्ध करने का इतना सामर्थ्य है कि यदि आदेश दिया जाय तो सात जर्मनों को अकेला मौत के घाट उतार दूँ. मैं कसम खाता हूँ कि यदि मैं ऐसा न कर सका तो मैं दरबार साहब की देहलिज पर कभी-भी मत्था नहीं टेकूँगा। यहाँ लहनासिंह अपनी वीरता, निर्भयता और बहादुरी से हमें अवगत करवाता है.

विशेषताएँ

(1) इस कथन में लहनासिंह के चरित्र में निहित वीरता, धीरता, निर्भीकता, शौर्यता जैसे पहलूओं का उद्‌घाटन हुआ है.

(2) इस कथन के माध्यम से लेखक ने यह संदेश दिया है कि व्यक्ति को अपने आप पर पूरा भरोसा होना चाहिए. क्योंकि आत्मबल ही इंसान की सबसे बड़ी पूँजी है. जिंदगी के इस विकट पथ पर ऐसे लोग ही सफल होते हैं.

(3) यहाँ पर लेखक ने उदाहरण शैली का प्रयोग किया है.

(4) इस कहानी में लहनासिंह जैसे उज्ज्वल और आदर्श पात्र के माध्यम से सत्य, प्रेम, त्याग और करुणा आदि मानवमूल्यों की ज्योत जलाने का प्रयास किया है.

(5) भाषा ऐसी मार्मिक है कि पाठक के हृदय में सीधे तीर की भाँति चुभ जाती है.

(6) “मृत्यु के कुछ समय पहले स्मृति बहुत साफ हो जाती है. जन्म-भर की घटनाएँ एक-एक करके सामने आती हैं. सारे दृश्यों के रंग साफ होते हैं, समय की धुंध बिल्कुल उन पर से हट जाती है.”

संदर्भ

यह अवतरण चन्द्रधर शर्मा ‘गुलेरी’ रचित ‘उसने कहा था’ कहानी से लिया गया है. यह कहानी बहुत ही मार्मिक कहानी है.

प्रसंग

‘उसने कहा था’ कहानी के अंतिम चरण में जब लहनासिंह घायल होकर मृत्यु के शरण होता है, तब लेखक उनकी मनोदशा का वर्णन करते हुए यह कथन कहता है.

व्याख्या

प्रस्तुत कहानी का अध्ययन हमें संकेत देता है कि अपनी बालप्रेयसी होराँ के पति

और पुत्र को बचाकर लहनासिंह घायल होता है. युद्ध में घायल सैनिकों को अस्पताल ले जाने की व्यवस्था की जाती है, लेकिन लहनासिंह जाने से मना करता है. वजीरासिंह उसके पास बैठा है. सभी वहाँ से चले जाते हैं. वह अपने परम मित्र वजीरासिंह को कहता है कि थोड़ा-सा पानी पिला दे. जिंदगी की इस अंतिम घड़ी में जो मनोदशा होती है, उसका चित्रण हुआ है.

लहनासिंह अपनी मृत्यु शैय्या पर लेटा हुआ है. जिंदगी की इस अंतिम घड़ियों में लहनासिंह अपने जीवन के बीते हुए प्रसंगों और घटनाओं को याद करता है. लोगों का ऐसा मानना है कि इंसान जब मृत्यु के निकट होता है, तब अतीत के सारे रंग-रूप उनके सामने उभर कर आते हैं. पूरे जीवन का लेखा-जोखा, क्या पाया और क्या खोया के सभी चित्र उसके मानसपटल पर उभरने लगते हैं.

यहाँ लहनासिंह की जिदंगी की सारी तस्वीरें उनके मानस में स्पष्ट हो जाती हैं. अमृतसर के बाज़ार में उस अबोध बालिका के साथ उनकी मुलाकात, सालों बाद पुनः मुलाकात और उनके द्वारा मांगा हुआ वचन आदि प्रसंग एक-एक करके उन्हें याद आ रहे हैं.

विशेषताएँ

(1) यहाँ लहनासिंह की मनोदशा का करुणामय चित्रण हुआ है.

(2) अपनी मृत्यु से पूर्व लहनासिंह अपनी जिंदगी की कुछ बीती हुई यादें स्वप्न के रूप में देखता है.

(3) यहाँ पर लहनासिंह के मन में मृत्यु की चिंता नहीं, बल्कि जिदंगी में किसी के लिए कुछ कर गुज़रने की खुशी है.

(4) भाषा में लालित्य, ओजस्विता और प्रवाह का आद्यंत निर्वाह हुआ है.

(5) मुहावरेदार शैली का प्रयोग हुआ है.

4.7 सारबिंदु

- कहानी का प्रारम्भ अमृतसर के बाज़ार में एक आठ वर्षीय सिक्ख बालिका तथा एक बारह वर्षीय सिक्ख बालक के बीच छोटे से वार्तालाप से होता है.
- प्रथम परिचय में ही लड़का लड़की के प्रेम में पड़ता है.
- एक दिन वही लड़की अपनी सगाई हो जाने की बात लड़के से कहती है. तब लड़के पर मानो आसमान टूट पड़ता है.
- वर्षो बाद लहनासिंह लड़ाई लड़ने जाने वाले सैनिकों में भर्ती हो जाता है.
- 77 रायफल्स में जमादार लहनासिंह लाम पर जाते वक्त सूबेदार के गाँव जाता है.
- वहीं पर लहनासिंह की मुलाकात सूबेदारनी के रूप में सिख बालिका से होती है.
- सूबेदारनी लहनासिंह से वचन लेती है कि वह सूबेदार अर्थात उसके पति और बेटे की युद्धभूमि में रक्षा करे.
- लहनासिंह सूबेदारनी को दिए गए अपने वचन का अपनी जान पर खेल कर भी पालन करता है.
- इस प्रकार यह कहानी प्रेम, त्याग और बलिदान जैसे मूल्यों के धरातल पर खरी उतरती है. साथ ही प्रस्तुत कहानी उदात्त प्रेम की परिचायक बन पड़ी है. 'प्राण जाये पर वचन न जाये' कहावत यहाँ पर सार्थक सिद्ध होती है.

4.8 परीक्षोपयोगी प्रश्नावली

(अ) निम्नलिखित प्रश्न के उत्तर विस्तार से लिखिए

(1) कहानीकला की दृष्टि से 'उसने कहा था' कहानी की समीक्षा कीजिए.

(2) 'उसने कहा था' कहानी की कथावस्तु अपने शब्दों में लिखते हुए उसका उद्देश्य स्पष्ट कीजिए.

(3) लहनासिंह का चरित्रचित्रण कीजिए.

(4) "लहनासिंह का चरित्र प्रेम, त्याग, बलिदान, शौर्य, कर्तव्यनिष्ठा, सतर्कता और वचनपालन का सुंदर उदाहरण प्रस्तुत करता है" -सिद्ध कीजिए.

(5) 'उसने कहा था' कहानी का सारांश लिखते हुए उसके शीर्षक की सार्थकता स्पष्ट कीजिए।

(6) 'उसने कहा था' कहानी में, प्रेम, त्याग, करुणा और बलिदान जैसे मूल्यों का चित्रण हुआ है - तर्क सहित समीक्षा कीजिए.

(ब) रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए

(1) 'उसने कहा था' कहानी का नायक .... है.

(क) लहनासिंह (ग) बोधासिंह

(ख) वजीरासिंह (घ) हजारासिंह

(2) बोधासिंह ....का पुत्र था.

(क) लपटन साहब (ग) लहनासिंह

(ख) वजीरासिंह (घ) हजारासिंह

(3) लड़की जवाब में ....कहकर भाग जाती है.

(क) ना (ग) धत्

(ख) हाँ (घ) कुछ नहीं

(4) लहनासिंह और सूबेदारनी की पहली मुलाकात ....के बाजार में हुई थी.

(क) अजमेर (ग) जयपुर

(ख) अमृतसर (घ) बिहार

(स) निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए.

(1) लहनासिंह का वचन पालन

(2) 'उसने कहा था' कहानी की भाषाशैली

(3) सूबेदारनी के रुप में सिक्ख बालिका

(4) कहानी में वर्णित अमृतसर का बाजार

(5) 'उसने कहा था' कहानी के गौण पात्र

(द) संक्षिप्त में उत्तर लिखिए

(1) लड़की के उत्तर का लड़के पर क्या असर पड़ा?

(2) सूबेदारनी ने लहनासिंह से दामन फैलाकर क्या माँगा?

(3) सूबेदारनी अपने किस दुर्भाग्य को रोती थी?

4.9 उपयोगी पाठ्यसामग्री

- गुलेरी जी की अमर कहानियाँ, गुलेरी, शक्तिधर, (संपादन) सरस्वती प्रेस, बनारस
- क्या 'उसने कहा था' सर्वश्रेष्ठ प्रेम कहानी है? दिल्ली विश्वविद्यालय के अमितेष कुमार का लेख http://gadyakosh.org/gk
- सौ साल की एक कहानी : उसने कहा था . नामवर सिंह https://www.hindisamay.com/content/6881/1/
- हिन्दी कहानी के सौ वर्ष, डॉ वेदप्रकाश अभिताभ
- हिन्दी कहानी अंतरंग पहचान, रामदरश मिश्र
- चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी', मस्तराम कपूर, साहित्य अकादमी

इकाई 5 'शतरंज के खिलाड़ी' – प्रेमचंद

रूपरेखा

5.1 उद्देश्य

5.2 प्रस्तावना

5.3 लेखक परिचय

 5.3.1 जीवन परिचय

 5.3.2 कृतित्व परिचय

5.4 'शतरंज के खिलाड़ी' कहानी का कथासार

5.5 कहानी कला की दृष्टि से 'शतरंज के खिलाड़ी' की समीक्षा

 5.5.1 कथावस्तु

 5.5.2 चरित्र चित्रण

 5.5.3 संवाद

 5.5.4 देशकाल और वातावरण

 5.5.5 भाषा शैली

 5.5.6 उद्देश्य

5.6 सारबिंदु

5.7 परीक्षोपयोगी प्रश्नावली

5.8 उपयोगी पाठ्यसामग्री

5.1 उद्देश्य

विद्यार्थी मित्रो! आप कथासम्राट प्रेमचंद कृत 'शतरंज के खिलाड़ी' कहानी का अध्ययन करेंगे. इस इकाई को पढ़ने के बाद आप –

- मुंशी प्रेमचंद का जीवन परिचय एवं उनके कृतित्व की सामान्य जानकारी प्राप्त कर सकेंगे.
- मुंशी प्रेमचंद की कहानी-कला, भाषा-शैली आदि का परिचय प्राप्त कर सकेंगे.
- 'शतरंज के खिलाड़ी' कहानी की आलोचनात्मक समझ विकसित कर सकेंगे.
- कहानी के प्रमुख चरित्रों का चरित्र चित्रण कर सकेंगे.
- 'शतरंज के खिलाड़ी' कहानी में वर्णित वाज़िद अली शाह के काल की परिस्थितियों से अवगत होंगे.

5.2 प्रस्तावना

इस इकाई के अध्ययन के पूर्व आपने कहानी का सामान्य परिचय प्राप्त किया है. आपको कथासाहित्य के विकास में मुंशी प्रेमचंद के योगदान और लेखन के क्षेत्र की जानकारी है. कोई भी लेखक, चाहे वह कितना ही बड़ा क्यों न हो, अपने युग की उपज होता है. प्रेमचंद ने अपने युग को ठीक-ठीक चित्रित किया है. उन्होंने इसे एक भावुक कलाकार की आँखों और एक गम्भीर विचारक के मस्तिष्क से देखा और अनुभव किया है. उन्होंने अपने कथासाहित्य में रुढ़िग्रस्त किसानों और निम्न-मध्यवर्गों की मानसिक स्थिति का तथा अपने युग की मूल समस्याओं का चित्रण किया है.

प्रस्तुत इकाई में आप प्रेमचंद कृत 'शतरंज के खिलाड़ी' कहानी का अध्ययन करने

जा रहे हैं. यह कहानी मानसरोवर भाग 3 से ली गई है. इस कहानी में प्रेमचन्द ने सामन्तवादी व्यवस्था पर प्रहार किया है. प्रसिद्ध बांग्ला फिल्मकार सत्यजित रे ने इस कहानी के आधार पर इसी नाम से फिल्म भी बनायी है. इसकी कहानी सन् 1855 ई. के अवध नवाब वाज़िद अली शाह के दो जागीरदार मीर रोशन अली और मिरज़ा सज्जाद अली के इर्द-गिर्द घूमती है. ये दोनों खिलाड़ी शतरंज खेलने में इतने व्यस्त रहते हैं कि उन्हें अपने शासन तथा परिवार की भी फ़िक्र नहीं रहती. इसी की पृष्ठभूमि में अंग्रेज़ों की सेना अवध पर चढ़ाई करती है और नवाब वाज़िद अली शाह बंदी बना लिए जाते हैं. लेकिन इतनी बड़ी घटना से भी ये शतरंज के खिलाड़ी सर्वथा निर्लिप्त रहते हैं, जबकि शतरंज के खेल की शह और मात उनके लिए जीवन मरण का प्रश्न बन जाती है. 'शतरंज के खिलाड़ी' महान कथाकार प्रेमचन्द की उत्कृष्ट रचनाओं में से एक है

5.3 लेखक परिचय

5.3.1 जीवन परिचय

प्रेमचंद का जन्म 31 जुलाई सन् 1880 ई. को बनारस के पास एक छोटे से गाँव लमही में हुआ था. उनका असली नाम धनपतराय श्रीवास्तव था. पहले वे नवाबराय नाम से उर्दू में लिखते थे. फिर हिंदी में प्रेमचंद के नाम से लिखना शुरू किया और इसी नाम से अमर हो गए. वे लेखक के नाते तो महान हैं ही, मनुष्य के नाते और भी महान थे. उनकी कला और उनके व्यक्तित्व में अत्यंत निकट का और घनिष्ठ संबंध है. उनके जीवन की कहानी का संक्षिप्त अध्ययन उनकी कृतियों पर बहुत कुछ प्रकाश डाल सकता है.

प्रेमचंद बहुत सीधे-सादे व्यक्ति थे. वे अक्सर खुले गले का खादी का कुर्ता और स्वच्छ किंतु ढीली ढाली धोती पहनते थे. उन्होंने अपने पिता की देखरेख में एक मौलवी से पढ़ना शुरू किया, जो गाँव में एक छोटा-सा स्कूल चलाते थे. वे एक संयुक्त परिवार के सदस्य थे. यह संयुक्त परिवार ही भारतीय समाज-व्यवस्था का आधार है और इसी को उन्होंने अपने उपन्यासों और कहानियों में आदर्श रूप देने का प्रयास किया है. प्रेमचंद मात्र सात वर्ष के थे जब उनकी माता उन्हें छोड़कर इस दुनिया से चल बसीं और पंद्रह वर्ष की अवस्था में उनके पिता का स्वर्गवास हो गया. प्रेमचंद उस समय नौवीं कक्षा के छात्र थे जब उनके पिता की मृत्यु हुई. तब तक उनका विवाह भी हो चुका था और पत्नी के अलावा उन पर विमाता और उनके दो बच्चों के भरण-पोषण का भार भी था. जिम्मेदारियों के बोझ तले अत्यंत गरीबी में उन्होंने अपनी स्कूली शिक्षा पूरी की तथा बी. ए. किया. उन्होंने एक अध्यापक के रूप में नौकरी आरंभ की तथा पन्द्रह वर्षों में अध्यापक से स्कूल के डिप्टी इंस्पेक्टर के पद पर पहुँच गए.

इस पूरे दौर में उनके जीवन में और भी उतार-चढ़ाव आए. पत्नी से अलगाव, बालविधवा शिवरानी देवी से विवाह, श्रीपत, अमृत - दो पुत्रों तथा बेटी कमला का जन्म, नौकरी से इस्तीफ़ा आदि-आदि. परंतु इस सारे घटनाक्रम के बावजूद उनका लेखन चलता रहा. लिखना उन्होंने मैट्रिक्युलेशन के आसपास ही शुरू कर दिया था और लिखने का यह सिलसिला तभी खत्म हुआ, जब मौत ने उनके हाथ से कलम छीन ली. प्रेमचंद की मृत्यु सन् 1936 ई. में हुई. उनकी सादगी, उनकी सहानुभूति, उनकी घोर अहंशून्यता, उनकी खुली ऊँची हँसी, उनका भोलापन- ऐसी सरल सात्विक रेखाओं से उनके व्यक्तित्व का चित्र बना है.

5.3.2 कृतित्व परिचय

प्रेमचंद चाहते तो यश और धन की गलियों में आराम से जीवन गुजार सकते थे. उनके पास कल्पना थी, किस्सा कहने का ढंग था. लेकिन लिखना उनके लिए एक सामाजिक और सांस्कृतिक कर्म था. वे स्वदेश के लिए, स्वदेश की स्वाधीनता के लिए, स्वदेश के जनगण की

मुक्ति के लिए लिखना चाहते थे. उनके लिए कला और साहित्य की परिभाषा अलग थी. 'साहित्य का उद्देश्य' निबंध से उनके इन विचारों को स्पष्टतः समझा जा सकता है. उन्होंने किस्से-कहानी के सरल-सीधे, आजमाए हुए रास्ते को छोड़कर जोख़िम भरा नया रास्ता अपनाया. उन्होंने करीब तीन सौ कहानियाँ लिखी हैं जो 'मानसरोवर' के नाम से आठ भागों में संकलित हैं. 'ईदगाह', 'दो बैलों की कथा', 'बड़े भाई साहब', 'कफन', 'पूस की रात', 'नमक का दारोगा', 'पंच परमेश्वर', 'बूढ़ी काकी', 'ठाकुर का कुआँ', 'बड़े घर की बेटी' आदि महत्वपूर्ण कहानियाँ हैं.

इसके अतिरिक्त उन्होंने कालजयी उपन्यास भी लिखे हैं. – 'सेवासदन' (1918), 'प्रेमाश्रम' (1922), 'रंगभूमि' (1925), 'निर्मला' (1925), 'कायाकल्प' (1927), 'गबन' (1928), 'कर्मभूमि' (1932), 'गोदान' (1935) इसके अलावा उन्होंने कई लेख, नाटक तथा जीवनियाँ भी लिखीं. सन् 1928 ई. में उन्होंने 'माधुरी' का संपादन स्वीकार कर लिया, सन् 1931 ई. से सन् 1934 ई. तक अविच्छिन्न रूप से वे बोझ सहकर घाटे में 'हंस' और 'जागरण' चलाते रहे. प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना में भी उन्होंने अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है.

- **बोध प्रश्न**

(1) 'शतरंज के खिलाड़ी' कहानी में किस शासक के समय को चित्रित किया गया है?

(अ) नवाब वाज़िद अली शाह (ब) अकबर (स) शाहजहाँ (द) हुमायूँ

(2) 'शतरंज के खिलाड़ी' कहानी में किस शहर को चित्रित किया गया है?

(अ) चंडीगढ़ (ब) लखनऊ (स) आगरा (द) दिल्ली

(3) प्रेमचंद का वास्तविक नाम क्या था?

(अ) अमीरचंद (ब) मूलचंद (स) रायचंद (द) धनपतराय श्रीवास्तव

(4) प्रेमचंद की कहानियाँ किस नाम से संकलित हैं?

(अ) मानसरोवर (ब) प्रेमसरोवर (स) कथासरोवर (द) सुरसरोवर

(5) 'शतरंज के खिलाड़ी' कहानी मानसरोवर के किस भाग से ली गई है?

(अ) मानसरोवर भाग 5 (ब) मानसरोवर भाग 8
(स) मानसरोवर भाग 3 (द) मानसरोवर भाग 4

5.4 'शतरंज के खिलाड़ी' कहानी का कथासार

इस कहानी में प्रेमचंद ने वाज़िद अली शाह के समय के लखनऊ को चित्रित किया है. भोग-विलास में डूबा हुआ यह शहर राजनीतिक-सामाजिक चेतना से शून्य था. पूरा समाज भोग-लिप्सा में शामिल था. इस कहानी के प्रमुख पात्र हैं – मिरज़ा सज्जाद अली और मीर रोशन अली. दोनों वाज़िद अली शाह के जागीरदार थे. जीवन की बुनियादी ज़रूरतों की उन्हें कोई फिक्र नहीं थी. दोनों गहरे मित्र थे और शतरंज खेलना उनका एकमात्र शगल था. दोनों की बेगमें थी, नौकर-चाकर थे. समय से नाश्ता-खाना, पान-तम्बाकू आदि उपलब्ध होता रहता था.

एक दिन की घटना है – मिरज़ा सज्जाद अली की बीवी बीमार हो जाती हैं. वह बार-बार नौकर को भेजती हैं कि मिरज़ा हकीम के यहाँ से कोई दवा लाएँ, किन्तु मिरज़ा तो शतरंज में डूबे हुए थे. हर घड़ी उन्हें लगता कि बस अगली बाज़ी उनकी है. अंत में तंग आकर मिरज़ा की बेगम उन दोनों को खरी-खोटी सुनाती हैं. खेल का सारा ताम-झाम ड्योढ़ी के बाहर फेंक देती हैं. नतीजा यह निकलता है कि शतरंज की बाजी अब मिरज़ा के यहाँ से उठकर मीर के दरवाजे पर आ बैठती है. मीर साहब की बीवी शुरू में तो कुछ

नहीं कह पातीं लेकिन जब यह रोज का सिलसिला बन जाता है, तब इन दोनों खिलाड़ियों को मात देने के लिए वह एक नायाब तरकीब निकालती हैं. जैसा कि हमेशा होता था, दोनों मित्र शतरंज की बाजियों में खोए हुए थे कि उसी वक्त बादशाही फौज़ का एक अफसर मीर साहब का नाम पूछता हुआ आ खड़ा होता है. उसे देखते ही मीर साहब के होश उड़ जाते हैं. वह शाही अफसर मीर साहब के नौकरों पर खूब रौब झाड़ता है और मीर के न होने की बात सुनकर अगले दिन आने की बात करता है. इस प्रकार यह तमाशा खत्म होता है. दोनों मित्र चिंतित हैं कि इसका क्या समाधान निकाला जाए.

मीर और मिरज़ा भी छोटे खिलाड़ी नहीं थे. उन्होंने भी गजब का तोड़ निकाला. दोनों मित्र एक बार पुनः स्थान परिवर्तन करके ही माने. न वे घर पर होंगे, न मुलाकात होगी. इधर बेगम आज़ाद हुईं उधर मीर बेपरवाह. नया स्थान था शहर से दूर, गोमती के किनारे एक वीरान मस्जिद. वहाँ लोगों का आना-जाना बिलकुल नहीं था. साथ में ज़रुरी सामान, मसलन हुक्का, चिलम, दरी आदि ले लिए. कुछ दिनों ऐसा ही चलता रहा. एक दिन अचानक मीर साहब ने देखा कि अंग्रेज़ी फौज़ गोमती के किनारे-किनारे चली आ रही थी. उन्होंने मिरज़ा को यह बात बताई. मिरज़ा ने कहा- तुम अपनी चाल बचाओ. अंग्रेज़ आ रहे हैं आने दो. मीर ने कहा - साथ में तोपखाना भी है. मिरज़ा साहब ने कहा- यह चकमा किसी और को देना. इस प्रकार दोनों खेल में खो जाते हैं.

कुछ समय में नवाब वाज़िद अली शाह कैद कर लिए गए थे. उसी रास्ते अंग्रेज़ी फौज़ विजयी भाव से लौट रही थी. पूरा शहर बेशर्मी के साथ तमाशा देख रहा था. अवध का इतना बड़ा नवाब चुपचाप सिर झुकाए चला जा रहा था. सज्जाद और रौशन दोनों इस नवाब के ज़ागीरदार थे. नवाब की रक्षा में इन्हें अपनी जान की बाज़ी लगा देनी चाहिए थी. परंतु दुर्भाग्य यह था कि जान की बाज़ी तो इन्होंने लगाई ज़रूर पर शतरंज के बादशाह को बचाने के लिए.

थोड़ी ही देर बाद खेल की बाज़ी में ये दोनों मित्र उलझ पड़े. बात खानदान और रईसी तक आ पहुँची. गाली-गलौज होने लगी. दोनों कटार और तलवार रखते थे. दोनों ने तलवारें निकालीं और एक दूसरे को दे मारीं. दोनों का अंत हो गया. काश! यह मौत नवाब वाज़िद अली के पक्ष में और ब्रिटिश फौज़ के प्रतिपक्ष में हुई होती. लेकिन ऐसा हुआ नहीं.

5.5 कहानी कला की दृष्टि से 'शतरंज के खिलाड़ी' कहानी की समीक्षा

5.5.1 कथावस्तु

'शतरंज के खिलाड़ी' कहानी में प्रेमचंद अपनी दूसरी तमाम कहानियों से कुछ अलग रचना कौशल के साथ आए हैं. यह उनकी उन थोड़ी-सी कहानियों में है जिसकी बुनावट बहुत घनी और संश्लिष्ट है और उस बुनावट में एक दूसरे से कहीं मिलते-जुलते, कहीं एकदम अलग दो चित्र उभरते हैं. ये चित्र भी आपस में इतने गुँथे हुए हैं कि अलग से इनकी रेखाओं को ठीक-ठीक पहचानना कठिन है. वे बहुत गड्डमड्ड हैं. शतरंज की बाज़ी भी यहाँ एक नहीं दो बिछीं हैं और खिलाड़ी भी मिरज़ा और मीर ही नहीं दूसरे भी हैं. मोहरे और बादशाह-वज़ीर भी दो हैं- एक वास्तविक दुनिया के और एक शतरंज की अपनी दुनिया के. खिलाड़ियों का चरित्र और मिज़ाज भी अलग-अलग है. वास्तविक चित्र को सामने रखकर देखने से ही कहानी की त्रासदी अपनी विडम्बना के साथ सामने आती है. प्रेमचंद जैसा मँझा हुआ कलाकार ही ऐसी गुँथी हुई कहानी लिख सकता है.

कहानी उस समय के लखनऊ की है, जब वहाँ नवाब वाज़िद अली शाह का शासन था. वाज़िद अली शाह, उनकी नवाबी और उनके समय के लखनऊ के बारे में इतिहास की पुस्तकों में आम तौर से जो लिखा गया है, कहानी उसी से बनी समझ को लेकर आगे

बढ़ती है, अर्थात नवाब वाज़िद अली शाह और उनके समय के लखनऊ की विलासिता, ऐय्याशी, नशा, मौज़-मस्ती, दीन-दुनिया से कटकर एक निकम्मा, निष्क्रिय, अकर्मण्य जीवन जीते हुए नवाब और उनकी प्रजा के संक्षिप्त, किन्तु दिलचस्प संदर्भों के साथ. वे लिखते हैं- "वाज़िद अली शाह का समय था. लखनऊ विलासिता के रंग में डूबा हुआ था. छोटे-बड़े, गरीब-अमीर, सभी विलासिता में डूबे हुए थे. कोई नृत्य और गान की मज़लिस सजाता था तो कोई अफ़ीम की पीनक में ही मज़े लेता था. जीवन के प्रत्येक विभाग में आमोद-प्रमोद का प्राधान्य था. ... राजकर्मचारी विषय-वासना में, कविगण प्रेम और विरह के वर्णन में, कारीगर कलाबत्तू और चिकन बनाने में, व्यवसायी सुरमें, इत्र, मिस्सी और उबटन का रोजगार करने में लिप्त थे. सभी की आँखों में विलासिता का मद छाया हुआ था. संसार में क्या हो रहा है, इसकी किसी को खबर न थी. बटेर लड़ रहे हैं, तीतरों की लड़ाई के लिए पाली बदली जा रही हैं. कहीं चौसर बिछी हुई है, पौ-बारह का शोर मचा हुआ है. कहीं शतरंज का घोर संग्राम छिड़ा हुआ है. राजा से लेकर रंक तक इसी धुन में मस्त थे. यहाँ तक कि फकीरों को पैसे मिलते तो वे रोटियाँ न लेकर अफ़ीम खाते या मादक पीते...."

शतरंज की बाजी मिरज़ा साहब के घर लगती थी. सुबह जो बाजी जमी, शाम तक चलती रहती थी. मिरज़ा के नौकर चाकर सब परेशान थे. बेगम सबसे ज्यादा खफ़ा थीं, परंतु मिरज़ा और मीर पर उसका कोई असर न था. उन्हें खाना खाने तक की फुरसत नहीं थी, खाना भी वे खेलते हुए खाते थे. वे शह और मात के नशे में डूबे थे. दुनिया से उन दोनों का सरोकार नहीं था. बड़े चुटीले और रोचक अंदाज में प्रेमचंद ने मिरज़ा और मीर के इस व्यसन पर घरवालों की प्रतिक्रियाएँ दी हैं. बेगम के नाराज होने पर मिरज़ा कहते हैं -

मिरज़ा – "बड़ा लती आदमी है, जब आ जाता है तब मज़बूर होकर मुझे भी बैठ़ना पड़ता है."

बेगम – "दुत्कार क्यों नहीं देते?"

मिरज़ा – "बराबर के आदमी हैं; उम्र में, दर्जे में मुझसे दो अंगुली ऊँचे. मुलाहिज़ा करना ही पड़ता है."

जो काम मिरज़ा नहीं करना चाहते थे, या नहीं होने देना चाहते थे, उसे बेगम साहिबा पूरा करती हैं. झल्लाई हुई वे जाकर बिछी बाज़ी उलट देती हैं. गनीमत है कि मीर बाहर टहल रहे थे. बेगम की त्योरियाँ देख चुपचाप अपने घर की राह लेते हैं. मिरज़ा मीर के घर जाकर बेगम की बदतमीज़ी के लिए माफ़ी माँगते हैं और अब से बाजी मीर के यहाँ जमती है.

मिरज़ा की बेगम जहाँ घर में बाज़ी जमाने से इस नाते खफा थीं कि मिरज़ा उनके प्रति बेहद उदासीन थे, तो मीर की बेगम इस नाते नाराज है कि अब मीर दिन भर घर में रहेंगे. प्रेमचंद की बड़ी व्यंजक टिप्पणी है - "मीर साहब की बेगम किसी अज्ञात कारण से मीर साहब का घर से दूर रहना ही उपयुक्त समझती थीं, इसलिए वह उनके शतरंज प्रेम की कभी आलोचना नहीं करती थीं, बल्कि कभी-कभी मीर साहब को देर हो जाती, तो याद दिला देती थीं. नौकर चाकर इस नाते दुःखी थे कि अब उन्हें वही भाग-दौड़ करनी पड़ती थी, जो कभी मिरज़ा के नौकर किया करते थे."

मीर और मिरज़ा के बारे में इतना सब कुछ बता देने के बाद प्रेमचंद अब उनके दायरे से बाहर आकर, बाहर की दुनिया पर नज़र डालते हैं. – "राज्य में हाहाकार मचा हुआ था. प्रजा दिन-दहाड़े लूटी जाती थी. और कोई फरियाद सुनने वाला न था. देहातों की सारी दौलत लखनऊ में खिंची आती थी और वह वेश्याओं में, भाँड़ों में और विलासिता के अन्य अंगों की पूर्ति में उड़ जाती थी. अंग्रेज कंपनी का ऋण दिन-दिन बढ़ता जाता था. इस तरफ किसी का ध्यान न था. सब विलासिता के रंग में डूबे हुए थे."

मीर के घर शतरंज की बाज़ी बावजूद इसके जमी ही रहती थी. एक दिन नवाब का घुड़सवार उनके दरवाज़े आकर उनके बारे में पूछताछ करता है. नौकर उसे बाहर से ही विदा कर देते हैं, परंतु मीर आशंकित होते हैं. नवाबी सेना को उनके सिपाहियों की दरकार थी. मीर और मिरज़ा, बचने का बेहतर तरीका खोजते हैं कि घरों में रहा ही न जाय. बाज़ी अब, गोमती के किनारे एक इमारत के सूने खंडहर में लगने लगती है.

मिरज़ा की बाजी कमज़ोर थी. मीर उन्हें किश्त पर किश्त दे रहे थे. कम्पनी के घुड़सवारों की फौज़ पास से निकलती है, मीर मिरज़ा को सचेत करते हैं, परंतु किश्त इस बार मिरज़ा ने दी थी. वे मीर से किश्त बचाने को कहते हैं.

मीर फिर कम्पनी की फौज़ की बात करते हैं, पर मिरज़ा उन्हें बख्शने को तैयार नहीं थे. मीर - "आप भी अजीब आदमी हैं. यहाँ तो शहर पर आफत आई हुई है, और आपको किश्त की सूझी है. कुछ दूसरी भी खबर है कि शहर घिर गया तो घर कैसे चलेंगे."

मिरज़ा - "जब घर चलने का वक्त आएगा, देखा जाएगा. यह किश्त. बस अबकी शह में मात है." खेल जारी रहता है.

शाम तक स्थिति यह होती है – "चार का गज़र बज ही रहा था कि फौज़ की वापसी की आहट मिली. नवाब वाज़िद अली पकड़ लिए गए थे और सेना उन्हें किसी अज्ञात स्थान को लिए जा रही थी. शहर में न कोई हलचल थी, न मार काट. एक बूँद भी खून नहीं गिरा था. ...यह वह अहिंसा न थी जिस पर देवगण प्रसन्न होते हैं. यह वह कायरता थी जिस पर बड़े-बड़े कायर भी आँसू बहाते हैं. अवध के विशाल देश का नवाब बंदी बना चला जाता था और लखनऊ ऐश की नींद में मस्त था. यह राजनीतिक अध:पतन की सीमा थी."

आपस की कहासुनी में बात यहाँ तक बढ़ती है कि दोनों ओर से तलवारें निकल आती हैं. प्रेमचंद लिखते हैं - "दोनों विलासी थे, पर कायर न थे. उनमें राजनीतिक भावों का अध:पतन हो गया था ... पर व्यक्तिगत वीरता का अभाव न था." दोनों जख्मी होकर जमीन पर गिर पड़ते हैं और दम तोड़ देते हैं. प्रेमचंद की पुनः टिप्पणी है - "अपने बादशाह के लिए जिनकी आँखों से एक बूँद आँसू न निकला, उन्हीं दोनों प्राणियों ने शतरंज के वज़ीर की रक्षा में प्राण दे दिए." कहानी की विडम्बना यही है.

शतरंज की दो बाजियों का संकेत प्रेमचंद ने इस कहानी में किया है. एक वह जो प्रत्यक्ष है, जो मीर और मिरज़ा ने लगाई थी और दूसरी वह जो हिंदुस्तान की सरजमीं पर बिछी थी - राजनीतिक शतरंज. शतरंज की इस बिसात की व्यंजना कहानी के अंत में आकर खुलती है. राजनीतिक शतरंज में अंग्रेज़ जीत चुके थे, बादशाह बंदी था. हिंदुस्तान ने, अवध ने मात खाई थी. दूसरी बाजी के खिलाड़ी दम तोड़ चुके थे, बाजी बिछी थी. और नकली बादशाह दोनों की मौत पर आँसू बहा रहे थे. उस समय के ऐतिहासिक परिदृश्य के साथ प्रेमचंद ने उसे सुंदरता से प्रस्तुत किया है- "चारों तरफ सन्नाटा छाया हुआ था. खंडहर की टूटी हुई महराबें, गिरी हुई दीवारें और धूल-धूसरित मीनारें इन लाशों को देखतीं और सिर धुनती थीं."

भगवती चरण वर्मा की एक कहानी है - 'मुगलों ने सल्तनत बख्श दी'. उस कहानी में ढहते हुए मुगलिया शासन का यथार्थ सामने आया है. अंग्रेज एक के बाद एक हिंदुस्तान के सूबों पर अपनी प्रभुता स्थापित कर जाते हैं, और मुगल शासक बुजुर्गों के दिए हुए कौल की आड़ में अपनी कायरता छिपाते हैं. 'शतरंज के खिलाड़ी' कहानी में भी ह्रासशील नवाबी शासन की यही परिणति दिखाई गई है.

5.5.2 चरित्र चित्रण

व्यक्तिगत शौर्य, दंभ और मान-अपमान के लिए मर मिटना सामंती चरित्र की बुनियादी

विशेषता रही है. इसी ह्रासशील सामंती व्यवस्था की उपज हैं कहानी के दोनों मुख्य पात्र- मिरज़ा सज्जाद अली और मीर रौशन अली. जिनका परिचय प्रेमचंद ने इस तरह दिया है- "दोनों के पास मौरूसी जागीरें थीं, जीविका की कोई चिंता न थी, घर में बैठे चखौतियाँ करते थे. उनका असली शौक था शतरंज की बाजी लगाना. शतरंज, ताश, गंजीफा - इन खेलों की तरफ उस समय जो रुचि थी, उसके पीछे इन खेलों के आदी लोगों के अपने तर्क थे. इन खेलों से बुद्धि तीव्र होती है, विचार-शक्ति का विकास होता है. अतएव यदि मिरज़ा सज्जाद अली और मीर रौशन अली, अपना अधिकांश समय बुद्धि तीव्र करने में व्यतीत करते थे, तो किसी विचारशील पुरुष को क्या आपत्ति हो सकती थी."

कहानी के दो प्रमुख पात्र मिरज़ा सज्जाद अली और मीर रौशन अली को, जो सांकेतिक रूप से अवध के सामंतवादी कुशासन का प्रतिनिधित्व करते हैं, शतरंज खेलने की लत है। घर-परिवार से उन्हें कोई मतलब नहीं है. ज़ागीरदार होने के कारण दोनों के पास धन की कमी नहीं है, इसलिए उनका जीवन बिना कुछ उद्योग किए आराम से शतरंज की बाजियों में डूबा हुआ है. दिन-रात मिरज़ा के घर पर शतरंज होने के कारण उनकी पत्नी के गुस्सा होने पर मीर साहब कहते हैं - "बड़ी गुस्सेवर मालूम होती है. मगर आपने उन्हें यों सिर पर चढ़ा रखा है यह मुनासिब नहीं. उन्हें इससे क्या मतलब कि आप बाहर क्या करते हैं. घर का इंतजाम करना उनका काम है, दूसरी बातों से उन्हें क्या सरोकार." लेखक ने मिरज़ा सज्जाद अली और मीर रौशन अली के चरित्रों द्वारा प्रभुवर्ग की दिग्भ्रमित मानसिकता का चित्रण किया है.

5.5.3 संवाद

कहानी अपने संवादों में, भाषा के प्रवाह में और कहने के अंदाज में नवाबी मानसिकता के साथ उर्दू-फारसी की सारी ताकत के साथ सामने आई है. यह त्रासद अनुभवों की कहानी है, ह्रासशील सामंतवाद की असलियत को उज़ागर करने वाली कहानी है. शतरंज अंग्रेजों ने भी खेली और हमारे अधःपतित शासकों ने भी. अंग्रेज जीते हिंदुस्तान की जर्जर बादशाहत द्वारा, यह सच्चाई भी कहानी में पूरी तल्खी के साथ उभरी है.

प्रेमचंद ने स्वतः यहाँ जो कुछ कहने योग्य था, कह दिया है और अपनी ओर से वे कुछ भी न कहते तो भी सब कुछ उनके वर्णन से ही स्पष्ट था. मिरज़ा मीर से नवाब की गिरफ्तारी पर अपनी चिंता व्यक्त करते हैं, परंतु मीर उनसे शह बचाना चाहते हैं. मिरज़ा मात खा जाते हैं. बाज़ी शाम तक बिछी रहती है. मिरज़ा बराबर हार रहे थे, मीर उमंग में थे. खेल के दाँव-पेंच को लेकर उनमें बतकही हो जाती है. बात आगे बढ़ती है. उनके बीच जो कुछ कभी नहीं हुआ था, वह होता है. वे गाली-गलौज पर उतर आते हैं.

"मीर - घास आपके अब्बाजान छीलते होंगे.

मिरज़ा - अजी, चलिए. गाज़ीउद्दीन हैदर के यहाँ बावर्ची का काम करते-करते उम्र गुज़र गई, आज रईस बनने चले हैं.

मीर - क्यों अपने बुजुर्गों के मुँह में कालिख लगाते हो?"

प्रस्तुत कहानी के संवाद बहुत ही रोचक, अर्थपूर्ण और सटीक हैं. जिससे कहानी चित्रात्मक बन पड़ी है.

5.5.4 देशकाल और वातावरण

किसी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर आधारित कहानी को गहराई से समझने के लिए, उसके देशकाल, वातावरण से अवगत होना आवश्यक है. शतरंज के खिलाड़ी वाज़िद अली शाह के शासनकाल को चित्रित करती हुई रचना है. प्रेमचन्द का जन्म अंग्रेजों के शासनकाल में सन् 1880 ई. में हुआ तथा मृत्यु सन् 1936 ई. में हुई. यह एक सामन्तवादी युग था, जिसे

अंग्रेजों का प्रश्रय मिला हुआ था. इसके पूर्व भक्तिकाल में जाति-पाँति, छूआछूत, ऊँच-नीच, आडम्बर, कर्मफ़ल आदि सामन्तवादी बुराईयों को समाप्त करने के लिए जो आन्दोलन चला था वह ब्रिटिशराज में अंग्रेजों के सामन्तवाद के साथ अपने लाभ हेतु समझौता करने के कारण कमजोर पड़ गया. अंग्रेजों ने पूँजीवादी व्यवस्था को जन्म दिया, जिसने भारत के उद्योग, धंधों तथा कृषि को अत्यन्त हानि पहुँचाई. 'शतरंज के खिलाड़ी' कहानी में प्रेमचन्द ने सामन्तवादी व्यवस्था पर प्रहार किया है.

प्रेमचन्द के समय उन्नीसवीं सदी के सामाजिक-सांस्कृतिक सुधार के आन्दोलन के रूप में भारतीय नवजागरण का उदय हो रहा था लेकिन ब्रिटिश राज को सामन्तवादी शक्तियों के साथ चलने में ही लाभ दिखाई दिया इसलिए, सामन्तवादी व्यवस्था की समाप्ति के प्रयत्न तथा नवजागरण का आन्दोलन कमज़ोर पड़ गया. अंग्रेजों के शासनकाल में भारतीय शासक सामन्तवादी व्यवस्था के चलते विलासिता और अय्याशी में डूबे रहते थे. जनता में भी निष्क्रियता छाई हुई थी.

'शतरंज के खिलाड़ी' की रचना प्रेमचन्द ने सन् 1924 ई. में की थी, जिसमें वाज़िद अली शाह के शासनकाल की परिस्थितियों के यथार्थ का चित्रण है. कहानी में राजा और प्रजा सभी बटेर-तीतर लड़ाने, चौसर और शतरंज खेलने, अफ़ीम तथा गाँजा पीने में व्यस्त दिखाए गए हैं. प्रजा की आर्थिक स्थिति दयनीय थी. प्रेमचंद ने कहानी में एक स्थान पर लिखा है – "राज्य में हाहाकार मचा हुआ था. प्रजा दिन दहाड़े लूटी जाती थी. कोई फ़रियाद सुनने वाला न था. देहातों की सारी दौलत लखनऊ खिंची चली जाती थी. देश में सुव्यवस्था न होने के कारण वार्षिक कर भी वसूल न होता था." अवध सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक सभी प्रकार से दयनीय स्थिति में था. जैसा कि प्रेमचंद ने लिखा है – "शासन विभाग में, साहित्य क्षेत्र में, सामाजिक व्यवस्था में, कला कौशल में, उद्योग धंधों में, आहार-विहार में, सर्वत्र विलासिता व्याप्त हो रही थी." इस कहानी में तत्कालीन लखनऊ की पृष्ठभूमि का चित्रण किया गया है.

5.5.5 भाषा शैली

यह कहानी नवाबी जमाने की है और पात्र भी उसी परिवेश के हैं, इसलिए भाषा पर उर्दू-फारसी का खूब प्रभाव है; फलतः वह बहुत जीवंत और प्रभावशाली हो गई है. वाज़िद अली शाह लखनऊ और अवध के नवाब थे जिनका शासनकाल सन् 1847 ई. से सन् 1855 ई. तक रहा. इसी समय अंग्रेजों ने भी भारत में शासन किया. यह हिन्दी साहित्य के इतिहास का आधुनिक काल था. जिसके पूर्व रीतिकाल में साहित्य रचना राजदरबारों तक सीमित हो गई थी. इस समय कवियों को राज दरबारों में आश्रय प्राप्त था. जो राजाओं की चाटुकारिता में कविताएँ लिखते थे. रीतिकाल के बाद हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल में खड़ी बोली गद्य का आविर्भाव हुआ. जिसका प्रभाव कहानी में स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है. इस समय के प्रमुख लेखकों में प्रेमचन्द ने सर्वप्रथम यथार्थवाद को अपने उपन्यासों और कहानियों में स्थान दिया. उनका यथार्थवाद तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियों से प्रभावित था. और भाषा शैली भी उसी प्रकार प्रभावित थी.

5.5.6 उद्देश्य

किसी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर आधारित कहानी को गहराई से समझने के लिए, उसके उद्देश्य से अवगत होना आवश्यक है. इस कहानी में लेखक का उद्देश्य सामन्तवादी मानसिकता पर प्रकाश डालना है. देशहित, देशप्रेम और देश की रक्षा, स्वहित और स्वार्थ से ऊपर है. यही इस कहानी को लिखने का उद्देश्य है. प्रेमचन्द ने इस कहानी में पुरुषों की स्त्रियों के प्रति सामन्तवादी मानसिकता पर भी कटाक्ष किया है. मिरज़ा अपनी बेगम के लाख मना

करने पर भी अपनी लत नहीं छोड़ते.

राजनीतिक ऊहापोह के बीच भी मिरज़ा और मीर का शतरंज का खेल उसी प्रकार चलता रहता है, फिर चाहे उन्हें अपनी बिसात घर से दूर वीराने में एक मस्ज़िद के पास ही क्यों ना लगानी पड़ी हो. इस दौरान वाज़िद अली शाह को अपना सिंहासन छोड़ना पड़ा और अवध का शासन ब्रिटिश के हाथों में चला गया पर इन दोनों पात्रों की शतरंज की लत पर कोई असर नहीं पड़ा. अंत में इसी लत ने दोनों मित्रों की आपसी लड़ाई में जान भी ले ली. प्रेमचंद ने साहित्य की दिशा को परिवर्तित कर यथार्थवाद का रूप दिया, जिसमें उन्होंने समग्रता से देश के सम्पूर्ण यथार्थ का चित्रण किया. 'शतरंज के खिलाड़ी' तत्कालीन भारत की परिस्थितियों को चित्रित करती हुई, प्रेमचंद की एक सार्थक कहानी है, जिसमें एक तरफ प्रेमचंद ने विलासिता तथा अय्याशी में डूबे सुप्तप्राय जनजीवन को पुन: जागरूक होने का सन्देश दिया है और दूसरी तरफ रीतिकालीन साहित्य के, समाज से कटे हुए चरित्र का यथार्थवादी लेखन के रूप में एक विकल्प प्रस्तुत करने की चेष्टा भी की है.

5.6 सारबिंदु

- 'शतरंज के खिलाड़ी' महान उपन्यासकार प्रेमचन्द की वाज़िद अली शाह के शासनकाल को चित्रित करती हुई एक उत्कृष्ट रचना है.
- प्रेमचंद के लिए लेखन सामाजिक और सांस्कृतिक कर्म था. वे स्वदेश के लिए, स्वदेश की स्वाधीनता के लिए और जनगण की मुक्ति के लिए लिखना चाहते थे.
- इस कहानी में प्रेमचंद शतरंज की बाजी, बिसात तथा मोहरों को प्रतीक बनाकर राजनैतिक बाजी, बिसात तथा मोहरों की बात करते हैं.
- कहानी की भाषा पर उर्दू-फारसी का प्रभाव है, इसीलिए वह अत्यंत प्रभावशाली बन पड़ी है.
- यह कहना ज़रा भी अनुचित न होगा कि यह कहानी जितनी तत्कालीन राजनैतिक अध:पतन की कथा बयान करती है, उतना ही यह हर युग पर लागू होती है. मीर-मिरज़ा आज भी हमें अपने आस-पास देखने को मिल जाएँगे जो अपनी बाजी जीतने के लिए देश की बाजी लगाने को तैयार हो जाते हैं. कहानी इस तरह प्रत्येक युग के सामंतों पर तीखा प्रहार करती है. यही इस कहानी की प्रासंगिकता है और इसी में इसकी सफलता है.

5.7 परीक्षोपयोगी प्रश्नावली

(अ) रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए

(1) 'शतरंज के खिलाड़ी' की रचना प्रेमचंद ने.........में की थी.

(2) इस कहानी में तत्कालीन..........की पृष्ठभूमि का चित्रण किया गया है.

(3) इस कहानी में प्रेमचंद ने..........व्यवस्था पर प्रहार किया है.

(4) मीर और मिरज़ा को ....खेलने की लत थी.

(5) वाज़िद अली शाह का शासन-काल........से........ तक रहा.

(ब) निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए

(1) 'शतरंज के खिलाड़ी' के प्रमुख पात्र

(2) 'शतरंज के खिलाड़ी' कहानी का देशकाल और वातावरण

(3) शतरंज की बाज़ी

(4) कहानी का अंत

(5) प्रेमचंद के साहित्य में निरुपित समस्याएँ

(स) लघु उत्तरिय प्रश्न

(1) मुंशी प्रेमचंद का जीवन-परिचय लिखिए

(2) 'शतरंज के खिलाड़ी' की कथा संक्षेप में लिखिए.

(3) प्रेमचंद से शतरंज की किन दो बाजियों का संकेत इस कहानी में किया है?

(4) 'फकीरों को पैसे मिलते तो वे रोटियाँ न लेकर अफीम खाते'- कथन जनता की किस अवस्था का सूचक है ?

(5) किस बादशाह को बचाने के लिए मीर और मिरज़ा ने जान की बाजी लगा दी ?

(6) 'शतरंज के खिलाड़ी' कहानी के प्रमुख पात्रों के नाम लिखिए

(द) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

(1) 'शतरंज के खिलाड़ी' की कथावस्तु लिखते हुए उसके उद्देश्य पर प्रकाश डालिए.

(2) 'शतरंज के खिलाड़ी' ह्रासशील सामंतवाद की असलियत को उज़ागर करने वाली कहानी है. युक्तियुक्त चर्चा कीजिए

(3) कहानी कला के आधार पर 'शतरंज के खिलाड़ी' की समीक्षा कीजिए

(4) "यह वह अहिंसा न थी जिस पर देवगण प्रसन्न होते हैं. यह वह कायरता थी जिस पर बड़े-बड़े कायर भी आँसू बहाते हैं". वाक्यांश की ससंदर्भ व्याख्या कीजिए

(5) 'शतरंज के खिलाड़ी' कहानी की प्रासंगिकता पर अपने विचार व्यक्त कीजिए

(6) 'फकीरों को पैसे मिलते तो वे रोटियाँ न लेकर अफीम खाते'- कथन जनता की किस अवस्था का सूचक है?

(7) "यदि मिरज़ा सज्जाद अली और मीर रोशन अली, अपना अधिकांश समय बुद्धि तीव्र करने में व्यतीत करते थे, तो किसी विचारशील पुरुष को क्या आपत्ति हो सकती थी?" वाक्य में रेखांकित अंश का क्या तात्पर्य है?

5.8 उपयोगी पाठ्यसामग्री

- प्रेमचंदः एक विवेचन- डॉ. इंद्रनाथ मदान, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
- प्रेमचंद का कथासंसार- सं. डॉ. बादाम ससह रावत, डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ, डॉ. राजेंद्र कुमार गढ़वालिया, गिरनार प्रकाशन, मेहसाना, गुजरात
- कहानीकार प्रेमचंदः रचना दृष्टि और रचना शिल्प- शिवकुमार मिश्र, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद
- प्रेमचंदः भारतीय साहित्य-संदर्भ- सं. डॉ. निर्मला जैन, वाणी प्रकाशन, दिल्ली
- https://hindividya.com-munshi-premchand-story
- http://www.opiniontandoor.in/shatranj-ke-khilari-samantvadreetikal/
- http://gadyakosh.org/
- https://www.nios.ac.in/media/documents/sechincour/Chapter-19.pdf

इकाई 6 'सिक्का बदल गया' – कृष्णा सोबती

रूपरेखा

6.1 उद्देश्य

6.2 प्रस्तावना

6.3 लेखक परिचय
- 6.3.1 जीवन परिचय
- 6.3.2 कृतित्व परिचय

6.4 'सिक्का बदल गया' कहानी का कथासार

6.5 मुख्य अंशो की व्याख्या

6.6 कहानी कला की दृष्टि से 'सिक्का बदल गया' की समीक्षा
- 6.6.1 कथावस्तु
- 6.6.2 पात्र और चरित्र चित्रण
- 6.6.3 संवाद
- 6.6.4 देशकाल और वातावरण
- 6.6.5 भाषा शैली
- 6.6.6 उद्देश्य

6.7 सारबिंदु

6.8 परीक्षोपयोगी प्रश्नावली

6.9 उपयोगी पाठ्यसामग्री

6.1 उद्देश्य

हिन्दी कहानियाँ और उपन्यास से संबंधित यह छठवीं इकाई है. इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

– कृष्णा सोबती का संक्षिप्त जीवन परिचय, लेखन कार्य तथा उनको मिलने वाले पुरस्कारों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे.

– भाषा और शिल्प विधान के आधार पर 'सिक्का बदल गया' कहानी का विश्लेषण कर सकेंगे. तत्कालीन समय के वातावरण एवं देशकाल से अवगत होंगे.

– 'सिक्का बदल गया' कहानी में वर्णित देश-विभाजन की त्रासदी को समझ सकेंगे.

– देश-विभाजन से टूटते मानवीय मूल्य और संवेदनहीनता के कारण भड़की सांप्रदायिकता और उसके परिणामस्वरूप विभीषिकाओं से परिचित होंगे.

– 'सिक्का बदल गया' कहानी के पात्रों तथा संवादों द्वारा अपनी जमीन तथा अपनों से बिछुड़ने का दर्द महसूस कर सकेंगे.

6.2 प्रस्तावना

कृष्णा सोबती हिन्दी की अत्यन्त प्रतिष्ठित कहानीकार तथा उपन्यासकार हैं. इस इकाई के अगले हिस्से में हम उनकी विचारणीय कहानी 'सिक्का बदल गया' का अध्ययन करने जा रहे हैं. प्रस्तुत कहानी सन् 1948 ई. में रची गयी थी. इस कहानी में लेखिका ने सन् 1947

ई. में घटी देश-विभाजन की ऐतिहासिक, लेकिन मानवीय स्तर पर अत्यन्त हृदय विदारक घटना को अपनी कहानी का आधार बनाया है. उन्होंने विभाजन के समय अपना देश एवं घरबार छोड़ कर जाने की मानवीय पीड़ा का मार्मिक चित्र खींचा है.

विभाजन के समय राजनीतिक, सामाजिक पहलुओं से हट कर मानवीय पहलुओं तथा अपनों से बिछुड़ने के दर्द से जुड़ी संवेदना को कहानी में वाणी दी है. विभाजन पर आधारित कृष्णा सोबती की प्रसिद्ध कहानी 'मेरी माँ कहाँ' और 'सिक्का बदल गया' है. विभाजन पर आधारित अन्य प्रसिद्ध कहानियाँ हैं- अज्ञेय की 'शरणदाता', मोहन राकेश की 'मलबे का मालिक', भीष्म साहनी की 'अमृतसर आ गया', मंटो की 'खोल दो' इत्यादि. भारत विभाजन पर आधारित इन कहानियों की विशेषता है कि ये कहानियाँ बड़ी ही मार्मिकता से इस तथ्य को उजागर करती हैं कि भारत विभाजन की राजनीति से आम आदमी का कोई लेना देना नहीं था लेकिन जब विभाजन हुआ तो सांप्रदायिक हिंसा का शिकार सबसे अधिक यही आम आदमी हुआ. उन्हें न केवल अपना घर- गाँव, रिश्तों को छोड़ना पड़ा बल्कि अपने साथ के लोगों द्वारा ही अपने माँ-बाप, भाई-बहनों की मार-काट, हिंसा और बलात्कार को देखना पड़ा. हर तरफ लूट, आगजनी, हत्या और स्त्रियों से बलात्कार का मंजर था. उन्हें ऐसे हालात से गुज़रना पड़ा कि इंसानियत और मनुष्यता से उनका विश्वास उठ गया. 'सिक्का बदल गया' कहानी खत्म होती इंसानियत और मनुष्य के असहाय हो जाने की कहानी है. यह कहानी सन् 1948 ई. में 'प्रतीक' पत्रिका में पहली बार प्रकाशित हुई थी.

6.3 लेखक परिचय

6.3.1 जीवन परिचय

कृष्णा सोबती का जन्म 18 फरवरी 1925 ई. में पंजाब के गुजरात जनपद (जो अब पाकिस्तान में है) में हुआ तथा मृत्यु 25 जनवरी 2019 ई. में नई दिल्ली में हुई. भारत विभाजन के पहले इनकी पढ़ाई लाहौर में और विभाजन के बाद शिमला तथा दिल्ली में हुई. कुछ समय नौकरी करने के बाद इन्होंने नौकरी छोड़कर अपना सारा जीवन लिखने में ही लगा देने का फैसला लिया. वे सन् 1944 ई. से एकाग्रचित होकर लेखन कार्य में लग गयी थीं.

6.3.2 कृतित्व परिचय

कृष्णा सोबती हिन्दी साहित्य की बहुत ही प्रसिद्ध लेखिका हैं. इन्होंने मुख्य रूप से उपन्यास, कहानी और संस्मरण विधा में रचनाएँ लिखी हैं.

उपन्यास : 'मित्रो मरजानी', 'यारों के यार', 'तिन पहाड़', 'डार से बिछुड़ी', 'जिन्दगीनामा', 'दिलो दानिश', 'सूरजमुखी अंधेरे के', 'ऐ लड़की', 'समय सरगम', 'जैनी मेहरबान सिंह' इत्यादि.

संस्मरण : 'हम हशमत' भाग-1 (1977 ई.), 'हम हशमत' भाग-2 (1999 ई.), 'हम हशमत' भाग-3 (2012 ई.), ये अपने समकालीन साहित्यकारों पर आधारित उनके प्रसिद्ध संस्मरण हैं. 'सोबती एक सोहबत' एवं 'सोबती वैद संवाद' उनके अन्य चर्चित संस्मरण हैं.

पुरस्कार : शलाका सम्मान, मैथिलीशरण गुप्त सम्मान, साहित्य कला परिषद पुरस्कार, कथा चूड़ामणि सम्मान, साहित्य शिरोमणि सम्मान, इत्यादि पुरस्कारों के साथ उन्हें साहित्य अकादमी की सदस्या होने का गौरव भी प्राप्त हुआ है. वर्ष 2017 ई. का ज्ञानपीठ पुरस्कार भी इन्हें प्राप्त हुआ है.

कृष्णा सोबती एक कहानीकार के रूप में भी प्रसिद्ध रहीं. कृष्णा सोबती जी की पहली कहानी 'लामा' है जो सन् 1944 ई. में प्रकाशित हुई. उसके बाद उन्होंने बहुत सारी कहानियाँ

लिखी जो 'बादलों के घेरे में' नामक कहानी संग्रह में संकलित हैं. विषयवस्तु के आधार पर कृष्णा सोबती की कहानियों को हम तीन भागों में बाँट सकते हैं. पहला - विभाजन पर आधारित कहानियाँ, दूसरा - ग्रामीण जीवन से संबंधित कहानियाँ, तीसरा - स्त्री-पुरुष संबंधों पर आधारित कहानियाँ.

6.4 'सिक्का बदल गया' कहानी का कथासार

'सिक्का बदल गया' की कहानी भारत-पाक विभाजन पर आधारित है. 'सिक्का बदल गया' कहानी की नायिका शाहनी चिनाब नदी में तड़के नहाते समय सोचती है कि आज भी नदी की लहरें, सूरज की किरणें, हवा और खेत के पेड़-पौधे रोज की तरह ही हैं लेकिन चारों ओर की नीरवता और खामोशी माहौल को बड़ा भयानक बना रही है. अपने डर को कम करने के लिए अतीत में जाकर वह उस दिन को याद करने लगती है जब वह पचास साल पहले इस गाँव की हवेली में दुल्हन बन कर उतरी थी. वह अपने मन में सोचती है कि तब और आज की उसकी जिन्दगी में कितना फर्क आ गया है. तब उसके बड़े रसूख और धन-दौलत वाले शाह जी और पढ़ा-लिखा जवान विवाहित लड़का था और आज वह मीलों फैले खेतों और बड़ी-ऊँची हवेली में अपने आसामियों के बीच अकेली रह गयी है. वह विभाजन के बाद फैले दंगे-फसाद, आगजनी और मार-काट को नहाने के दौरान न केवल अहसास करती है बल्कि स्वयं को नितान्त अकेली और असहाय भी पाती है. वह भीतर ही भीतर डरती है. अपने भीतर के भय को कम करने के लिए वह अपने पालित बेटे शेरा और उसकी पत्नी हसैना को नहाकर लौटते समय बुलाती है. शेरा उसे मारने के लिए गँड़ासा पास में रखकर बैठा था. शाहनी के बुलाने पर वह डरकर हिल जाता है और गँड़ासा छुपा देता है. गुस्से में अपनी पत्नी हसैना को गाली देकर बुलाता है. शाहनी अपने संदेह को दूर करने के लिए शेरा से पूछती है कि रात को कुल्लूवाल के जाट यहाँ आये थे क्या? शेरा साफ झूठ बोल जाता है कि नहीं आये थे, जबकि शेरा उनसे मिलकर यह वादा कर चुका था कि वह शाहनी को मार डालेगा और धन-संपत्ति आपस में बाँट लेगा.

किन्तु बूढ़ी शाहनी को देख शेरा को अपने वे बुरे दिन याद आ जाते हैं. जब उसकी माँ जैना मर जाती है, तब यह शाहनी ही उसे अपने बेटे जैसा प्यार देकर पालती है. रूठ जाने और न खाने पर शाहनी ही हाथ में दूध का कटोरा थामे उसे दूध पिलाती है. उसे अपनी ममता देती है. शाहनी के उपकारों तले दबा शेरा जब शाहनी की निर्बल बूढ़ी काया और उस पर मंडराते खतरे को देखता है तो उसे हवेली तक छोड़ आने को मजबूर हो जाता है. लेकिन आस-पास के गाँवों में फैलती आगजनी और हत्या की बात वह शाहनी के पूछने पर भी नहीं बताता और न ही शाहनी को आने वाले खतरे के प्रति आगाह करता है.

नहाकर आने के बाद शाहनी हवेली की ड्योढ़ी पर बैठे-बैठे साँझ कर देती है. हवेली खुली थी और उसे लग रहा था जैसे उसका अधिकार आज किसी पर नहीं है, स्वयं पर भी नहीं. भूखी-प्यासी एकदम अकेली बैठी शाहनी को जब रसूली बुलाता है और कहता है कि ट्रकें आ गयीं तो उसे होश आता है कि गाँव छोड़ने का वक्त आ गया. गाँव की स्त्रियाँ आश्चर्य प्रकट करते हुए कहती हैं 'शाहनी ! आज तक कभी ऐसा न हुआ, न कभी सुना. गजब हो गया, अंधेर पड़ गया.' सारा गाँव, सारे आसामी, गाँव के मुल्ला, पटवारी, थानेदार और उसका पाला-पोसा हुआ बेटा शेरा सब खड़े थे उसे विदाई देने के लिए. उसे रोकने वाला हाथ एक भी नहीं था.

शाहनी कभी गाँव भर की मालकिन थी, लेकिन आज वह एकदम अकेली. कोई भी उसका अपना नहीं था. सब यह मान बैठे थे कि 'रब्ब नू एही मंजूर सी.' इसलिए उसे अपना

घर, गाँव, खेत-खलिहान और अपने लोगों को छोड़कर जाना ही होगा! शाहनी के कदम घर से बाहर जाने के लिए उठ नहीं रहे थे. वह हवेली की ड्योढ़ी तक आती तो है, लेकिन उसे लाँघ नहीं पाती. वह पचास साल से इस घर में रह रही थी. पति शाह और बेटे के मर जाने के बाद भी अकेली उसने इसकी रक्षा की थी. थानेदार दाऊद्द खां भी जब शाहनी को इस असहाय और निर्जीव अवस्था में देखता है तो उसे निकाल बाहर करने वाले हाथ रुक जाते हैं. उसके बोल नहीं निकलते. उसे शाहनी का वह समय याद आता है जब शाहजी उसके लिए दरिया के किनारे खेमे लगवा दिया करते थे. उसका एक समय, रुतबा और इज्जत थी. मीलों फैले खेत उसके थे. वह गाँव भर की मालकिन थी. इसके बाद भी शाहनी इतनी सरल और विनयी थी कि वह सबको अपने प्यार-दुलार से बाँध लेती थी. वह थानेदार दाऊद्द की मंगेतर को कनफूल मुँह दिखाई में देती है. उसको बहू जैसा प्यार देती है. वह मस्जिद बनाने और लीग के लिए भी चंदे देती है. उसने कभी धन-दौलत का घमंड नहीं किया. सबको प्यार से अपना बनाया. लेकिन उस दिन शाहनी की हालत यह थी कि उसका कोई भी अपना नहीं था. थानेदार दाऊद्द को शाहनी पर दया आ जाती है. वह शाहनी को बुरे वक्त के लिए सोना-चांदी और नकदी ले लेने की सलाह देता है तो शाहनी कहती है कि 'बच्चा, सोना-चांदी सब तुम लोगों के लिए. मेरा सोना तो एक-एक जमीन में बिछा है. और इससे 'अच्छा वक्त' देखने के लिए क्या मैं जिंदा रहूंगी'.

शेरा शाहनी को जल्द से जल्द ट्रक में बैठा देना चाहता है. थानेदार से बात-चीत के दौरान देर होते देख वह शाहनी के पास आ थानेदार से कहता है कि देर हो रही है. इससे शाहनी चौंक जाती है. उसे और भी आघात लगता है वह रोने-रोने को हो जाती है. आँसू उससे संभल नहीं रहे थे. लेकिन फिर वह अपने को संभालकर सांत्वना देती कहती है कि वह जिस घर में रानी की तरह रही, वहाँ से वह रो-रोकर नहीं बल्कि शान और मान से देहरी लाँघेगी. वह दुपट्टे से सिर ढाँक आँसू भरी आँखों से हवेली को अंतिम बार देखती है. दोनों हाथ जोड़ हवेली को प्रणाम करती है. यही उसका उस अमानत का अन्तिम दर्शन था जिसे उसने पति और बेटे के मरने के बाद भी संभालकर रखा था. उसका बहुत मन करता है कि वह पूरी हवेली को एक बार फिर से घूमकर देख ले. लेकिन वह अपने कमजोर दिल को संभालती है और ट्रक पर बैठने चल देती है. गाँव भर के लोग खड़े थे. गाँव के मुल्ला गाँव भर के लिए आशीष मांगने आते हैं तो आशीष देती शाहनी कहती है 'रब्ब तुहानू सलामत रक्खे बच्चा, खुशियाँ बक्षे...।' अन्ततः शेरा का दिल भी पिघल जाता है. वह भी पैर छूने आता है तो शाहनी आशीष देती हुए कहती है कि 'ओ चाँद तेरे भाग जागे'. और ट्रक चल देते है. रात को शाहनी कैंप में पहुँचकर जब जमीन पर लेटती है और आस-पास के खेतों और गाँवों में बरसते खून को देखती है तो विवश हो स्वीकारती है कि राज पलटा भी खा गया और सिक्का भी बदल गया.

- **बोध प्रश्न**

(1) कृष्णा सोबती को किस वर्ष का ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त हुआ है?

(अ) 2017 (ब) 2018 (स) 2016 (द) 2019

(2) कृष्णा सोबती की भारत विभाजन पर आधारित कहानी कौन-सी है?

(अ) 'लामा' (ब) 'ए लड़की' (स) 'सिक्का बदल गया' (द) 'दिलो दानिश'

(3) प्रस्तुत कहानी किस वर्ष रची गयी थी?

(अ) 1980 (ब) 1948 (स) 1945 (द) 1947

(4) कृष्णा सोबती की पहली कहानी कौन-सी है?

(अ) 'लामा' (ब) 'ए लड़की' (स) 'सिक्का बदल गया' (द) 'दिलो दानिश'

(5) 'सिक्का बदल गया' कहानी किस कहानी संग्रह से ली गई है?

(अ) 'बादलों के घेरे' (ब) 'जिंदगीनामा' (स) 'डार से बिछुड़ी' (द) 'यारों के यार'

- **रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए**

(1) शाहनी पिछले ..... से यहाँ नहाती आ रही है.

(2) जैना के मरने के बाद शेरा ..... के पास ही पलकर बड़ा हुआ.

(3) शाहनी ने दुपट्टे से सिर ढाँक कर अपनी धुंधली आँखों से ..... को अन्तिम बार देखा.

(4) शेरा इन पिछले दिनों में ..... कत्ल कर चुका है.

(5) राज पलटा भी खा गया और .... भी बदल गया.

6.5 मुख्य अंशों की व्याख्या

"कौन नहीं है आज वहाँ? सारा गाँव है, जो उसके इशारे पर नाचता था कभी. उसकी असामियाँ हैं जिन्हें उसने अपने नाते-रिश्तों से कभी कम नहीं समझा. लेकिन नहीं, आज उसका कोई नहीं, आज वह अकेली है! यह भीड़ की भीड़, उसमें कुल्लूवाल के जाट. वह क्या सुबह ही न समझ गयी थी?''

संदर्भ: प्रस्तुत गद्य अंश 'सिक्का बदल गया' कहानी से लिया गया है. इस कहानी की लेखिका कृष्णा सोबती हैं. कहानी के इस अंश में भारत-विभाजन के बाद मनुष्य के सामने पैदा हुई उन दु:खद स्थितियों को दर्शाया गया है जिसमें वह एकदम अकेला पड़ जाता है. शाहनी की स्थिति ऐसी ही है.

व्याख्या: 'सिक्का बदल गया' कहानी में विभाजन के बाद इंसान के नि:सहाय पड़ जाने की स्थिति को शाहनी के माध्यम से बहुत ही यथार्थ तरीके से दर्शाया है. विभाजन के बाद शाहनी को न केवल बाहरी कुल्लूवाल के लोग पाकिस्तान से हिन्दुस्तान भेज देने के लिए तैयार थे, बल्कि उसके अपने गाँव घर के लोग भी इस कार्यवाही में शामिल थे. जिस गाँव की कभी वह मालकिन थी. जिसने गाँव के सभी लोगों को अपना परिवार और घर माना. बड़े मन से प्यार किया. वे ही लोग विभाजन के बाद पराये हो गये थे. गाँव के लोग और उसका पाल-पोसकर बड़ा किया हुआ बेटा शेरा भी कल्लूवाल जाटों के साथ मिलकर उसके जाने का इंतजार करता है. मानवीय प्रेम इतना ख़त्म हो गया था कि कोई भी उसे रोक लेने या उसकी जान-माल की हिफ़ाजत करने को तैयार नहीं था. सब उसके भागने का तमाशा देख रहे थे. भगा देने में शरीक थे और उसके चले जाने के बाद सोना-चांदी और नकदी लूट लेने और मिलकर बाँट लेने के इंतजार में थे. अपने के पराये हो जाने के कारण शाहनी भरे-पूरे गाँव में एकदम अकेली और असहाय हो जाती है.

विशेष : वाक्य छोटे और सारगर्भित हैं. भाषा सरल और खड़ी बोली हिन्दी है, जो पंजाबी का स्वाद लिए हुए है. विभाजन के बाद प्रेम और इंसानियत के ख़त्म हो जाने को इस गद्यांश में बहुत ही मार्मिक तरीके से व्यक्त किया गया है.

- **निम्नलिखित गद्यांशों की व्याख्या कीजिए**

(1) 'शाहनी! ड्योढ़ी के निकट जाकर बोला 'देर हो रही है शाहनी. (धीरे से) कुछ साथ रखना हो तो रख लो. कुछ साथ बाँध लिया है? सोना-चांदी'

(2) 'सोना-चांदी. बच्चा वह सब तुम लोगों के लिए हैं. मेरा सोना तो एक-एक जमीन में बिछा है'.

(3) 'शाहनी ने कपड़े पहने, इधर-उधर देखा, कहीं किसी की परछाई तक न थी. पर नीचे रेत में अगणित पांवों के निशान थे. वह कुछ सहम-सी उठी'.

6.6 कहानी कला की दृष्टि से 'सिक्का बदल गया' की समीक्षा

6.6.1 कथावस्तु

'सिक्का बदल गया' कहानी शाहनी के माध्यम से यह दर्शाती है कि विभाजन के दौरान कैसे इंसान, इंसान न होकर अपने लोग और दूसरे (काफिर) लोगों में बँट गये थे. मानवता, दयालुता की जगह इंसान पर हैवानियत चढ़ गयी. माँ, बहन, परिवार, पड़ोस का रिश्ता भुलाकर हर इंसान हिन्दू और मुसलमान में बँट गया था. इस अलगाव का ही परिणाम था कि शाहनी जिस अनाथ बच्चे शेरा को माँ का दुलार और पाल-पोसकर बड़ा करती है, वही कुल्लूवाले जाटों के साथ मिलकर बूढ़ी, निर्बल, अकेली शाहनी को 'मार डालने का वादा' करता है. वह इतना निर्दयी और कातिल बन जाता है कि वह तीस-चालीस हिन्दू लोगों का कत्ल कर देता है. वह इतना लालची और धर्मान्ध हो जाता है कि इस बात को भी भूल जाता है कि एक हिन्दू स्त्री ने उसे पाल-पोसकर बड़ा किया है. वह उस स्त्री शाहनी को भी मारने के लिए गँड़ासे में धार लगाकर रखता है. नहाकर लौटती शाहनी जब उसे आवाज देती है तो मारने न मारने के द्वंद्व के बीच फँसे शेरा को जबरदस्त गुस्सा आता है. शाहनी के उपकारों तले दबा शेरा उसे मारने के लिए गलत तर्क देता है कि 'हमारे ही भाई-बन्दों से सूद ले-लेकर शाहजी सोने की बोरियाँ तोला करते थे. प्रतिहिंसा की आग शेरा की आँखों में उतर आती है. गँड़ासे की याद हो आती है'. लेकिन फिर शाहनी के हाथ उसकी आँखों में तैर जाते हैं. वह सर्दियों की रातें कभी-कभी शाह जी की डांट खा के वह हवेली में पड़ा रहता था. और फिर लालटेन की रोशनी में वह देखता है, शाहनी के ममता भरे हाथ दूध का कटोरा थामे हुए 'शेरे-शेरे, उठ, पी ले।'... इसके बाद उसे स्वयं पर आश्चर्य होता है कि वह कैसे उसे मारने का सोच बैठा. विभाजन ने उसको इतना असंवेदनशील बना दिया था कि वह चाहता था कि शाहनी जल्दी से हवेली छोड़कर ट्रक में बैठकर चली जाय. इधर शाहनी उस दिन सुबह से ही बदली स्थितियों को महसूस करती है लेकिन वह मानना ही नहीं चाहती थी कि उसे भी अन्य हिन्दू लोगों की तरह यह गाँव छोड़कर जाना पड़ सकता है. वह सब कुछ जानती थी. यहाँ तक कि वह यह भी जानती थी कि उसे मार डालने और हवेली को लूट लेने का फैसला भी लिया जा चुका है. जाने का समय आ गया था. अनजान बनी साहनी तब एकदम से स्तब्ध हो जाती है जब थानेदार दाऊद खां उसे गाड़ी में बैठने के लिए कहता है. उसे अपना घर-गाँव, खेत-हलिहान, हवेली और वह सब कुछ जिससे उसे प्रेम है, जिसमें उसका जीवन रचा-बसा है, उसे छोड़कर जाना पड़ेगा, इसका उसे विश्वास ही नहीं होता. उसे विश्वास नहीं होता कि 'सिक्का बदल गया' है. अब तक जिनके साथ, जिनके बीच मालकिन की हैसियत से रहती आई है आज वे सब यहाँ के हैं, तो वह ही यहाँ की क्यों नहीं रही? उसका घर, उसके मीलों फैले खेत, उसके आसामी जिन्हें वह परिवार जैसा मानती थी, वे सब कैसे एकाएक गैर हो सकते हैं? उसे अब भी विश्वास था कि उसे अपना घर-गाँव नहीं छोड़ना पड़ेगा. अकेली, निस्सहाय और बूढ़ी हो चुकी शाहनी को लोग नहीं जाने देंगे शायद रोक लेंगे! स्वयं पाठक भी जब कहानी को पढ़ता है तो वह भी शाहनी की बुरी स्थितियों से इतना द्रवित हो जाता है और वह स्वयं भी सोचने लगता है कि काश शाहनी को लोग या शेरा रोक ले! उसे जाने न दे, अन्यथा लोगों का इंसानियत से भरोसा उठ जायेगा. लेकिन ऐसा नहीं होता और शाहनी को जाना पड़ता है. यह घटना कहानी की मजबूती को बताती है फिर भी कृष्णा जी शाहनी के दम पर ही इंसानियत को बचाने में सफल होती

हैं. शाहनी की जिंदगी में कुछ नहीं बचा था, फिर भी वह सद्भावना और प्रेम का दामन नहीं छोड़ती है.

स्वयं दाऊद खां को ही नहीं बल्कि गाँव की बड़ी-बूढ़ी स्त्रियों को भी उस निर्जीव-सी शाहनी को देखकर दया आती है. वे सब शाहनी के बारे में चिंतित हैं. उनका चिंतित होना असल में शाहनी की अच्छाइयों और अच्छे व्यक्ति के जीवन में अकारण आये बुरे दिनों के बारे में सोचना है. दाऊद खां बताता है कि शाहनी का एक समय था जब दरिया के किनारे उसके लिए खेमे लग जाते थे. अकूत धन-संपत्ति की मालकिन होते हुए भी उसने हर व्यक्ति से अपनेपन का नाता जोड़ा है. अनाथ मुसलमान बच्चे शेरे को बेटे जैसा पालती है, उसकी पत्नी को अपनी बहू मानती है. उसके अपने घर के सभी लोग मर गये थे. उसका कोई रक्त संबंधी नहीं था इसलिए उसके आसामी, गाँव के लोग ही उसके परिवार थे. वह न केवल सभी धर्म के व्यक्तियों को अपना मानती थी, बल्कि मजहबी पार्टियों और हर मजहब के कामों में भी आर्थिक सहयोग देती थी. वह 'लीग' को चन्दा देती है तो मस्जिद बनाने के लिए भी मुँह मांगा पैसा देती है. वह दयालु, सरल स्वाभाव की ऐसी स्त्री है कि जहाँ रहती है वहाँ के लोग उसके अपने हो जाते हैं. जिस घर और धरती पर रहती है वही उसके लिए नकदी और सोना-चांदी हैं. इसीलिए जब उसे अपने घर से निकलना पड़ता है तो वह सोचती है कि वह क्या ले जाये. अन्ततः वह अपने सबसे बुरे दिनों में भी अपने लिए कुछ भी लेने से इंकार कर देती है और सारी धन-दौलत को उन लोगों के लिए छोड़ देती है, जिनके बीच वह जीवन महसूस करती है. वह कहती है - "सोना-चांदी,. बच्चा वह सब तुम लोगों के लिए हैं. मेरा सोना तो एक-एक जमीन में बिछा है". यह वाक्य शाहनी का अपने समूचे परिवेश और लोगों के प्रति गहन प्रेम को बताता है. यदि यह जमीन नहीं, वे लोग नहीं है, जिनके लिए वह जीती है तो फिर जीवन में क्या है? किसके लिए सोना-चांदी और नकदी! या यह कहें स्वयं शाहनी के जीवन जीने का अर्थ क्या है?

अन्ततः वह टूटकर अपने घर से निकलती है, लेकिन स्वाभिमानी मालकिन की तरह जी कड़ा कर हवेली को अन्तिम प्रणाम कर हाथ जोड़ती है और ट्रक में बैठने के लिए चल पड़ती है. ट्रक में बैठकर अनजान भारत देश की ओर शाहनी का चल निकलना विभाजन के बाद हिन्दू और मुसलमान लोगों द्वारा भोगी उस विपदा को बताता है जिसमें अपने लोग पराये ही नहीं बल्कि लुटेरे और हत्यारे बन जाते हैं. शाहनी के माध्यम से कृष्णा सोबती यह बताती हैं कि शाहनी जिसने किसी का बुरा नहीं किया है. उस बूढ़ी, कमजोर, विधवा स्त्री को भी शेरा ही नहीं बल्कि गाँव का कोई भी व्यक्ति, उसका एक भी आसामी उसकी मदद के लिए या उसे रोकने के लिए या पनाह देने के लिए तैयार नहीं होता है. वे लोग जिनकी उसने ताउम्र मदद की, अपना बेटा-बहू माना घर-परिवार जैसा प्रेम और दुलार दिया, वे लोग भी उसे हिन्दुस्तान जाती ट्रक में जल्द से जल्द बिठा देना चाहते हैं. क्या वे सब सचमुच में लाचार, बेबस थे? या सबके मन में लोभ और अलगाव भर गया था? जाती शाहनी को देखकर गाँव भर के लोगों के गले में जैसे धुँआ उठ रहा था. सब रो रहे थे. सब मान भी रहे थे कि शाहनी के मन में हम लोगों के लिए जरा भी मैल नहीं है, फिर भी वे मिलकर बूढ़ी, कमजोर शाहनी को रोक नहीं पा रहे थे. यह त्रासदी है इस कहानी की! और शाहनी की भी! यह ऐसी त्रासदी या दुखद घटना है जो पाठक को यह सोचने पर मजबूर कर देती है कि शाहनी जैसे नेक इंसान को ऐसा दिन क्यों देखना पड़ा?

6.6.2 पात्र और चरित्र चित्रण

शाहनी इस कहानी की मुख्य पात्र शाहनी हैं. शाहनी के अतिरिक्त इस कहानी में शेरा और थानेदार दाऊद खां महत्वपूर्ण पात्र हैं. गौण पात्रों में शेरा की पत्नी हसैना, बेगू पटवारी,

मसीत के मुल्ला इस्माइल और अन्य पात्रों में गाँव के छोटे-बड़े, बच्चे, बूढ़े, मर्द, औरतें हैं. यह पात्र न केवल कहानी के विकास में अपितु शाहनी के चरित्र निर्माण में भी बहुत अधिक सहायक बने हैं. इन पात्रों के सहारे लेखिका ने कथा का ऐसा ताना-बाना बुना है कि पूरे गाँव के लोग ही कथा के पात्र लगते हैं.

इस कहानी में शाहनी का चरित्र अविस्मरणीय है. गाँव में मीलों फैले खेत उसके अपने हैं, लेकिन उसमें अमीरी या जमींदारी का कहीं घमंड और निर्ममता नहीं है. कहानी में जितने भी पात्र आये हैं सब उसके देनदार हैं. उसने न तो किसी को सताया है न ही किसी से बैर का भाव रखा है. उसने सबके दिलों को अपनी दया और प्रेम से जीता है. दाऊद खां जब अकड़कर शाहनी को घर से निकाल बाहर करने के लिए आता है तो उसे शाहनी का अच्छा समय और अपने साथ किये गये अच्छे व्यवहार की याद आ जाती है. शाहनी एक ऐसी मालकिन के रूप में गाँवभर के सामने आती है, जो सचमुच में सबके दुख-सुख में शरीक होती है, और उनकी मददगार के रूप में आती है. वह हर राजनीतिक पार्टी और धर्म को मानने वालों को समभाव से चंदा देती है. वह हर व्यक्ति की मदद करती है. सबसे मिलजुल रहती है. वह गाँव में मालकिन की हैसियत से नहीं बल्कि परिवार की तरह रहती है और उन्हीं के बीच ही अपना जीवन महसूस करती है. इसीलिए गाँव के लोग ही उसका अपना परिवार हैं, और गाँव की माटी ही उसका अपना घर है. वह अपने पति और पुरखों का बहुत सम्मान करती है. एक भारतीय नारी की तरह उसने अपने घर की मर्यादा और अर्जित संपत्ति को बर्बाद नहीं किया उसे बचाये रखा है. उसकी दयालुता और नेकी को याद कर गाँव भर के लोग उसके जाने पर रोने लगते हैं. विभाजन के दौरान तीस-चालीस कत्ल कर देने वाला शेरा भी अगर शाहनी की आवाज से डर जाता है तो इसलिए नहीं डर जाता कि वह गाँव भर की मालकिन या बड़ी ताकतवर स्त्री है, बल्कि उसे डर उसके प्रेम और ममत्व से लगता है. वह उसे जब भी मारने के लिए सोचता है तो उसे अपना निरीह, अनाथ बचपन और शाहनी के ममता में डूबे दूध भरे कटोरे वाले हाथ याद आते हैं. शाहनी की ममता के आगे खूनी शेरा का दिल भी टूट जाता है. वह उसे चाहकर भी मार नहीं पाता है. बूढ़ी और दुर्बल शाहनी की ममता ऐसी है कि एक मजबूत कातिल भी उसके आगे हार जाता है. शेरा को छोड़कर कहानी में अन्य जो भी पात्र आये हैं, वे सब नेक और शाहनी से प्रेम करने वाले हैं. इसीलिए गाँव भर के लोग शाहनी के जाते समय उसके पीछे हो लेते हैं. उसके सद्गुणों और उपकारों को याद करते हैं. उससे आशीर्वाद लेते हैं. बड़े-बूढ़े, औरत-मर्द बच्चे सब उसके लिए रो रहे हैं. इस तरह शाहनी का चरित्र बहुत ही मजबूत, दयालु और अच्छा है.

कहानी के महत्वपूर्ण पात्रों में से एक शेरा है. माँ जैना के मर जाने पर शाहनी ने ही उसे पाल-पोस कर बड़ा किया. वह शाहनी के उपकारों तले दबा है. जब विभाजन होता है तो वह सारे उपकार भूल जाता है. वह हिन्दुओं की हत्या करने में लग जाता है. यही नहीं वह कुल्लूवाल के जाटों के साथ मिलकर न केवल शाहनी की हवेली लूट लेने की योजना बनाता है बल्कि शाहनी को भी मार डालने के लिए तैयार हो जाता है. वह ऐसा कमजोर और लालची पात्र के रूप में हमारे सामने आता है जिसके लिए मानवीय मूल्य और परोपकार का कोई मतलब नहीं. वह केवल और केवल मुसलमान बन जाता है. जिसका एकमात्र धर्म दूसरे धर्म के हिन्दुओं की हत्या करना और उन्हें लूटना आदि बन गया है. वह मजबूत शरीर का गुस्सैल और लोभी है. लेकिन उसके भीतर की मानवीयता पूरी तरह मरी नहीं है, इसीलिए वह शाहनी की हत्या कर पाने में स्वयं कमजोर पड़ने लगता है. तभी तो जाती हुई शाहनी को देखकर 'खूनी शेरे का दिल भी टूट जाता है'. वह ट्रक पर से जाती हुई शाहनी के पाँव छूता है.

6.6.3 संवाद योजना

'सिक्का बदल गया' कहानी में पात्रों की संख्या कम है और उनमें आपसी संवाद की स्थितियाँ भी अधिक नहीं है. इसका कारण यह है कि कहानी के अधिकांश हिस्से में पात्र स्वयं अपने और दूसरे के बारे में मन में ही सोचते रहते हैं. जो बताने वाली बातें हैं वे भी वे परिस्थितिवश नहीं बता पाते हैं. छिपा लेना ही बेहतर समझते हैं. शाहनी अपने अन्दर के डर और दुःख को केवल महसूस करती है, किसी से कह नहीं पाती है. कौन है जिससे कहे? शेरा भी शाहनी को मार डालने और लूट लेने की बात अपने मन के भीतर रखने के लिए मजबूर है. थानेदार दाऊद खां और गाँव के सभी लोग शाहनी के परोपकार को अपने मन में ही याद करते हैं. शाहनी की दयनीय दशा को किसी से बयान नहीं कर पाते हैं, केवल अपने भीतर महसूस करते हैं. पात्रों की मनोदशाओं का ज्यादातर वर्णन लेखिका पात्रों की मनःस्थितियों के माध्यम से उनसे ही कहलवाती है. इसलिए इस कहानी में पात्रों के बीच संवाद कम, स्वगत कथन अधिक हैं. पात्र वर्तमान या अतीत में जाकर स्वयं अपने या अन्यों के बारे में कथन कहते हैं. आमने-सामने संवाद की स्थितियाँ कम हैं, लेकिन जहाँ हैं उन संवादों में नाटकीयता और भावुकता है. उदाहरण के तौर पर शाहनी और दाऊद खां का एक संवाद है -'शाहनी! ड्योढ़ी के निकट जाकर बोला 'देर हो रही है शाहनी. (धीरे से) कुछ साथ रखना हो तो रख लो. कुछ साथ बांध लिया है? सोना- चाँदी' शाहनी अस्फुट स्वर से बोली 'सोना- चाँदी' जरा ठहरकर सादगी से कहा 'सोना- चाँदी' बच्चा वह सब तुम लोगों के लिए है. मेरा सोना तो एक-एक जमीन में बिछा है'. यह संवाद छोटा है. इसमें वाक्य छोटे-छोटे और शब्द भी बहुत सरल हैं, लेकिन भावना और अर्थगंभीरता की दृष्टि से यह संवाद बहुत ही गंभीर और भावुक बना देने वाले हैं. दिल में घुस जाने वाले ऐसे संवादों के कारण इस कहानी के संवाद पाठकों को याद रह जाते हैं.

6.6.4 देशकाल और वातावरण

इस कहानी में आया समय 15 अगस्त 1947 ई. के बाद के भारत विभाजन का है. कहानी में देश विभाजन के बाद पंजाब का वह भाग चित्रित है जो विभाजन के बाद पाकिस्तान में रह गया था. इसलिए वहाँ रह रहे हिन्दुओं को भगाया, लूटा और मारा- काटा जा रहा था. यह कहानी पंजाब के चिनाब नदी के किनारे बसे एक गाँव में रह रही बूढ़ी स्त्री की उस दयनीय हालत को बता रही है जो विभाजन के बाद उसे भोगनी पड़ती है. कहानी का वातावरण ठेठ ग्रामीण है. आमतौर पर यह मान लिया जाता है कि गाँव के लोग शहरी लोगों की तुलना में सीधे-सरल और लोगों की मदद करने वाले होते हैं. यह कहानी इस भ्रम को तोड़ती है और साबित करती है कि भारत विभाजन के दौरान साम्प्रदायिकता की धार इतनी तेज थी कि स्वयं गाँव के लोग भी इससे अछूते नहीं रहे. वे हिन्दू-मुसलमान पहले थे, बाकी सारे संबंध पीछे हो गये थे. उनमें लालच और बेईमानी वैसे ही भर गई थी जैसे शहरों के लोगों में पाई जाती है. ऐसा नहीं होता तो शेरा क्यों शाहनी को मारकर सामान बाँट लेने की साजिश रचता. इस कहानी में लेखिका मानवीय संवेदना को न केवल पात्रों और उनकी मनःस्थितियों के माध्यम से बताती है बल्कि उन्हें जिस वातावरण में रखती हैं वे सब भी उसकी संवेदना का अंग बन उनके मनोभावों और विचारों को अधिक प्रगाढ़ बनाने का काम करते हैं. जैसे 'शाहनी ने कपड़े पहने, इधर-उधर देखा, कहीं किसी की परछाँई तक न थी. पर नीचे रेत में अगणित पाँवों के निशान थे. वह कुछ सहम-सी उठी'. ये पंक्तियाँ यह बताती है कि बहुत सारे लोग यहाँ से गुजरे तो हैं लेकिन वे सुबह के उजाले में दिखाई नहीं दे रहे हैं. तो आखिर वे गये कहाँ? कुछ तो डरावनी बात है? कहानी के शिल्प विधान में यह वातावरण कहानी में अलंकरण के तौर पर नहीं बल्कि संवेदना का अंग बनकर आता है इसीलिए वह शाहनी के डर और आशंका

को और अधिक बढ़ाने का काम करता है. पूरी कहानी का वातावरण बंधा-बंधा, घुटा- घुटा, खामोश तथा सूनसान है जो पात्रों की मन:स्थितियों और कहानी की कथा संवेदना को और अधिक प्रभावी बनाने का काम करता है.

6.6.5 भाषा शैली

कृष्णा सोबती की इस कहानी की भाषा की अपनी अलग पहचान है. पंजाबी परिवेश होने के कारण वह पंजाबी भाषा का स्वाद लिए हुए है. जैसे 'अन्न-जल उठ गया. वह हवेली, नई बैठक, ऊँच्चा चौबारा, बड़ा 'पसार' एक-एक करके घूम रहे हैं शाहनी की आँखों में.' चौबारा और 'पसार' ऐसे ही शब्द हैं. उपरोक्त उदाहरण यह भी बता रहें हैं कि इस कहानी में वाक्य छोटे, सरल और कसे हुए हैं. जो पात्र के भाव को अभिव्यक्त करने में समर्थ हैं. यह प्रसंग के अनुकूल एवं कविता की लय भी लिए हुए हैं. इस कहानी में हिन्दी, उर्दू और पंजाबी का बहुत ही सटीक प्रयोग हुआ है. अंग्रेजी के एकाध प्रचलित शब्द ही प्रयोग हुए हैं. ग्रामीण परिवेश के मुहावरे और लोकोक्तियों का भी प्रयोग अवसरानुकूल हुआ है. जैसे – शाहनी मन में मैल न लाना. कुछ कर सकते तो उठा न रखते! वक्त ही ऐसा है. राज पलट गया है, 'सिक्का बदल गया है...' यह कहानी शाहनी के जिस आशंका और डर से शुरू होती है आखिर में उसकी आशंका और भय को लेखिका एक परिणति तक पहुँचाती है. वह जिस चीज को बरजतीं हैं, अपने को बचाती है, मानना नहीं चाहती लेखिका उससे उसको रु-ब-रु करवाती है, मनवाती है लेकिन उसके स्वाभिमान को तोड़ती नहीं. कहानी की शुरुआत से लेकर आखिर तक-मालिक से बहिष्कृत हो जाने वाली परिस्थितियों में भी-वह न तो कमजोर पड़ती है और न ही इंसानियत और अपनेपन का दामन छोड़ती है. लेखक ने पूरी कहानी के निर्वाह के लिए जिस ढाँचे को चुना और भाषा से उसकी जो काया निर्मित की उस में कहीं भी कोई छल और झोल नहीं है. पाठक जैसे-जैसे कहानी को पढ़ता जाता है वैसे - वैसे उसमें डूबता जाता है. कहीं भी उसे व्यवधान महसूस नहीं होता. आखिर तक पढ़ने के बाद उसके मन में बस यही सवाल उठता है कि शाहनी जैसे लोगों के साथ ऐसा नहीं होना चाहिए. यह भाव उसे अनजाने ही सांप्रदायिकता के विरोध में और मानवीयता के समर्थन में खड़ा कर देता है.

6.6.6 उद्देश्य

सत्ता बदल जाने, असहनीय दु:ख झेले जाने और अपनों का हत्यारा बन जाना आदि देखने के बावजूद शाहनी का चरित्र इतना उदार और महान है कि वह अब भी इंसानियत का दामन नहीं छोड़ती है. ट्रक में बैठकर जाते हुए भी वह अपनों को आशीष दे जाती है कि 'रब्ब तुहानू सलामत रक्खे बच्चा, खुशियां बख्शे...।' यही नहीं वह अपनी हत्या की साजिश रचने वाले बेटे शेरा को अब भी अपना चाँद कहती है और उसके दिन फिरे का आशीर्वाद देती है- 'ओ चाँद, तेरे भाग जगे' वह यह भी जानती है कि उसके जाने के बाद शेरा ही उसकी संपत्ति का भोग करेगा. फिर भी वह उसे प्यार और आशीर्वाद ही देती है. उससे ईर्ष्या नहीं करती. विभाजन पर आधारित मोहन राकेश की कहानी 'मलबे का मालिक' का गनी मियाँ भी शाहनी की तरह ही रक्खा पहलवान को जो उसके बेटे, बहू और पोतियों का कातिल है की बदी माफ कर उसकी सलामती की दुआ करता है. इस कहानी में कृष्णा सोबती जी भी शाहनी के माध्यम से यह संदेश देती हैं कि जो विभाजन मानवीयता और इंसानियत के खत्म हो जाने का पर्याय बन गयी थी. उसमें शाहनी जैसे कुछ ऐसे भी भुक्तभोगी हैं जो सारी हैवानियत को देखने-समझते ही नहीं बल्कि भोगने के बाद भी इंसानियत और मानवीयता का दामन नहीं छोड़ते हैं. इसीलिए वे उन लोगों को माफ कर देते हैं और उनकी तरक्की की दुआ करते हैं जो उन्हें उनके ही घर से निकाल बाहर करने में शामिल ही नहीं

बल्कि उन्हें लूटकर कत्ल कर देने में भी पीछे न रहने वाले में से थे. वे इस कहानी के माध्यम से यह संदेश देती हैं कि 'सिक्का बदल गया'! अर्थात सत्ता परिर्वतन हो जाने का मतलब क्या निरंकुश और हृदयहीन बन जाना है.

6.7 सारबिंदु

- 'सिक्का बदल गया' कहानी में कृष्णा सोबती ने यह बताया है कि भारत जहाँ एक ओर स्वाधीनता की खुशियाँ मना रहा था वहीं विभाजन के दौरान भारत के लाखों लोगों को ऐसे दु:ख से गुजरना पड़ रहा था, जिसकी किसी ने कल्पना भी नहीं की थी. 'सिक्का बदल गया' कहानी की शाहनी भी पहले तो विभाजन अर्थात सिक्का बदल गया है, को स्वीकार नहीं कर पाती. परन्तु जब धीरे-धीरे उसे स्वीकार करना पड़ता है तो उससे मिलने वाली पीड़ा और खत्म होती मानवीय संवेदना के आगे वह एकदम अकेली और नि:सहाय हो जाती है. सब कुछ खत्म हो जाने और अपनों द्वारा छले जाने के बावजूद शाहनी अच्छाई का दामन नहीं छोड़ती है.
- इस कहानी में लेखिका ने विभाजन की मानवीय पीड़ा के विभिन्न पहलुओं - सांप्रदायिक दंगे, विस्थापन और शरणार्थी होने के दर्द के साथ मानवीय अलगाव की स्थितियों को भी चित्रित किया है.
- यह कहानी आज भी उतनी ही प्रासंगिक है जितनी अपनी रचनाकाल में थी. इस कहानी के माध्यम से विभाजन के दुष्प्रभावों को कहीं न कहीं किसी न किसी स्तर पर देखा जा सकता है.

6.8 परीक्षोपयोगी प्रश्नावली

- **अतिसंक्षिप्त उत्तर लिखें**

(1) 'सिक्का बदल गया' कहानी के किन्हीं चार पात्रों के नाम लिखें

(2) शेरा चाहकर भी शाहनी का कत्ल क्यों नहीं कर सका?

(3) शाहनी शेरा को क्या आशीर्वाद देती है?

(4) थानेदार दाऊद्द द्वारा बुरे वक्त के लिए कुछ नकदी रख लेने की सलाह पर शाहनी क्या कहती है?

(5) हवेली से निकलते समय शाहनी किसे अन्तिम बार प्रणाम करती है और क्यों?

(6) शाहनी के ट्रक में बैठते समय गाँव के लोग क्यों रोते हैं?

- **विस्तार से उत्तर लिखें**

(1) 'सिक्का बदल गया' कहानी के लेखक का संक्षिप्त परिचय देते हुए इस कहानी के कथानक को लिखिए.

(2) 'सिक्का बदल गया' कहानी के आधार पर शाहनी का चरित्र-चित्रण कीजिए.

(3) 'सिक्का बदल गया' कहानी का विश्लेषण कीजिए.

(4) 'सिक्का बदल गया' कहानी के भाषा और शिल्प की विशेषताओं को बताइए.

(5) 'सिक्का बदल गया' कहानी की संवाद योजना के बारे में टिप्पणी लिखें.

(6) 'सिक्का बदल गया' कहानी का उद्देश्य क्या है?

- **टिप्पणी लिखिए**

(1) 'सिक्का बदल गया' कहानी में विभाजन की त्रासदी

(2) 'सिक्का बदल गया' कहानी में मानवीय संवेदना

(3) कथा नायिका शाहनी

(4) 'सिक्का बदल गया' में देशकाल और वातावरण

- **वस्तुनिष्ठ प्रश्न सही के आगे (✓) गलत के आगे (X) का निशान लगाएँ**

(1) 'सिक्का बदल गया' कहानी का केन्द्रीय पात्र शेरा है. ( )

(2) शाहनी निर्दयी और हृदयहीन थी. ( )

(3) 'सिक्का बदल गया' कहानी में विभाजन की त्रासदी साफ दिख़ाई पड़ती है. ( )

(4) कृष्णा सोबती को कथा चूडामणि पुरस्कार भी मिला था. ( )

(5) 'मलबे का मालिक' कृष्णा सोबती की रचना है. ( )

6.9 उपयोगी पाठ्यसामग्री

- हिन्दी कहानी का विकास - मधुरेश
- कहानी : अनुभव और अभिव्यक्ति - राजेन्द्र यादव, वाणी प्रकाशन, दिल्ली
- बादलों के घेरे (कहानी संग्रह) - कृष्णा सोबती, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली
- https://www.gadyakosh
- https://www.hindisamay.com

इकाई 7 ‘पंचलैट’ - फणीश्वरनाथ ‘रेणु’

रूपरेखा

7.1 उद्देश्य
7.2 प्रस्तावना
7.3 लेखक परिचय
  7.3.1 जीवन परिचय
  7.3.2 कृतित्व परिचय
7.4 कहानी कला की दृष्टि से ‘पंचलैट’ कहानी की समीक्षा
  7.4.1 कथावस्तु
  7.4.2 चरित्र चित्रण
  7.4.3 देशकाल और वातावरण
  7.4.4 भाषा शैली
  7.4.5 उद्देश्य
  7.4.6 शीर्षक की सार्थकता
7.5 मुख्य अंशो की व्याख्या
7.6 अपरिचित शब्दों के अर्थ, कहावतें एवं मुहावरे
7.7 सारबिंदु
7.8 परीक्षोपयोगी प्रश्नावली
7.9 उपयोगी पाठ्यसमग्री

7.1 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई फणीश्वरनाथ ‘रेणु’ कृत कहानी ‘पंचलैट’ से सम्बंधित है. जिसके अंतर्गत आप कहानी के तत्वों के आधार पर ‘पंचलैट’ का अध्ययन करेंगे. इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- फणीश्वरनाथ ‘रेणु’ का जीवन परिचय एवं उनके कृतित्व की सामान्य जानकारी प्राप्त कर सकेंगे.
- फणीश्वरनाथ ‘रेणु’ की कहानी-कला, भाषा-शैली आदि विशेषताओं के आधार पर कहानी का मूल्यांकन कर सकेंगे.
- कहानी के प्रमुख चरित्रों का चरित्र चित्रण कर सकेंगे.
- कहानी में प्रयुक्त कठिन शब्दों के अर्थ, मुहावरों एवं लोकोक्तियों के अर्थ ग्रहण कर सकेंगे.
- ‘पंचलैट’ कहानी का प्रतिपाद्य, कहानीकार की दृष्टि और उद्देश्य से अवगत होंगे .

7.2 प्रस्तावना

स्वातंत्र्योत्तर काल में साहित्य के अंतर्गत आंचलिकता का नया प्रकार शुरु हुआ. इसका प्रभाव हम ‘रेणु’ जी के साहित्य में देख सकते हैं. ‘रेणु’ जी ने अपने साहित्य में दूरदराज के ग्रामीण वातावरण का वास्तविक एवं सूक्ष्म वर्णन किया है.

प्रस्तुत इकाई में आप फणीश्वरनाथ ‘रेणु’ कृत आंचलिक कहानी ‘पंचलैट’ का अध्ययन करने जा रहे हैं. यह कहानी सन् 1950 ई. से सन् 1960 ई. के मध्य लिखी गयी थी. ‘पंचलैट’ ‘रेणु’ जी की सर्वाधिक प्रसिद्ध कहानियों में से एक है. इसमें पंचलैट जैसी नयी

चीज के आने से टोले के उत्साह वर्णन के माध्यम से ग्राम जीवन का बखूबी चित्रण हुआ है. गोधन पेट्रोमेक्स जलाता है तो टोले की इज्जत बढ़ जाती है. सम्मान स्वरुप गोधन के गुनाहों को पंचायत माफ कर देती है. प्रस्तुत कहानी आंचलिक कहानियों की श्रेणी में एक प्रमुख कहानी मानी जाती है. 'रेणु' की इस कहानी का नाटक के रूप में मंचन काफी लोकप्रिय है और इसका मंचन पेशेवर कलाकारों द्वारा भी हुआ है. इस कहानी पर एक फिल्म भी बनी है. आइये इस रोचक कहानी का अध्ययन करें.

7.3 लेखक परिचय

7.3.1 जीवन परिचय

फणीश्वरनाथ 'रेणु' हिन्दी के सुप्रसिद्ध आंचलिक उपन्यासकार और कहानीकार थे. 'रेणु' का जन्म 4 मार्च 1921 को बिहार के पूर्णिया जिला के औराही-हिंगना नामक गाँव में हुआ था. उनके पिता शिलानाथ मंडल संपन्न व्यक्ति थे. भारत के स्वाधीनता संग्राम में उन्होंने भाग लिया था. 'रेणु' का बचपन आजादी की लड़ाई को देखते - समझते बीता. 'रेणु' जी ने स्वयं लिखा भी है - "पिताजी किसान थे और इलाके के स्वराज आंदोलन के प्रमुख कार्यकर्ता थे. खादी पहनते थे, घर में चरखा चलता था. स्वाधीनता संघर्ष की चेतना 'रेणु' जी में उनके पारिवारिक वातावरण से आयी थी. 'रेणु' जी भी बचपन और किशोरावस्था में ही देश की आजादी की लड़ाई से जुड़ गए थे. सन् 1930-31 ई. में जब 'रेणु' जी अररिया हाईस्कूल के चौथे दर्जे में पढ़ते थे तभी महात्मा गाँधी की गिरफ्तारी के बाद अररिया में हड़ताल हुई, स्कूल के सारे छात्र भी हड़ताल पर रहे. 'रेणु' जी ने अपने स्कूल के असिस्टेंट हेडमास्टर को स्कूल में जाने से रोका. 'रेणु' जी को इसकी सजा मिली लेकिन इसके साथ ही वे इलाके के 'बहादुर सुराजी' के रूप में प्रसिद्ध हो गये. 'रेणु' जी ने प्रारंभिक शिक्षा के बाद मैट्रिक नेपाल के विराटनगर के विराटनगर आदर्श विद्यालय से कोइराला परिवार में रहकर की. 'रेणु' जी ने इन्टरमीडिएट काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से सन् 1942 ई. में किया और उसके बाद वह स्वतंत्रता संग्राम में कूद पड़े. सन् 1950 ई. में 'रेणु' जी ने 'नेपाली क्रांति' आंदोलन में भी भाग लिया. आगे चलकर 'रेणु' जी समाजवाद से प्रभावित 'रेणु' जी हुए. सन् 1952-53 ई. में भीषण रूप से रोगग्रस्त रहने के बाद लेखन कार्य की ओर झुके. 11 अप्रैल, 1966 के दिन 'रेणु' जी का देहांत हो गया.

7.3.2 कृतित्व परिचय

सही मायने में 'रेणु' जी कर्मशील सारस्वत थे. हिन्दी में आँचलिक कथा की शुरुआत करने का श्रेय 'रेणु' जी को जाता है. उनका बेमिसाल आंचलिक उपन्यास 'मैला आँचल' हिंदी साहित्य में 'गोदान' के बाद दूसरा सर्वश्रेष्ठ उपन्यास माना जाता है. 'परती परिकथा', 'जुलूस', 'दीर्घतपा', 'कितने चौराहे', 'पलटूबाबू रोड' आदि उनके प्रसिद्ध उपन्यास हैं. 'एक आदिम रात्रि की महक', 'ठुमरी', 'अग्निखोर', 'अच्छे आदमी' आदि उनके कहानी संग्रह हैं. 'रेणु' जी ने 'ऋणजल धनजल', 'नेपाली क्रांतिकथा', 'वन तुलसी की गंध', 'श्रुत-अश्रुत पूर्व' रिपोतार्ज भी लिखे हैं. उनकी प्रसिद्ध कहानी 'मारे गये गुलफ़ाम उर्फ़ तीसरी कसम' पर 'तीसरी कसम' नामक फिल्म बनी. 'रेणु' जी को 'पद्मश्री' पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया है.

- **बोध प्रश्न**

(1) 'रेणु' जी किस वर्ष स्वतंत्रता संग्राम में कूद पड़े?

(क) 1950 (ख) 1940

(ग) 1952 (घ) 1942

(2) फणीश्वरनाथ 'रेणु' हिन्दी कथासाहित्य में किस रूप में प्रसिद्ध हैं?

(क) निबंधकार (ख) आंचलिक कथाकार

(ग) प्रगतिशील कवि (घ) प्रयोगधर्मी साहित्यकार

(3) निम्न में से कौन 'रेणु' जी का उपन्यास नहीं है?

(क) 'जुलूस' (ख) 'गोदान'

(ग) 'मैला आँचल' (घ) 'दीर्घतपा'

(4) 'रेणु' जी की कौन-सी कहानी पर फिल्म बनी है?

(क) 'ठेस' (ख) 'ठुमरी'

(ग) 'सिरचन' (घ) 'तीसरी कसम उर्फ़ मारे गये गुलफ़ाम'

(5) 'रेणु' जी को किस पुरस्कार से सम्मानित किया गया?

(क) पद्मश्री (ख) एकलव्य

(ग) भारतरत्न (घ) पद्मविभूषण

7.4 कहानी की समीक्षा

'पंचलैट' 'रेणु' जी के कहानी संग्रह 'ठुमरी' की तीसरी आंचलिक कहानी है. 'रेणु' जी ने अपने कथासाहित्य में ग्रामीण समाज के यथार्थ को उद्घाटित किया है. 'रेणु' की कहानियाँ अपनी संरचना, स्वभाव, प्रकृति, शिल्प और स्वाद में हिन्दी कहानी की परंपरा में एक अलग और नई पहचान लेकर उपस्थित होती है. प्रेमचंद ने अपनी कहानियों मे जिस ग्रामीण जीवन का परिचय दिया है उसे 'रेणु' जी ने समग्रता प्रदान की है. 'रेणु' जी ने संपूर्ण स्वातंत्र्योत्तर ग्रामीण परिवेश के सुख-दुःख, उल्लास और मोहभंग को कहानी में प्रस्तुत किया है. 'रेणु' जी ने लोककथाओं और लोकगीतों आदि को भी जगह दी है. इन सबके बिना ग्रामीण जीवन का यर्थाथ रूप दिखा पाना संभव नहीं है.

'पंटलैट' कहानी में 'रेणु' जी ने ग्रामीण समाज में निहित अज्ञानता पर सवाल उठाते हैं. जिस प्रकार किसी गाँव में पंचायत का अपना दल होता है, उसी प्रकार इस कहानी में भी अनेक दलों का जिक्र किया गया है जैसे बामन टोली, राजपूत टोली, महतो टोली इस प्रकार कहानी में विभिन्न जातियों और वर्गों में विभाजित गाँव का चित्रण बखूबी किया गया है. एक टोले का दूसरे टोले के प्रति बिलगाव, विभिन्न टोलों की पंचायतों का आपसी राग-द्वेष आदि ग्रामीण समाज का यथार्थ रूप हमारे सामने आते हैं.

इस कहानी में प्रेम प्रसंग भी देखने को मिलता है. गाँव के एक युवक गोधन को मुनरी नामक लड़की से प्रेम है परंतु ग्रामीण समाज में यह उचित नहीं समझा जाता जिस कारण पंचायत द्वारा गोधन का गाँव से बहिष्कार कर दिया जाता है. जब गाँव वालों से पंचलाइट नहीं जल पाती तब मुनरी अपनी सहेली कनेली के माध्यम से पंचों को कहलवाती है कि गोधन को पंचलाइट जलाना आता है. पंच लोग दूसरे गाँव से पंचलाइट जलाने के लिए किसी को बुलाने की बेइज्जती से बचने के लिए अंततः गोधन को माफ कर देते हैं. उसका हुक्कापानी बहाल कर दिया जाता है और गोधन के माध्यम से यह पंचलाइट जल जाती है.

7.4.1 कथावस्तु

कथावस्तु ही कहानी का प्राणतत्व है. कथावस्तु में घटनाओं का परस्पर संबंध होना आवश्यक है. अनावश्यक घटनाओं की योजना अनुचित है. कथानक के विकास की पाँच अवस्थाएँ है – (1) आरंभ (2) आरोह (3) चरम स्थिति (4) अवरोह और (5) अन्त या उपसंहार. निम्नलिखित बिंदुओं द्वारा हम इस कहानी की कथावस्तु को समझेंगे.

- **'पंचलैट' की खरीदारी**

कथानक का आरंभ पंचलैट की खरीददारी से होता है. 'पंचलैट' कहानी में ग्रामीण जीवन का वास्तविक चित्रण किया गया है. गाँव मे अलग-अलग जातियों के नाम पर कई पंचायतें थी. सभी पंचायतों मे दरी, जाजिम, सतरंजी और पेट्रोमेक्स थी. केवल महतो टोली के पास पेट्रोमेक्स नहीं थी.

गाँव वाले 'पेट्रोमेक्स' को 'पंचलैट' या 'पंचलाइट' कहकर पुकारते थे. महतो टोली के पंचायत सदस्यों ने रामनवमी के मेले से एक पेट्रोमेक्स खरीदा था. पंचलैट खरीदने के बाद जो दस रुपये बच गये थे, उनसे पूजा का सामान लाया गया. सबको पंचलैट आने की प्रसन्नता थी. इस खुशी में कीर्तन का आयोजन किया गया था.

- **पूजा-पाठ, कीर्तन से उद्घाटन**

पहली बार पंचलाइट की रोशनी में कीर्तन होना था. टोली के सभी लोग पंचलैट देखने के लिए एकत्र हो जाते हैं. सरदार पंचलैट खरीदने का पूरा किस्सा लोगों को सुनाता है. टोली की औरतों, बच्चों और पुरुषों में भी पेट्रोमेक्स देखने की बहुत उत्सुकता थी.

- **'पंचलैट' जलाने की समस्या**

सारी तैयारी हो जाने के बाद पंचलैट जलाने की समस्या खड़ी होती है. महतो टोली में ऐसा कोई आदमी नहीं था जो इसे जला सके. खरीदने से पहले किसी के मन में यह बात नहीं आई थी. गाँव में दूसरे टोलों में ऐसे लोग थे, जो 'पंचलाइट' जलाना जानते थे, पर उनसे पंचलाइट जलवाने पर बेइज्जती होने का डर था. यह निर्णय हुआ कि दूसरी पंचायत के आदमी की मदद से पंचलैट नहीं जलाया जायगा, चाहे वह बिना जले ही पड़ा रहे. उस दिन किसी ने अपने घर में ढिबरी भी नहीं जलाई थी. पंचलैट के न जलने से पंचों के चेहरे उतर जाते हैं. राजपूत टोली के लोग उनका मजाक बनाने लगते हैं, लेकिन सब धैर्यपूर्वक उस मजाक को सहन कर लेते हैं.

- **टोली द्वारा दी गई सजा भुगत रहे गोधन की खोज**

गुलरी काकी की बेटी मुनरी वहीं पर बैठी थी. उसे पता था कि गोधन पंचलैट जलाना जानता है. लेकिन गोधन का हुक्का-पानी समाज से बंद था क्योंकि वह मुनरी को देखकर सिनेमा का 'सनम-सनम' गाना गाता था. इसलिए पंचों ने उसे समाज से बहिष्कृत कर दिया था. मुनरी अपनी बात सहेली कनेली को बताती है. कनेली यह सूचना सरदार तक पहुँचाती है कि गोधन पंचलैट जलाना जानता है.

- **पंचो का निर्णय**

गोधन का नाम सुनकर टोली का सरदार कुनमुनाता है. सभी पंच सोच विचार में पड़ जाते हैं कि गोधन को बुलाया जाय या नहीं. उसका हुक्का-पानी तो उन्हीं लोगों ने बंद किया था. टोले की इज्जत बचाने के लिए अंत में उसे बुलाने का निर्णय लिया जाता है. सरदार छड़ीदार को भेजता है. लेकिन छड़ीदार के कहने से गोधन पंचलैट जलाने नहीं आता है. तब उसे मनाने गुलरी काकी खुद जाती हैं.

- **गोधन द्वारा पंचलाइट जलाना**

गुलरी काकी के मनाने पर गोधन आता है. गोधन आकर पंचलैट में तेल भरता है . और जलाने के लिए 'स्पिरिट' मंगवाता है. स्पिरिट के अभाव में वह गरी के तेल (नारियल के तेल) से ही पंचलाइट जला देता है. पंचलैट जलते ही टोली के सभी सदस्यों में खुशी की लहर दौड़ जाती है. कीर्तनिया लोग एक स्वर में महावीर स्वामी की जय ध्वनि करते हैं और कीर्तन शुरु कर देते हैं.

- **पंचो द्वारा गोधन को माफ करना**

गोधन ने जिस होशियारी से पंचलैट को जला दिया, उससे सभी प्रभावित होते हैं. गोधन के प्रति सभी लोगों के दिल का मैल दूर हो जाता है. गोधन सभी का दिल जीत लेता है. मुनरी बड़ी हसरत भरी निगाहों से गोधन की ओर देखती है. सरदार गोधन को बड़े प्यार से अपने पास बुलाकर कहता है - "तुमने जाति की इज्जत रखी है. तुम्हारे सात खून माफ. खूब गाओ सलीमा का गाना." अंत में गुलरी काकी गोधन को रात के खाने पर आमंत्रित करती हैं. गोधन एक बार फिर से मुनरी की ओर देखता है और नजर मिलते ही लज्जा से मुनरी की पलकें झुक जाती हैं.

7.4.2 चरित्र चित्रण

'पंचलैट' कहानी में सरदार व गोधन प्रमुख पात्र हैं, मुनरी, गुलरी काकी, छड़ीदार, कनेली, महतो टोली के लोग, राजपूत टोली के लोग गौण पात्र हैं. ये कथानक को गति प्रदान करते हैं. सभी पात्र अपनी भूमिका ग्रामीण परिवेश में बखूबी निभाते हैं.

- **टोली का सरदार**

टोली का सरदार जाति गौरव को प्रमुखता देता है. उसे अपनी बड़ाई करने का शौक है. वह अपनी जाति की बेइज्जती कभी बर्दाशत नहीं कर सकता. जाति की इज्जत बचाने के लिए वह गोधन को फिर से पंचायत में ले लेता है. वह गोधन के सात खून माफ कर देता है, इतना ही नहीं उसे सिनेमा का गाना गाने की भी पूरी छूट दे देता है.

- **गोधन**

गोधन समझदार किन्तु अल्लहड़ प्रवृत्ति का लड़का है. दूसरे गाँव से आकर वह इस गाँव (महतो की टोली के गाँव) में बस गया था. वह गुलरी काकी की बेटी मुनरी से प्यार करता है. मुनरी भी मन ही मन गोधन को चाहती है. मुनरी को देखकर वह रोज 'सनम-सनम' वाला गीत गाता था. गुलरी ने तंग आकर इसकी शिकायत पंचों से की थी . पंचों को पान सुपारी का खर्च न देने से वे गोधन से नाराज थे. उन्होंने उस पर दस रुपया जुर्माना कर दिया था. गोधन ने न जुर्माना भरा, न किसी की परवाह की. इसलिए पंचों ने उसे जाति से बाहर निकाल दिया था.

रामनवमी के मेले से महतो टोला 'पंचलैट' खरीदकर लाते हैं. महतो की टोली मे ऐसा कोई आदमी नहीं था जो पंचलाइट जला सके. गोधन अपनी होशियारी से स्पिरिट न होने पर गरी के तेल से ही पंचलाइट जला देता है. चारों ओर गोधन की 'वाह-वाह' होती है. मुनरी की माँ गुलरी काकी गोधन को अपने घर खाने पर बुलाती है. गोधन अपनी समझदारी और काबिलियत के द्वारा अपना खोया हुआ सम्मान फिर से प्राप्त करता है.

'पंचलैट' कहानी में 'रेणु' जी ने विभिन्न जातियों एवं वर्गों में विभाजित बिहार के गाँव के आपसी संघर्ष को बखूबी प्रस्तुत किया है.

7.4.3 देशकाल और वातावरण

वास्तविक जीवन में हम जैसे देशकाल से बँधे होते हैं, यानी हम किसी एक खास समय और जगह में अपना जीवन यापन करते हैं, उसी प्रकार साहित्यिक कृतियों के पात्र भी किसी न किसी काल और जगह के दायरे में ही अपना जीवन जीते हैं. (यहाँ इस बात का ध्यान रखियेगा कि 'देशकाल' में 'देश' का अर्थ 'राष्ट्र' नहीं अपितु 'स्थान' मात्र है.) कभी लेखक उस समय और जगह का स्पष्ट उल्लेख अपनी रचना में करता है और कभी नहीं भी करता. जब लेखक देशकाल का स्पष्ट उल्लेख नहीं करता तो आंतरिक और बाह्य प्रमाणों के आधार पर यह तय किया जाता है कि पात्र किस स्थान और किस समय के

हैं. आंतरिक प्रमाण यानी कि रचना की भाषा के आधार पर, उसमें कही गयी बातों में मिलने वाले संकेतों के आधार पर देशकाल तय करना. बाह्य प्रमाण यानी कि रचना का समय, रचनाकार का व्यतित्त्व और विचार आदि या कुछ मामलों में दूसरे लेखकों द्वारा किये गये उल्लेखों के आधार पर देशकाल को जानने की कोशिश करना.

फणीश्वरनाथ 'रेणु' आंचलिक कथाकार हैं. 'अंचल' यानी 'देश' उनके शब्द-शब्द से बोलता नजर आता है. 'अंचल' को वे सबसे पहले भाषा के जरिये ही निरुपित करते हैं . 'पंचलैट' - यह शीर्षक ही कथा के स्थान को साफ़ बता देता है. 'पंचलैट' शब्द बिहार के गाँवों में पेट्रोमैक्स के लिए प्रयुक्त होता है. पूरी कहानी में भी कथाकार जहाँ अपनी ओर से विवरण दे रहा होता है, वहाँ तो वह परिनिष्ठित हिंदी (मानक हिंदी) का प्रयोग करता है, पर जहाँ भी वह पात्रों के कथन या सोच को बता रहा होता है, वहाँ उसकी शब्दावली, वाक्यरचना और लहज़ा स्थानीय हो जाता है. 'सतरंजी', 'नेम-टेम', 'पुन्याह', 'मूलगैन', 'परतीत', 'मलसी', आदि अनेक शब्द आपको मिलेंगे जो बिहार में ही प्रयुक्त होते हैं. इसी तरह संवादों में बिहारी लहजे की झलक है -

"केतने में लालटेन खरीद हुआ, महतो?"

"बामन टोली के लोग ऐसे ही ताब करते हैं."

"आज अगर आखर धरने में डेढ़-बेढ़ हुआ तो दूसरे दिन से एकदम बैकाट"

इससे साफ हो जाता है कि कहानी का स्थान यानी 'देश' बिहार है. यह आर्तंरिक प्रमाण हुआ. बाह्य प्रमाण यह है कि 'रेणु' जी स्वयं बिहार के थे, अतः सहज स्वाभाविक है कि वे वहीं की कहानी कहें, जहाँ से वे अच्छी तरह परिचित हैं और जिसके विषय में वे प्रमाणिक रूप से कह सकते हैं.

अब कहानी के 'काल' यानी समय को जानने का प्रयत्न करें. आतंरिक प्रमाण के रुप में कहानी में केवल एक वाक्य है जो हमें उसके समय का अंदाज देता है – "अंग्रेज बहादुर के राज में भी पुल बनाने से पहले बलि दी जाती थी." पुराने समय से चली आ रही परंपरा को बताने वाला वाक्य यह द्योषित करता है कि 'पहले जब अंग्रेज बहादुर का राज था तब', यानी कि अभी 'अंग्रेज बहादुर का राज' नहीं है. इसका अर्थ हुआ कि कहानी की घटना स्वतंत्रता के बाद की है. लेकिन स्वतंत्रता के बाद कब की, इसका पता बाह्य प्रमाण से लगता है. यह कहानी 'रेणु' जी के 'ठुमरी' नामक कथासंग्रह में संकलित है. 'ठुमरी' का प्रकाशन 1959 ई. में हुआ था, इसलिए स्पष्ट है कि कहानी उसके पहले ही लिखी गयी होगी. अतः हम कह सकते हैं कि कहानी का काल बीसवीं सदी के पाँचवें दशक का है.

देशकाल तय हो जाने के बाद आइये जरा 'वातावरण' पर विचार कर लिया जाए. 'वातावरण' यानी कि एक निश्चित देशकाल की भौतिक और मानसिक परिस्थितियाँ.

कहानी का देशकाल है - बीसवीं शती के पाँचवें दशक में बिहार का कोई गाँव. आइये देखें कि कहानी में इस गाँव की क्या भौतिक परिस्थिति चित्रित हुई है!

कहानी के केंद्र में है – 'पंचलैट' यानी पेट्रोमैक्स. यह तथ्य दो बातें साफ़ कर देता है – एक तो यह कि गाँव में बिजली अभी तक नहीं आई है. दूसरे यह कि बाहरी दुनिया – शहरी दुनिया से यह गाँव ज्यादा संपर्क में नहीं है, तभी 'पेट्रोमैक्स' नाम उनके लिए परिचित नहीं है और पंचायत की लाइट होने के कारण 'पंचलैट' उनके ज्यादा समझ में आने वाला, ज्यादा उपयुक्त नाम है. यह बात इस तथ्य को स्पष्ट करती है कि गाँव किसी बड़े शहर से दूर धुर अंदरुनी इलाके में है और बाहरी दुनिया से उनका संपर्क कोई ख़ास नहीं है.

'पंचलैट' नाम गाँव की गरीबी को भी उजागर कर देता है. पेट्रोमैक्स खरीदने की हैसियत

किसी एक घर के पास नहीं है, वह किसी की व्यक्तिगत संपत्ति नहीं हो सकता. वह तो सामूहिक रुप से पंचायत द्वारा ही खरीदा जा सकता है. इसीलिए तो उसे यह नाम मिला है – 'पंचलैट'.

गाँव का अपना कोई बाजार तक नहीं है, बस बुनियादी जरूरतों को पूरा करने के लिए बनिये की एक दूकान है. पेट्रोमैक्स खरीदने के लिए रामनवमी के मेले में जाना पड़ता है. मेला भी गाँव में नहीं लगता क्योंकि कहानी में मेले से गाँव वापस लौटने की चर्चा है – "मेले से सभी पंच दिनदहाड़े ही गाँव लौटे".

गाँव जातियों के हिसाब से छोटे-छोटे मुहल्लों (टोलों) में बँटा हुआ है. कहानी में महतो टोली, ब्राहमण टोली, राजपूत टोली के नामोल्लेख हुए हैं. ऐसा लगता है कि हर टोली में आपस में सटे हुए घर घेरा बनाते हुए स्थित थे, जिनके बीच की खुली जगह पंचायत के लिए इस्तेमाल होती थी. तभी पंचायत में पेट्रोमैक्स आने पर महतो टोली में कोई अपने घर में ढिबरी तक नहीं जलाता कि बीच पंचायत में जलने वाले पेट्रोमैक्स की तेज रोशनी से उनके घर भी थोड़े बहुत तो रोशन हो ही जायेंगे – "किसी ने अपने घर में आज ढिबरी भी नहीं जलाई थी. आज पंचलैट के सामने ढिबरी कौन बालता!"

यह तो हुआ भौगोलिक वातावरण! अब एक नजर मानसिक वातावरण पर भी डाल ली जाय!

वस्तुतः 'रेणु' जी श्रेष्ठ आंचलिक कथाकार केवल इसलिए नहीं हैं कि उन्होंने अंचल का सटीक चित्रमय विवरण अपनी रचनाओं में दिया है, बल्कि इसलिए ज्यादा हैं क्योंकि उन्होंने उस जगह के मन मिज़ाज और मानसिकता के महीन रेशों को अपनी रचनाओं में इतनी कुशलता से बुना है कि अलग से नजर न आने पर भी वे अपने अहसास और असर से पाठकों को अभिभूत कर देते हैं.

'पंचलैट' में भी बिहार के गाँवों में व्याप्त जातिगत भेदभाव, मनमुटाव, इज्जत और मर्यादा की झूठी शान, शोषण और इन सब के बीच पनपती प्रेम की कोमल भावनाएँ – सभी मानसिक वातावरण के चित्रण को समृद्ध बनाती हैं.

कहानी के आरंभ में ही जातिगत भेदभाव उजागर होता है – "गाँव में सब मिलकर आठ पंचायतें हैं. हरेक जाति की अलग अलग सभाचट्टी है." संवैधानिक रुप से तो एक गाँव की एक ही पंचायत होनी चाहिए, पर जातिगत भेदभाव के चलते यह व्यवस्था है.

अलग-अलग जातियों के लोग अलग-अलग टोलियों में रहते हैं और उनमें आपसी सहयोग की जगह एक दूसरे को नीचा दिखाने और अपनी झूठी शान बघारने की प्रवृत्ति हावी दिखाई पड़ती है -

"गाँव के बाहर ही ब्राह्मण टोली के फुटंगी झा ने टोक दिया- केतने में लालटेन खरीद हुआ महतो? देखते नहीं, पंचलैट है! बामन टोली के लोग ऐसे ही ताब करते हैं. अपने घर की ढिबरी को बिजली बत्ती कहेंगे और दूसरों के पंचलैट को लालटेन!"

"इससे तो अच्छा है कि पंचलैट पड़ा रहे. सजदगीभर ताना कौन सहे? बात बात में दूसरे टोले के लोग कूट करेंगे – तुम लोगों का पंचलैट पहली बार दूसरों के हाथ से....! न न, पंचायत की इज्जत का सवाल है! दूसरी टोली के लोगों से मत कहिए."

"राजपूत टोली के लोग हँसते हँसते पागल हो रहे हैं. कहते हैं, कान पकड़कर पंचलैट के सामने पाँच बार उठो बैठो, तुरंत जलने लगेगा."

अज्ञानता, पिछड़ापन और अंधविश्वास जड़ जमाये बैठा है – "पंचलैट खरीदने के बाद पंचों ने मेले में ही तय किया – दस रुपये जो बच गये हैं, इनसे पूजा की सामग्री खरीद ली जाय. बिना नेम-टेम के कल-कब्जेवाली चीज का पुन्याह नहीं करना चाहिए." "छड़ीदार

ने औरतों की मंडली में सुनाया – रस्ते में सन्न सन्न बोलता था पंचलैट”. “गाँववालों ने आजतक कोई ऐसी चीज नहीं खरीदी थी जिसमें जलाने बुझाने का झंझट हो, ... अब इस कल-कब्जेवाली चीज को कौन बाले?”

टोली के बड़ों में अपेक्षित गंभीरता और बड़प्पन की जगह शेखी बघारने की आदत, छिछलापन और शोषकप्रवृत्ति दिखाई देती है –

“सरदार ने गुड़गुड़ी पीते हुए कहा, दुकानदार ने पहले सुनाया – पूरे पाँच कौड़ी पाँच रुपया! मैंने कहा, दुकानदार साहेब! यह मत समझिये कि हमलोग एकदम देहाती हैं. बहुत बहुत पंचलैट देखा है. इसके बाद दुकानदार मेरा मुँह देखने लगा.”

“दुकानदार ने नौकर को डाँटते हुए कहा – क्यों रे? दीवानजी की आँखों के आगे धुरखेल करता है? दे दो बक्सा.”

“पंचों की निगाह पर गोधन बहुत दिनों से चढ़ा हुआ था. दूसरे गाँव से आकर बसा है गोधन और अभी तक पंचों को पान-सुपारी खाने तक के लिए भी कुछ नहीं दिया . परवाह ही नहीं करता है. बस! पंचों को मौका मिला. दस रुपया जुर्माना. न देने से हुक्का पानी बंद! आज तक गोधन पंचायत से बाहर है.”

यहाँ यह भी याद करिए कि पंचलैट भी पंद्रह दिनों के दंड जुर्माने के पैसे जमा करके खरीदी गयी थी. यानी पंच पूरी मुस्तैदी से बेमुरव्वत अपने टोली के लोगों की छोटी-बड़ी भूलों का जुर्माना वसूल कर अपने अधिकार का भरपूर सदुपयोग करते रहे होंगे.

लेकिन इन सब के बीच बदलते समय की बयार भी गोधन जैसे नौजवानों के संग गाँव में पहुँच रही है. गोधन पंचायत का बेजा दबदबा नहीं मानता. पंचायत से बाहर कर देने को अपने अपमान का कारण नहीं समझता और मौका मिलने पर लौट आने को अपनी हेठी भी नहीं समझता.

अंततः, सारी क्षुद्रताओं को एक तरफ कर प्यार और अपनत्व यहाँ भी है –

“पंचलैट की रोशनी में सभी के मुस्कुराते हुए चेहरे स्पष्ट हो गये. गोधन ने सबका दिल जीत लिया. मुनरी ने हसरत भरी निगाह से गोधन की ओर देखा.”

“गुलरी काकी बोली आज रात मेरे घर में खाना गोधन!”

तो यह हुआ मानसिक वातावरण!

इस तरह ‘रेणु’ जी की कहानी ‘पंचलैट’ में हमारे सामने पिछली सदी के पचास के दशक के बिहार का एक पिछड़ा हुआ धुर गाँव अपने समस्त भौगोलिक और मानसिक वातावरण के साथ साकार हो जाता है.

आइये, अब जाँचते हैं कि आपने कितना पढ़ा और क्या समझा! नीचे लिखे वाक्यों में रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए

(1) ‘देशकाल’ में ‘देश’ का अर्थ .... नहीं अपितु .... मात्र है.

(2) ‘पंचलैट’ शब्द बिहार के गाँवों में .... के लिए प्रयुक्त होता है.

(3) ‘पंचलैट’ कहानी का ‘देश’ .... है.

(4) ‘पंचलैट’ कहानी का काल .... सदी के .... का दशक है .

(5) ‘पंचलैट’ कहानी के मानसिक वातावरण में बिहार के गाँवों में व्याप्त जातिगत .... और आपसी .... की झलक मिलती है.

7.4.4 भाषा शैली

कहानी की भाषाशैली सरल, सुबोध, सरस, प्रभावपूर्ण और धाराप्रवाह होनी चाहिए शैली उपयुक्त शब्दचयन, पद मैत्री, सुसंगठित वाक्य विन्यास, प्रवाह, अलंकार आदि से संपन्न होनी चाहिए .

'रेणु' जी ने 'पंचलैट' कहानी में सरल, सुबोध, प्रवाहमयी आंचलिक भाषा का प्रयोग किया है. कहानी में रोचकता प्रवाहिता लाने के लिए 'पानी फिरना', 'हुक्का-पानी बंद होना', 'पानी उतरना', 'दिल का मैल दूर होना', 'आँखों-आँखों में बात होना', 'कान में बात डालना' जैसे मुहावरों और 'भाई रे गाय तो लूँ तो दुहे कौन?' जैसी कहावतों का प्रयोग हुआ है .

7.4.5 उद्देश्य

प्रायः कहानी का उद्देश्य मनोरंजन माना जाता है. वस्तुतः कहानी का उद्देश्य यथार्थ के सुरुचिपूर्ण वर्णन द्वारा उच्च आदर्श संदेश प्रदान करके, पाठक के मन में जीवन के प्रति आस्था उत्पन कर देना है.

फणीश्वरनाथ 'रेणु' हिन्दी साहित्य जगत के सुप्रसिद्ध आंचलिक कथाकार हैं. ग्रामीण अंचलों से उनका निकट का परिचय है. बिहार के अंचलों के सजीव चित्र उनकी कथाओं के अलंकार है. 'पंचलैट' कहानी भी बिहार के परिवेश की है. कहानीकार ने ग्रामीण अंचल का वास्तविक चित्र खींचा है. आवश्यकता किस प्रकार बड़े से बड़े संस्कार और निषेध को अनावश्यक सिद्ध कर देती है, इसी केन्द्रीय भाव के आधार पर कहानी के माध्यम से एक महत्वपूर्ण उद्देश्य को स्पष्ट किया गया है. गोधन द्वारा पेट्रोमैक्स जला देने पर उसकी सब गलतियाँ माफ कर दी जाती है तथा उसे मनचाहे आचरण की छूट दी जाती है. ग्रामवासी जाति के आधार पर अनेक टोलियों में बँट जाते हैं. वह आपस में ईर्ष्या-द्वेष के भावों से भरे रहते हैं. इसका बड़ा सजीव चित्रण कहानी में प्रस्तुत किया गया है. 'रेणु' जी ने अप्रत्यक्ष रूप से ग्राम सुधार की प्रेरणा भी दी है.

7.4.6 शीर्षक की सार्थकता

किसी भी साहित्यिक कृति का कोई-न-कोई शीर्षक होता है. शीर्षक निम्न आधारों पर रखा जाता है – कथावस्तु के आधार पर, नायक-नायिका के आधार पर, घटना-स्थल के आधार पर, ऐतिहासिक तथ्य के आधार पर.

कहानी का शीर्षक 'पंचलैट' एक सार्थक और कलात्मक शीर्षक है. यह शीर्षक संक्षिप्त और उत्सुकतापूर्ण है. शीर्षक को पढ़कर ही पाठक कहानी को पढ़ने के लिए उत्सुक हो जाता है. 'पंचलैट' का अर्थ है - 'पेट्रोमैक्स' अर्थात् 'गैस की लालटेन'. यह शीर्षक कथा के केन्द्रबिन्दु के आधार पर रखा गया है.

7.5 मुख्य अंशों की व्याख्या

किसी भी साहित्यिक कृति में कुछ पंक्तियाँ ऐसी अवश्य होती हैं जो उस रचना के केन्द्रीय भाव को स्पष्ट करने में अधिक मददगार होती हैं. कुछ ऐसी पंक्तियाँ होती हैं जिनमें लेखक भाव या विचार को गुंफित रुप में प्रस्तुत करता है, जिन्हें अधिक विस्तृत व्याख्यायित करने की आवश्यकता होती है.

'पंचलैट' कहानी की ऐसी ही कुछ महत्वपूर्ण पंक्तियों की व्याख्या निम्नानुसार की गई है .

उदाहरण 1

"जाति की बंदिश क्या जबकि जाति की इज्जत पानी में बही जा रही है."

- **संदर्भ**

प्रस्तुत पंक्तियाँ 'पंचलैट' कहानी से ली गई है. इस कहानी के लेखक फणीश्वरनाथ

'रेणु' हैं. प्रस्तुत पंक्ति में गाँव के अनपढ़ लोगों में अज्ञान और जातिगत द्वेष को उजागर किया गया है. पंचलैट न जलने पर मुनरी अपनी सहेली कनेली के द्वारा सरदार और टोली को बताती है कि गोधन पंचलैट जलाना जानता है. गोधन पंचायत से बहिष्कृत है. टोली का सरदार उपर्युक्त कथन कहता है.

- **व्याख्या**

महतो टोली की पंचायत ने रामनवमी के मेले से एक पेट्रोमेक्स खरीदा. उनकी टोली में किसी भी व्यक्ति को पंचलाइट जलाना नहीं आता था. अन्य टोली के व्यक्ति को बुलाने से होने वाली जाति की बेइज्जती उन्हें मंजूर नहीं थी. दूसरी टोली के व्यक्ति की मदद से पंचलाइट नहीं जलाया जाएगा चाहे वह बिना जले ही पड़ा रहे. मुनरी अपनी सहेली कनेली के माध्यम से बताती है कि गोधन पंचलाइट जलाना जानता है. लेकिन पंचायत ने गोधन का हुक्का पानी बंद कर रखा था. पेट्रोमैक्स न जलने पर जाति की इज्जत जा रही थी. गोधन को पेट्रोमेक्स जलाना आता था. इसलिए सरदार और सभी लोग गोधन पर से जाति की बंदिश हटाने और उससे टोली की पेट्रोमेक्स जलवाने का निर्णय करते हैं. इससे महतो जाति की इज्जत जाने से बच जाती है. जाति की इज्जत के सामने जाति की बंदिश हटाना कोई महत्व नहीं रखता.

- **विशेष**

– ग्रामवासी जाति के आधार पर अनेक टोलियों में बँट जाते हैं. जाति ही उनके लिए प्रमुख है. वह आपस मे ईर्ष्या-द्वेष के भावों से भरे रहते है. गाँव में प्रचलित जातिगत वैमनस्य का सजीव चित्रण लेखक ने किया है.

– आधुनिक युग में अभी भी कुछ गाँव और जातियाँ पिछड़ी हुई हैं.

– आवश्यकता किस प्रकार बड़े से बड़े संस्कार को अनावश्यक सिद्ध कर देती है यही इस पंक्ति का केन्द्रीय भाव है. कहा भी गया है - 'यदि किसी छोटी चीज का त्याग करके बड़े नुकसान से बचा जा सकता है, तो उस चीज का त्याग करना ही उचित है'.

– भाषा सरल और प्रवाही है.

- **अन्य उदाहरण**

(छात्र स्वयं व्याख्या करने का प्रयत्न करें)

(1) "कल-कब्जेवाली चीज का नखरा बहुत बड़ा होता है."

(2) "कहा-सुना माफ करना. मेरा क्या कसूर"

(3) "बिना नेम-टेम के कल-कब्जेवाली चीज का पुन्याह नहीं करना चाहिए अंग्रेज बहादुर के राज में भी पुल बनाने से पहले बलि दी जाती थी."

(4) "लगता है आप जाति के सरदार है. ठीक है, जब आप सरदार होकर खुद पंचलैट खरीदने आए हैं तो जाइए पूरे पांच कौड़ी में आपको दे रहे हैं."

(5) "माई रे गाय लूँ तो दुहे कौन? लो मजा. अब इस कल-कब्जेवाली चीज को कौन बाले."

7.6 अपरिचित शब्दों के अर्थ, कहावतें एवं मुहावरे

ढक्कनदार छोटी बोतल में केरोसीन भरकर और ढक्कन में छेदकर कपड़े की बत्ती डालकर बनाया गया वैकल्पिक साधारण लैंप, जो रोशनी कम और धुँआ ज्यादा देता था.

गरी - नारियल

मलसी - तेल रखने का एक छोटा-सा बर्तन

मुलगैन - मुख्य गायक

भाई रे गाय तो लूँ, तो दुहे कौन? - किसी वस्तु के उपयोग की विधि का ज्ञान न होना .

पुन्याह करना - प्रारम्भ करना.

पानी फिरना - सब व्यर्थ होना.

हुक्का पानी बंद होना - जाति या समाज से बहिष्कृत होना.

पानी उतरना - इज्जत खत्म होना.

दिल का मैल दूर होना - कड़वाहट खत्म होना.

आँखें चार होना - प्रेम होना.

आँखों आँखों में बात होना - इशारों में बात होना.

7.7 सारबिंदु

- प्रस्तुत इकाई में आपने कहानी 'पंचलैट' का वाचन और अध्ययन किया.
- 'पंचलैट' फणीश्वरनाथ 'रेणु' के कहानी संग्रह 'ठुमरी' में संकलित है.
- यह कहानी बिहार के ग्रामीण परिवेश के इर्द गिर्द घूमती है. गाँव के एक युवक गोधन का मुनरी नामक लड़की से प्रेम है जिससे नाराज होकर पंचायत ने उसका बहिष्कार कर रखा है. एक दिन मेले से गाँव वाले सार्वजनिक उपयोग के लिये पेट्रोमैक्स (जिसे वहाँ के लोग पंचलाइट या पंचलैट कहते हैं) खरीद कर लाते हैं. सभी उत्साह में हैं लेकिन तभी पता चलता है कि इसे जलाना तो किसी को आता ही नहीं. गाँववालों का भोलापन और पेट्रोमैक्स जला न पाने के कारण हास्य की स्थिति पैदा होती है . दूसरी टोली के लोग उपहास करने लगते हैं. तब मुनरी अपनी सहेली के माध्यम से पंचों को कहलवाती है कि गोधन को पंचलाइट जलाना आता है. पंच लोग दूसरे टोली वालों से पंचलाइट जलाने के लिये किसी को बुलाने की बेइज़्ज़ती से बचने के लिये अंततः गोधन को माफ कर देते हैं.
- प्रस्तुत कहानी में पंचलैट की खरीददारी से लेकर पंचलैट जलाने की समस्या, गोधन की खोज, पंचों का निर्णय, गोधन द्वारा पंचलैट जलाना आदि घटना क्रम का वर्णन चित्रात्मक ढंग से किया गया है.
- प्रस्तुत कहानी में हमारे देश मे व्याप्त अंधश्रद्धा, अंधानुकरण, जातिगत भेदभाव, कुरिवाज तथा टोली की इज्जत की शान बढ़ाने की झूठी परंपरा की समस्या पर विचार किया गया है.

7.8 परीक्षोपयोगी प्रश्नावली

- **वस्तुनिष्ठ प्रश्न**

(1) गाँव में कुल कितनी पंचायतें थी?

(क) चार (ख) पाँच (ग) आठ (घ) छः

(2) पंचलाइट कितने रुपये में खरीदा गया?

(क) पाँच कौड़ी (ख) दो कौड़ी (ग) सात कौड़ी (घ) सौ कौड़ी

(3) पंचलाइट जलाने के लिए मुनरी क्या लाती है?

(क) किरोसिन (ख) गरी का तेल (ग) स्पिरीट (घ) पेट्रोल

(4) गोधन पर कितना रुपया जुर्माना लगाया गया था?

(क) दस रुपया (ख) बीस रुपया (ग) पचास रुपया (घ) सौ रुपया

(5) पंचलाइट जलाना कौन जानता है?

(क) मुनरी (ख) कनेली (ग) गोधन (घ) सरदार

(क) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

- **निम्नलिखित प्रश्न के उत्तर सविस्तार लिखिए**

(1) 'पंचलैट' कहानी के गोधन की चारित्रिक विशेषताएँ बताइए

(2) आंचलिक कहानी से आप कया समझते है? फणीश्वरनाथ 'रेणु' की आंचलिक कहानियों के नाम बताकर 'पंचलैट' कहानी की समीक्षा कीजिए

(3) महतो टोली के सरदार की चारित्रिक विशेषताएँ बताइए

(4) पेट्रोमैक्स जलाने के लिए क्या-क्या यत्न किये जाते हैं? अपने शब्दों में लिखिए

(ख) लघु उत्तरीय प्रश्न

- **निम्नलिखित प्रश्न के दो-तीन वाक्यों में उत्तर दीजिए**

(1) गाँव में कुल कितनी पंचायतें थीं और गाँव की प्रत्येक पंचायत के पास कौन-कौन सी चीजें थीं?

(2) महतो टोली में पेट्रोमैक्स खरीदने के लिए पैसे का इंतजाम कैसे हुआ था?

(3) गोधन को जाति से बाहर क्यों कर दिया गया था?

(4) टोली में पंचलाइट आने के बाद लोगों ने पंचों की किस कमी की ओर संकेत किया?

(5) गोधन के द्वारा पेट्रोमैक्स जलाने पर पंचों ने क्या किया?

(ग) उचित जोड़े मिलाइए

	'अ'	'आ'
(1)	'मैला आंचल'	(क) मुनरी की सहेली
(2)	कनेली	(ख) मुनरी की माँ
(3)	गुलरी काकी	(ग) गोधन
(4)	चिगो, चिध चिन यानी	(घ) आंचलिक उपन्यास

7.9 उपयोगी पाठ्यसामग्री

- फणीश्वरनाथ रेणु : 'संपूर्ण कहानियाँ', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
- भारत यायावर : 'फणीश्वरनाथरेणु कथा का नया स्वर', अनन्य प्रकाशन
- gadyakosh.org
- Panchlait/Latest movie 2016
  https://youtu.be/kXmOsPfmKEo
- पंचलाइट एनिमेशन फिल्म

  https://Youtu.be/bYqeQ4R.o_R4

इकाई 8 'परिंदे' – निर्मल वर्मा

रूपरेखा

8.1 उद्देश्य

8.2 प्रस्तावना

8.3 लेखक परिचय

8.3.1 जीवन परिचय

8.3.2 कृतित्व परिचय

8.4 कहानी कला की दृष्टि से 'परिंदे' कहानी की समीक्षा

8.4.1 कथावस्तु

8.4.2 चरित्र चित्रण

8.4.3 संवाद

8.4.4 देशकाल और वातावरण

8.4.5 भाषा शैली

8.4.6 उद्देश्य

8.5 सारबिंदु

8.6 परीक्षोपयोगी प्रश्नावली

8.7 उपयोगी पाठ्यसामग्री

8.1 उद्देश्य

विद्यार्थी मित्रो! इस इकाई में निर्मल वर्मा की प्रसिद्ध कहानी 'परिंदे' का अध्ययन करने के बाद आप –

- निर्मल वर्मा के व्यक्तित्व और कृतित्व से परिचित हो सकेंगे.
- 'परिंदे' कहानी की पृष्ठभूमि से परिचित हो सकेंगे.
- कहानी के प्रमुख पात्रों के मनोभावों से रू-ब-रू हो सकेंगे.
- कहानी के देशकाल और वातावरण से परिचित हो सकेंगे.
- पात्रों के कथोपकथन से परिचित हो सकेंगे.
- कहानी के उद्देश्य से परिचित हो सकेंगे.
- उक्त कहानी के अध्ययनोपरांत प्रेम, करुणा, समर्पण, कर्तव्यनिष्ठता, ईमानदारी और धैर्य आदि के प्रति आपकी सोच-समझ में वृद्धि होगी, जिससे जीवन जीने में सहायता मिलेगी.
- कहानी के शीर्षक की सार्थकता को समझ सकेंगे.

8.2 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में हम ख्यातिलब्ध कथाकार निर्मल वर्मा की कहानी 'परिंदे' का अध्ययन करने जा रहे हैं. हिंदी साहित्य की प्रगतिशील परंपरा के साहित्यकारों में निर्मल वर्मा अपनी एक अलग पहचान रखते हैं. इस अलग पहचान को बनाए रखने में उनकी गहन संवेदनशीलता और सूक्ष्मतर अभिव्यक्ति की क्षमता है. वर्मा जी अपनी कहानियों व उपन्यासों में आधुनिकता, औद्योगीकरण और भौतिकता की अंधी दौड़ से पसीज रहे मनुष्य की व्यथा को स्वर देते हैं.

डॉ. रामस्वरुप चतुर्वेदी के शब्दों में कहें तो – "निर्मल वर्मा के गद्य में कहानी, निबंध, यात्रा-वृत्त और डायरी की समस्त विधाएँ अपना अलगाव छोड़कर अपनी चिंतन-क्षमता और सृजन प्रक्रिया में समरस हो जाती हैं... समाज में गद्य से जो विविध अपेक्षाएँ की जाती हैं, वे यहाँ सब एकबारगी पूरी हो जाती हैं." कहना गलत ना होगा कि निर्मल वर्मा का कथासाहित्य निम्नवर्ग व मध्यवर्ग दोनों के संघर्षो का चित्रण करता है. आज के इस यांत्रिकीकरण युग में जहाँ लोग सुविधाभोगी होकर संवेदन-हीन और अधीर हो रहे हैं ठीक ऐसे ही समय में वर्मा जी 'परिंदे' जैसी कहानी ले कर आते हैं, जो प्रेम, करुणा, सत्य, समर्पण, कर्तव्यनिष्ठता, ईमानदारी आदि को धैर्य के धीमी आँच पर पकते हुए दिखाती और सिखाती है. 'परिंदे' कहानी का महत्व हिंदी साहित्य में इतना ज्यादा है कि प्रसिद्ध आलोचक नामवर सिंह नयी कहानी की शुरुआत ही इसी कहानी से मानते हैं.

मानव-मन के ऊहापोह को उजागर करती हुई यह कहानी कहानीकला की दृष्टि से कैसे सफल व सार्थक सिद्ध हुई है, यह हम इस इकाई के माध्यम से जानेंगे. इस कहानी को प्रकाशित हुए सात दशक से अधिक हो चुके हैं और यह कहानी आज भी प्रासंगिक, सार्वकालिक और सार्वभौमिक कैसे बनी हुई है उन तत्वों की भी जाँच-पड़ताल करेंगे.

8.3. लेखक परिचय

8.3.1 जीवन परिचय

साहित्य के सृजन को जानने से पूर्व यदि साहित्यकार के सृजन को जान लिया जाए तो साहित्य समझने में सुविधा हो जाती है. यथा, साहित्यकार का जन्म स्थल, पारिवारिक वातावरण, संस्कार, आचार-विचार आदि से भली-भाँति परिचित होने से उसके रचना-संसार को समझा जा सकता है, क्योंकि उसका संपूर्ण जीवन किसी न किसी रूप में उसकी रचनाओं में परिलक्षित होता ही है.

निर्मल वर्मा का जन्म 3 अप्रैल, 1929 ई. को लोअर जाखू के हरबर्ट विला, शिमला में हुआ. इनकी माता नीम का कटरा अब के चाँदनी चौक, दिल्ली के खत्री परिवार से थीं, यद्यपि इनके पिता श्री नंदकुमार वर्मा मूलतः पंजाब के रहने वाले थे. बी. ए. की परीक्षा उत्तीर्ण कर नंदकुमार जी पहले चीव्स कॉलेज लाहौर में वार्डन हुए तत्पश्चात इनकी नियुक्ति दिल्ली में भारत सरकार के रक्षा मंत्रालय विभाग में हुई.

उन दिनों भारत पर अंग्रेजों का शासन था. अंग्रेज अधिकारी दिल्ली की गर्मी से परेशान होकर ग्रीष्मकालीन छावनी शिमला में बनाते थे और सारे कार्यालयीन काम काज वहीं से संपादित करते थे. नंदकुमार वर्मा उस समय दिल्ली में ही पदस्थ थे इसलिए उन्हें भी प्रतिवर्ष अंग्रेजों के साथ शिमला जाना पड़ता था. चार बड़ी बहनों और तीन बड़े भाइयों के बाद आठवीं संतान के रूप में निर्मल वर्मा का जन्म यहीं शिमला में हुआ.

परिवार में छोटे होने का अतिरिक्त लाभ बालक निर्मल वर्मा को मिला. माता-पिता और दादा के साथ-साथ बड़ी बहनों और भाइयों का भी लाड़ प्यार मिला. पिता की अच्छी नौकरी होने के कारण आर्थिक स्थिति भी सुदृढ़ थी. निर्मल जी का बचपन आर्थिक संपन्नता और बड़ी बहन के अतिरिक्त स्नेह में बिता. बड़ी बहन से बालक निर्मल को साहित्य के प्रति अभिरुचि पैदा हुई. बकौल निर्मल वर्मा – "पढ़ने के प्रति जिन्होंने मुझे प्रेरित किया और जो अब जीवित नहीं हैं वे मेरी बड़ी बहन थीं. उन्होंने पहली बार मुझे बहुत-सी चीजों के बारे में बताया, पुस्तकों के बारे में, लेखकों के बारे में. वे आठवीं कक्षा में थीं और मैं तीसरी कक्षा में." बचपन की इन मीठी स्मृतियों की छाप निर्मल वर्मा पर ता-उम्र बनी रही और इसीलिए उनके साहित्य में पात्र के रूप में बच्चे और वयस्क की उपस्थिति अधिक रहती है.

सौन्दर्य से आच्छादित पहाड़ की गोद में पैदा होने और कुछ साल व्यतीत करने के कारण पहाड़ के प्रति जो उनका लगाव है वह 'परिंदे' कहानी में देखने को मिलता है. पिता की नौकरी के कारण वे दिल्ली और शिमला के चक्कर लगाते हुए उच्चतर माध्यमिक की परीक्षा शिमला के आरकोट बटलर स्कूल से उत्तीर्ण की. सन् 1949 ई. में सेंट स्टीफेंस कॉलेज, दिल्ली से कला में स्नातक की तथा सन् 1951 ई. में दिल्ली विश्वविद्यालय से इतिहास में परास्नातक की उपाधि प्राप्त की. तत्पश्चात सेंट स्टीफेंस कॉलेज, दिल्ली में इतिहास के व्याख्याता नियुक्त हुए. यह कॉलेज आभिजात्य वातावरण के लिए जाना जाता था. निर्मल वर्मा इससे अलग मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित होकर बाकायदा सन् 1949 ई. में साम्यवादी दल की सदस्यता ले लेते हैं और यह तब तक जारी रहता है, जब तक कि सन् 1956 ई. में हंगरी की घटना नहीं घटती. इस घटना ने निर्मल वर्मा का मोहभंग कर दिया और फलतः वे साम्यवादी दल की सदस्यता से त्यागपत्र दे देते हैं.

हिंदी साहित्यिक यात्रा को एक नई ऊँचाई देते हुए लंबी अस्वस्थता के कारण 76 वर्ष की उम्र में दिल्ली के एम्स अस्पताल में 24 अक्तूबर, 2005 ई. को निर्मल वर्मा का देहावसान हुआ.

8.3.2 कृतित्व परिचय

निर्मल वर्मा को बचपन से ही किताबें, पत्र-पत्रिकाएँ पढ़ने का शौक था. उनका बचपन और युवावस्था दिल्ली के शहरी जीवन और शिमला के पहाड़ी जीवन से संपृक्त रहा है, इसलिए उनके कथासाहित्य में दोनों की मिश्रित संस्कृति देखने को मिलती है. निर्मल वर्मा की कथा यात्रा की शुरुआत सन् 1954-55 ई. में हैदराबाद से प्रकाशित कहानियों की पत्रिका 'कल्पना' में प्रकाशित 'रिश्ते' कहानी से होती है. निर्मल वर्मा की एक बड़ी विशेषता यह रही कि लिखने के नाम पर कुछ भी नहीं लिखा है. कम लिखा लेकिन अत्यंत महत्वपूर्ण लिखा. साहित्य जगत में निर्मल वर्मा को एक प्रतिष्ठित कथाकार के रूप में स्थापित करने में सन् 1958 ई. में 'हंस' पत्रिका की अर्द्धवार्षिकी में प्रकाशित कहानी 'परिंदे' है. कई आलोचकों ने इस कहानी को 'नयी कहानी' की पहली कृति और निर्मल वर्मा को 'नयी कहानी' का प्रवर्तक कहानीकार घोषित कर दिया. प्रतिभासंपन्न कथाकार निर्मल वर्मा का कृतित्व परिचय निम्नलिखित प्रकार है:-

कहानी संग्रह

1. 'परिंदे' (1960) 2. 'जलती झाड़ी' (1965) 3. 'पिछली गर्मियों में' (1968) 4. 'बीच बहस में' (1976) 5. 'कव्वे और काला पानी' (1983) 6. 'सुखा तथा अन्य कहानियाँ' (1995) 7. 'ग्यारह लम्बी कहानियाँ' (2000)

उपन्यास

1. 'वे दिन' (1964) 2. 'लाल टीन की छत' (1974) 3. 'एक चिथड़ा सुख' (1979) 4. 'रात का रिपोर्टर' (1989) 5. 'अंतिम अरण्य' (2000)

निबंध संग्रह

1. 'चीड़ो पर चाँदनी' (1964) 2. 'हर बारिश में' (1970) 3. 'शब्द और स्मृति' (1976) 4. 'कला का जोखिम' (1981) 5. 'ढलान से उतरते हुए' (1985) 6. 'भारत और यूरोप : प्रतिश्रुति के क्षेत्र' (1991) 7. 'इतिहास, स्मृति, आकांक्षा' (1991) 8. 'शताब्दी के ढलते वर्षों में' (1995) 9. 'दूसरे शब्दों में' (1997) 10. 'सर्जना पथ के सहयात्री' (2005)

नाटक

1. 'तीन एकांत' (2005) – इस पुस्तक में निर्मल वर्मा की उन कहानियों का संकलन है, जिनका नाट्य-मंचन किया गया है.

डायरी

1. 'धुंध से उठती धुन' (1997)

अनुवाद

1. 'कारेल चापेक की कहानियाँ' 2. 'इतने बड़े धब्बे' 3. 'रोमियो जूलियट और अँधेरा'.

- **बोध प्रश्न**

1. 'एक चिथड़ा सुख' किस विधा की रचना है?

(क) कहानी (ख) उपन्यास

(ग) निबंध (घ) नाटक

2. 'परिंदे' कहानी का प्रकाशन वर्ष है?

(क) 1950 (ख) 1955

(ग) 1960 (घ) 1965

3. निर्मल वर्मा के पिता मूलतः कहाँ के थे?

(क) राजस्थान (ख) गुजरात

(ग) महाराष्ट्र (घ) पंजाब

4. निर्मल वर्मा कुल कितने भाई-बहन थे?

(क) 6 (ख) 7

(ग) 8 (घ) 9

5. अपने भाई-बहनों में निर्मल वर्मा का क्रम क्या था?

(क) 5 (ख) 6

(ग) 7 (घ) 8

8.4 कहानी कला की दृष्टि से 'परिंदे' कहानी की समीक्षा

कहानी कहना, सुनना और सुनाना मानव का आदिम स्वभाव रहा है. भारतीय परंपरा में कथासाहित्य की परंपरा सदियों पुरानी है. वस्तुतः पारंपरिक रूप में कहानियाँ मौखिक परंपरा, लोक-कथाओं, पौराणिक और धार्मिक ग्रंथों के माध्यम से जीवंत थीं. परंतु विधिवत हिंदी कहानी लेखन की शुरुआत 19वीं शताब्दी के उतरार्द्ध से आरंभ होकर 20वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में पूर्ण होती दिखाई देती है, जिसे द्विवेदी युग, प्रेमचंद युग, नयी कहानी आन्दोलन, अ-कहानी, समकालीन हिंदी कहानी आदि नामों से जाना जाता है.

निर्मल वर्मा की 'परिंदे' कहानी इतनी उत्कृष्ट रचना है कि हिंदी के श्रेष्ठ आलोचक डॉ. नामवर सिंह लिखते हैं – "'परिंदे' निर्मल वर्मा की ही पहली कृति नहीं बल्कि नयी कहानी की भी पहली कृति है." यह कहानी जीवन को करीब से समझने का एक अवसर देती है. जीवन कोई हसीन ख्वाब नहीं है, जो सदैव सुन्दर और सुखमय रहे. जीवन में तनाव, दुःख, अवसाद, घुटन, एकाकीपन जैसी समस्याएँ भी आती हैं. यह कहानी ऐसे ही कठिन समय में संबल प्रदान करती हुई दिखाई देती है. इस संबंध में डॉ. राजेन्द्र यादव ने 'एक दुनिया

समानांतर' में ठीक ही लिखा है – 'जीवन में सभी कुछ मधुर' मृदुल या 'गुड़ी-गुड़ी' नहीं होता, मजबूरियाँ भी हैं, विद्रोह भी हैं और सबकी जिंदगियाँ एक-दूसरे से उलझी बंधी भी हैं. कभी उसे (नारी को) शरीर की माँग झुका देती है तो कभी अकेलेपन की यातना. इस अकेलेपन की भयावहता को चिह्नित करने वाले प्रमुख कथाकारों में अग्रगण्य हैं निर्मल वर्मा और प्रमुख कहानी है – 'परिंदे'.

8.4.1 कथावस्तु

लतिका से कथा का आरंभ होता है. लतिका शिमला के एक ईसाई कान्वेंट स्कूल में अध्यापिका और लड़कियों के हॉस्टल की वार्डन है. दो महीने के लिए स्कूल की छुट्टियाँ होने जा रही है, लेकिन विगत तीन वर्षों की भाँति इस बार भी लतिका ने फैसला लिया है कि वह यहीं रहेगी. अकेले नितांत अकेले. यह अकेलापन उसका चुना हुआ नहीं है. दरअसल गिरीश नेगी कुमाऊँ रेजिमेंट में कैप्टन और लतिका का प्रेमी था, जिसकी मृत्यु हो गयी है. लतिका तब से ही उसे याद रखने या भूल जाने के ऊहापोह में जीवन जिए चली जा रही है. मिस्टर नेगी के साथ बिताए हुए प्रत्येक पल उसकी स्मृति में रचे-बसे हैं. वह जहाँ होती है वहाँ होती नहीं है. डॉक्टर से बात करना, मिस्टर ह्यूबर्ट से बात करना, पिकनिक में जाना, मिस वुड से बात करना या फिर फादर से बात करने के दरम्यान वह तटस्थ बनी रहती है. मिस्टर ह्यूबर्ट के प्रेम प्रस्ताव को ना तो स्वीकार करती है और ना ही प्रेम पत्र को वापस करती है. लतिका की डगमगाती नाव रूपी ज़िन्दगी को देखकर कहानी का शीर्षक 'परिंदे' उचित ही जान पड़ता है.

प्रस्तुत कथा से स्पष्ट है कि यह विशेष मनःस्थिति की कहानी है. मन का विज्ञान बड़ा ही जटिल होता है. बचपन में खिलौना सुरक्षित स्थान पर रख कर यहाँ वहाँ खोजने का उपक्रम करना और आनंदित होना एक बात है लेकिन वहीं बड़े होकर, उसे याद करने का बहाना करना, जो भूलता जा रहा है, बिलकुल अलग बात है. दिन, महीने बीते जा रहे हैं और लतिका है की उलझी हुई है. बहुत याद करने के बावजूद भी अनजाने में ही सही गिरीश का चेहरा धुँधला पड़ता जा रहा है, जैसे किसी पुरानी तस्वीर के गर्द भरे शीशे को साफ़ कर रही हो. समय गहरे से गहरे घाव को भी भर देता है. लतिका को अब वैसा दर्द नहीं होता जो पहले होता था. वह उस घाव को जान-बुझकर कुरेदती है, जो भरता जा रहा है; बहुत कोशिशों के बावजूद भरता जा रहा है. लतिका के अतरिक्त मुख्य कथावस्तु में कान्वेंट स्कूल और उसका हॉस्टल, पहाड़ी कस्बा और ईसाईयत में डूबा वातावरण है. घटनाएँ अपेक्षाकृत कम हैं. लतिका का हॉस्टल का राउंड लेना, मि. ह्यूबर्ट का संगीत सुनना, पिकनिक, बिजली का न होना, वयस्क हो रही लड़कियों की चुगलबाजी और चर्च में प्रार्थना आदि ही बाहरी और भीतरी घटनाएँ हैं. लेखक का सारा का सारा ध्यान कहानी कहने के बनिस्बत मानसिक स्मृतियों और उससे जूझ रहे अंतर्द्वंद में लगा हुआ है. यह अंतर्द्वंद केवल लतिका का ही नहीं है, बल्कि यह डॉक्टर नेगी, मि. ह्यूबर्ट, मिस वुड के साथ-साथ जूली का भी है, जिसके प्रेम पत्र को लतिका संभाल के उसके तकिए के नीचे रख देती है; जिसके लिफाफे पर लगी है कुमाऊँ रेजिमेंट की मोहर. आधुनिक सन्दर्भों में निरंतर छीज रहे मनुष्य की कहानी कहने में प्रस्तुत कहानी पूर्णतः सफल और सार्थक सिद्ध हुई है.

8.4.2 चरित्र चित्रण

'परिंदे' कहानी में मुख्य पात्रों की संख्या आठ है. लतिका, मिस्टर ह्यूबर्ट, डाक्टर मुखर्जी, मिस वुड, फादर एलमण्ड, करीमुद्दीन, गिरीश नेगी और जूली. इसके अतिरिक्त कुछ और पढ़ने वाली छात्राओं के नाम एकाधिक बार ही आये हैं जैसे – सुधा, हेमंती आदि. प्रस्तुत कहानी के सभी पात्र वहाँ के वातावरण यानी ईसाईयत से ओत-प्रोत हैं. सभी अंग्रेजीदां हैं. सभी उच्च शिक्षित हैं, पर फिर भी एक खालीपन है. एकांत तो भूल जाइए वे चार लोगों के

बीच में भी दुःखी हैं. सभी के अपने दुःख हैं. लतिका का दुःख है कि वह अपने प्रेमी की मृत्यु को ना ही स्वीकार कर पा रही है और ना ही पूरी तरह से भुला पा रही है. मिस्टर ह्यूबर्ट लतिका पर आसक्त हैं, प्रेम पत्र भी देते हैं और लतिका की पूर्व जिंदगी के बारे में जानने के बाद पश्चाताप भी करते हैं – "महीने पहले अचानक उसे ह्यूबर्ट का प्रेम पत्र मिला था भावुक याचना से भरा हुआ पत्र, जिसमें उसने ना जाने क्या कुछ लिखा था, जो कभी उसकी समझ में नहीं आया. उसे ह्यूबर्ट की इस बचकाना हरकत पर हँसी आयी थी, किंतु भीतर-ही-भीतर प्रसन्नता भी हुई थी उसकी उम्र अभी बीती हुई नहीं है, अब भी वह दूसरों को अपनी ओर आकर्षित कर सकती है. ह्यूबर्ट का पत्र पढ़ कर उसे क्रोध नहीं आया, आयी थी केवल ममता. वह चाहती तो उसकी गलतफहमी को दूर करने में देर न लगाती, किंतु कोई शक्ति उसे रोके रहती है, उसके कारण अपने पर विश्वास रहता है, अपने सुख का भ्रम मानो ह्यूबर्ट की गलतफहमी से जुड़ा है." सुख को साधने में सभी पात्र एक दूसरे से टकराते हैं, लेकिन सुख सधता हुआ दिखाई नहीं देता. पढ़ी-लिखी आधुनिक स्त्री होने के बावजूद लतिका अवकाश के दिनों में अपने एकांत रुपी पिंजरे में कैद 'परिंदे' के मानिंद छटपटाती है और इस मनःस्थिति को चित्रित करने में लेखक ने प्रकृति के पल-पल बदलते रुप का सटीक सहारा लिया है – "लतिका को लगा कि जैसे कहीं बहुत दूर बर्फ की चोटियों से परिंदों के झुण्ड नीचे अनजान देशों की ओर उड़े जा रहे हैं. इन दिनों अक्सर उसने अपने कमरे की खिड़की से उन्हें देखा है – "धागे में बँधे चमकीले लट्टूओं की तरह वे एक लम्बी, टेढ़ी-मेढ़ी कतार में उड़े जाते हैं, पहाड़ों की सुनसान नीरवता से परे, उन विचित्र शहरों की ओर जहाँ शायद वह कभी नहीं जायेगी." इस कथा की कथानायिका लतिका दिवंगत प्रेमी गिरीश नेगी से बहुत ज्यादा आबद्ध है. जीवन के संकट के समय 'परिंदे' अपना ठिकाना बदल रहे हैं, लेकिन मनुष्य हो कर भी लतिका अवसाद में जी रही है.

डाक्टर मुखर्जी पात्र की अलग समस्या है. उनकी समस्या विस्थापन से जुड़ी हुई है. वे आधे बर्मी हैं और मृत्यु से पूर्व एक बार बर्मा जाने की इच्छा रखते हैं. पत्नी की मृत्यु हो गई है. शिमला के कुमाऊँ में रहते काफी अर्से हो चुके हैं. उनका दर्द है कि अब वे अपने गाँव-गिराँव चले भी जाएँ तो उन्हें पहचानेगा कौन. मिस वुड और डाक्टर मुखर्जी की सामान्य बात-चीत में लेखक कितनी बड़ी बात कह जाते हैं – "डाक्टर, क्या आप कभी वापिस बर्मा जाने की बात नहीं सोचते?, डाक्टर ने अँगड़ाई ली और करवट बदल कर औंधे मुँह लेट गये. उनकी आँखे मुँद गयी और माथे पर बालों की लटें झूल आयीं. सोचने से क्या होता है मिस वुड... जब बर्मा में था, तब क्या कभी सोचा था कि यहाँ आकर उम्र काटनी होगी? लेकिन डाक्टर, कुछ भी कह लो, अपने देश का सुख कहीं और नहीं मिलता. यहाँ तुम चाहे कितने वर्ष रह लो, अपने को हमेशा अजनबी ही पाओगे. डाक्टर ने सिगार के धुएँ को धीरे-धीरे हवा में छोड़ दिया दरअसल अजनबी तो मैं वहाँ भी समझा जाऊँगा, मिस वुड. इतने वर्षों बाद मुझे कौन पहचानेगा! इस उम्र में नये सिरे से रिश्ते जोड़ना काफी सिरदर्द का काम है..." ठीक ऐसे ही प्रत्येक पात्र की वैयक्तिक समस्याएँ हैं, जो कथानुकूल है. लेखक ने पात्रों के चरित्रांकन में निःसंदेह आंतरिक पक्ष को आधार बनाया है. लतिका और मिस्टर ह्यूबर्ट के चरित्र इसके सर्वोत्तम प्रमाण हैं. हल्की भावुकता, किंचित आदर्श, कुमाऊँ रेजिमेंट के फौजियों की परेड, लड़कियों के रंग-बिरंगे ड्रेस, हँसी-ठहाकों के साथ-साथ पहाड़ी रोमानियत पात्रों के चरित चित्रण में चार चाँद लगाने का काम करते हैं. लेखक ने बड़ी सरलता से पात्रों के परिचय का वर्णन, क्रियाकलाप, बिंब और प्रतिक आदि विभिन्न साधनों के माध्यम से किया है.

8.4.3 संवाद

प्रस्तुत कहानी 'परिंदे' पर्याप्त लम्बी कहानी है, परंतु पात्र सीमित और अंतर्मुखी हैं. खुद में खोए हुए. पात्रों की संवाद अदाएगी इस प्रकार की है कि बस कथा आगे बढती

रहे. संवाद के माध्यम से चौंकाने का कार्य निर्मल वर्मा नहीं करते. संवाद योजना ऐसी है जैसे धीमी आँच पर पक रहा भोजन - सुस्वादु और स्वास्थ्यवर्धक, कहने का तात्पर्य है कि जितने की आवश्यकता है उतना ही संवाद हुआ है. पर फिर भी सभी संवाद पूर्णरूप से गुणयुक्त बन पड़े हैं. कथा, घटनाएँ और पात्रादि की अनुकूलता के कारण कहानी अपने उत्कर्ष को प्राप्त कर पायी है. डाक्टर मुखर्जी और लतिका के संवाद से इसे समझा जा सकता है – "कभी-कभी मैं सोचता हूँ मिस लतिका, किसी चीज को न जानना यदि गलत है, तो जान-बूझकर न भूल पाना, हमेशा जोंक की तरह उससे चिपटे रहना – यह भी गलत है. बर्मा से आते हुए मेरी पत्नी की मृत्यु हुई थी, मुझे अपनी जिंदगी बेकार-सी लगी थी. आज इस बात को अर्सा गुजर गया और जैसा आप देखती हैं, मैं जी रहा हूँ उम्मीद है कि काफी अर्सा और जिऊँगा. जिंदगी काफी दिलचस्प लगती है और यदि उम्र की मजबूरी न होती तो शायद मैं दूसरी शादी करने में भी न हिचकता. इसके बावजूद कौन कह सकता है कि मैं अपनी पत्नी से प्रेम नहीं करता था – आज भी करता हूँ." कहानी के आरंभ में लतिका का प्रवेश लड़कियों के हॉस्टल में होता है. कल सारी लड़कियाँ अपने-अपने घरों को जाने के लिए बेताब हैं और साथ ही अपनी सहेलियों से कुछ महीने के लिए दूर जाने का विछोह भी है. इस विछोह को कम करने के लिए वे सभी हॉस्टल के कमरा नंबर सात (सुधा का कमरा) में एकत्रित हुई हैं और अपने हँसी-ठिठोली में अलमस्त हैं. ठीक इसी समय लतिका जो हॉस्टल की वार्डन है सुधा के कमरे से आ रही आवाजों से ठिठक जाती है. यहाँ लतिका और बाकी एकत्रित लड़कियों के आपसी संवाद से लेखक की संवाद योजना की सरलता, सूक्ष्मता और बारीकी का आभास देखने को मिलता है – "अँधेरे गलियारे में चलते हुए लतिका ठिठक गयी. दीवार का सहारा लेकर उसने लैम्प की बत्ती बढ़ा दी. सीढ़ियों पर उसकी छाया एक बेडौल कटी-फटी आकृति खींचने लगी. सात नंबर कमरे में लड़कियों की बातचीत और हँसी-ठहाकों का स्वर अभी तक आ रहा था. लतिका ने दरवाजा खटखटाया. शोर अचानक बंद हो गया. कौन है?"

लतिका चुप खड़ी रही. कमरे में कुछ देर तक घुसर-पुसर होती रही, फिर दरवाजे की चिटकनी के खुलने का स्वर आया. लतिका कमरे की देहरी से कुछ आगे बढ़ी, लैम्प की झपकती लौ में लड़कियों के चेहरे सिनेमा के परदे पर ठहरे हुए क्लोजअप की भाँती उभरने लगे.

"कमरे में अँधेरा क्यों कर रखा है?" लतिका के स्वर में हल्की-सी झिड़की का आभास था."

"लैम्प में तेल ही खत्म हो गया, मैडम!"

यह सुधा का कमरा था, इसलिए उसे ही उत्तर देना पड़ा. हॉस्टल में शायद वह सबसे अधिक लोकप्रिय थी, क्योंकि सदा छुट्टी के समय या रात को डिनर के बाद आस-पास के कमरों में रहने वाली लड़कियों का जमघट उसी के कमरे में लग जाता था. देर तक गप-शप, हँसी-मज़ाक चलता रहता.

"तेल के लिए करीमुद्दीन से क्यों नहीं कहा?"

"कितनी बार कहा मैडम, लेकिन उसे याद रहे तब तो."

कमरे में हँसी की फुहार एक कोने से दूसरे कोने तक फैल गयी. लतिका के कमरे में आने से अनुशासन की जो घुटन घिर आयी थी वह अचानक बह गयी. करीमुद्दीन हॉस्टल का नौकर था. उसके आलस और काम में टालमटोल करने के किस्से हॉस्टल की लड़कियों में पीढ़ी दर पीढ़ी चले आते थे."

8.4.4 देशकाल और वातावरण

देशकाल और वातवरण इस कहानी की रीढ़ है. कहानी का प्लाट कुमाऊँ जैसे एक छोटे

से पहाड़ी कस्बे का है, जहाँ बिजली को पहुँचने में अभी कम से कम तीन साल लगेंगे. बिजली के अभाव ने कहानी में महत्वपूर्ण अदृश्य भूमिका निभाई है. देशकाल और वातावरण किसी भी कहानी के लिए कितने महत्व का होता है कि यदि इस कहानी में बिजली आ जाए और पहाड़ गायब हो जाए तो कहानी एक पल के लिए भी टिक नहीं पायेगी और धराशायी होकर बिखर जायेगी. कहानी शुरू ही यहीं से होती है – "अँधेरे गलियारे में चलते हुए लतिका ठहर गयी. दीवार का सहारा लेकर उसने लैम्प की बत्ती बढ़ा दी..." इस कहानी का आस्वाद इस अँधेरे वातावरण और पहाड़ी देशकाल की संपृक्त उपज है. एक दूसरी बात यह भी कि बाह्य वातावरण का परिवेश विदेशी है. ईसाईयत और अंग्रेजीदां से भरा हुआ. कान्वेंट स्कूल, स्कूल का हॉस्टल, स्कूल में पढ़ रही लड़कियों के ड्रेस, चर्च, कॉफ़ी, मदिरा आदि की बहुलता, ज्यादातर अंग्रेजी भाषा में संवाद आदि इसको विदेशी बना देते हैं. बाहर से भले ही विदेशीपन का भान हो लेकिन भीतर से पूर्णतः भारतीय मन और मन:स्थिति है. कहानी की मुख्य पात्र लतिका का आतंरिक द्वंद्व, डाक्टर मुखर्जी का पत्नी की मृत्यु के बाद का एकाकीपन और अंतिम इच्छा के रूप में अपने देश बर्मा को देख लेने की ललक, मिस्टर ह्यूबर्ट का लतिका के प्रति प्रेम निवेदन और 'हाँ-ना' की प्रतीक्षा, बीमारी सो अलग, छात्रा जूली का एक फौजी से प्रेम, आलस और पुराने दिनों की याद में खोया हुआ हॉस्टल का नौकर करीमुद्दीन आदि की आंतरिक मन:स्थिति को, भारतीय मानवीय स्थिति कहना गलत न होगा.

8.4.5 भाषा शैली

भाषा विचारों की अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम है. नयी कहानी के कहानीकारों की भाँति निर्मल वर्मा के साहित्य में भी भाषा-शैली के प्रयोग देखने को मिलते हैं. प्रस्तुत कहानी के अधिकांश पात्र स्मृतियों में जीते हैं. उनके स्मृतियों में जीने के कारण वर्मा जी उनका जो सबब खीचते हैं उसे कहानी के शीर्षक से ही समझा जा सकता है – 'परिंदे', यह शब्द कहानी में दो बार आया है. पहली बार शीर्षक के रूप में और दूसरी बार जब हॉस्टल की सारी लड़कियाँ अपने-अपने घरों को जाने के लिए उद्धत हो रहीं हैं, ठीक उसी समय लतिका देखती है – कहीं बहुत दूर बर्फ की चोटियों से 'परिंदों' के झुण्ड नीचे अनजान देशों की ओर उड़े जा रहे हैं. इन दिनों अक्सर उसने अपने कमरे की खिड़की से उन्हें देखा है. धागे में बँधे चमकीले लट्टुओं की तरह वे एक लम्बी, टेढ़ी मेढ़ी कतार में उड़े जाते हैं, पहाड़ों की सुनसान नीरवता से परे, उन विचित्र शहरों की ओर जहाँ शायद वह कभी नहीं जायेगी. 'परिंदों' को उड़ते देख लतिका भी सोच में पड़ जाती है कि वह क्यों विगत कुछ वर्षो से रुकी हुई है? किसका इन्तज़ार है? जो है ही नहीं उसका कैसा इन्तज़ार? इस अंतहीन इन्तज़ार में लतिका छीजती जा रही है. उक्त कहानी की भाषा की एक बड़ी विशेषता है कथा पात्र का वातावरणनुसार ढलना. लेखक ने आंग्ल परिवेश की इस कथा की भाषा में अंग्रेजी का प्रयोग खूब किया है और जहाँ हिंदी के सरल व्यवहारिक शब्द, मुहावरे या उर्दू शब्द की जरूरत है तो बिना किसी लागलपेट के उस शब्द का प्रयोग किया है. यथा, गप-शप, हँसी-मजाक, किरकिरा करना, जबर, बावजूद, पाबंदी आदि.

8.4.6 उद्देश्य

'परिंदे' आतंरिक द्वंद्व की बहुत खुबसूरत कहानी है. 'परिंदे' आज़ाद तन-मन, आज़ाद इच्छाओं की भी कहानी है. मानवीय मन की गहराइयों में दबी दमित आकांक्षाओं, बंधनों से संघर्ष करते हुए स्वतंत्र होने की कथा है. प्रस्तुत कहानी प्रतीकात्मक रूप से व्यक्ति की जड़ता को तोड़ने की भी कथा है. कहानी जहाँ एक तरफ अँधेरे और लतिका के डाँट-फटकार से शुरू होती है, वहीं अंत जूली के पत्र को उसके तकिए के नीचे रखने से है और यहीं से कहानी अपने उद्देश्य में सफल हो जाती है. कहानी का अंत दरअसल एक नए सूरज का

उदय है, जिससे लेखक को बहुत सारी उम्मीदें हैं.

8.5. सारबिंदु

- प्रस्तुत कहानी स्वतन्त्रता, प्रेम और मृत्यु के बीच अठखेलियाँ खेलती जीवन की जीवंत कथा है. यह कहानी केवल पक्षियों की नहीं बल्कि हर उस एक मनुष्य की है जिनके अतीत, वर्तमान और भविष्य के सिरे एक-दूसरे से उलझ गए हैं. वे समझ नहीं पा रहे हैं कि जीवन को कौन-सी दिशा, कौन-सा मोड़ देना है. उन्हें इसमें से कौन-सा सिरा पकड़ कर आगे बढ़ना है. वे किसी न किसी बंधन में बँधे हुए हैं और मुक्ति की कामना रखते हैं.
- प्रस्तुत कहानी में उड़ते हुए 'परिंदों' के चित्रण के माध्यम से लतिका की मन:स्थिति को दर्शाया है. वो भी 'परिंदों' की तरह आज़ाद होना तो चाहती है पर अपने अतीत को भुलाकर आगे नहीं बढ़ पा रही है. वह एक ऐसी खग है जिसको अंतहीन आकाश रूपी भविष्य बुलावा दे रहा है पर वो अपनी मन:स्थिति के झंझावातों में बुरी तरह उलझी हुई है.
- प्रस्तुत कहानी स्वतंत्रता की इच्छा, सामाजिक और मानसिक बंधनों से संघर्ष करना सिखाती है. लतिका और मि. ह्यूबर्ट इच्छाओं और मानसिक बंधनों में बँधे हुए हैं. वे दोनों ही अपने जीवन में कुछ भी तय कर पाने, कोई भी निर्णय ले पाने में अक्षम हैं. डाक्टर मुखर्जी सामाजिक बंधनों में जकड़े हुए हैं.
- प्रस्तुत कहानी सिखाती है कि स्वतंत्रता कितना महत्व रखती है फिर चाहे वह पक्षी की हो याकि मनुष्य की. मनुष्य की मन: स्थिति का उसके जीवन पर गहरा असर होता है. मनुष्यों के हर प्रकार से सक्षम होने के बावजूद भी उनके विचारों की उठा-पटक उन्हें जीवन में आगे नहीं बढ़ने देती है. सफल जीवन के लिए अपने मन को मजबूत रखना बहुत आवश्यक है. अतीत को पीछे छोड़कर जीवन वर्तमान और भविष्य में ही जिया जाता है.

8.6 परीक्षोपयोगी प्रश्नावली

(अ) निम्नलिखित प्रश्न के उत्तर विस्तार से दीजिए

(1) कहानी कला की दृष्टि से 'परिंदे' कहानी की समीक्षा कीजिए

(2) 'परिंदे' कहानी की कथावस्तु अपने शब्दों में लिखते हुए उसका उद्देश्य स्पष्ट कीजिए

(3) लतिका का चरित्र चित्रण कीजिए

(4) 'परिंदे' कहानी का सारांश लिखते हुए उसके शीर्षक की सार्थकता स्पष्ट कीजिए

(5) 'परिंदे' कहानी के पात्रों का विस्तृत परिचय दीजिए

(ब) रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए

(1) 'परिंदे' कहानी की मुख्य नायिका .... है

(2) लतिका .... स्कूल में अध्यापिका है

(3) 'तीन एकांत' .... है

(4) 'धुंध से उठती धुन' .... है

(5) 'कला का जोखिम' .... है

(स) निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए

1. लतिका
2. 'परिंदे' कहानी की भाषा शैली
3. मिस्टर ह्यूबर्ट
4. 'परिंदे' कहानी का चरित्र चित्रण
5. डाक्टर मुखर्जी

(द) संक्षिप्त उत्तर दीजिए

1. क्या कहानी के अंत में लतिका का हृदय परिवर्तन होता है?
2. क्या लेखक अपने उद्देश्य में सफल हुआ है?
3. कहानी में प्रकृति किस प्रकार सहायक की भूमिका में है?

8.7 उपयोगी पाठ्यसामग्री

- 'परिंदे' – निर्मल वर्मा
- कहानी : नयी कहानी – डॉ. नामवर सिंह
- कहानी : स्वरुप और संवेदना – डॉ. राजेन्द्र यादव
- कला का जोखिम – डॉ. निर्मल वर्मा
- दूसरी दुनिया – डॉ. निर्मल वर्मा
- नई कहानी : प्रकृति और पाठ – श्री सुरेन्द्र
- हिंदी कहानी : बदलते प्रतिमान – डॉ. रघुवीर दयाल
- नयी कहानी के विविध प्रयोग – डॉ. सितांश
- हिंदी कहानी के सौ वर्ष – डॉ. वेदप्रकाश

इकाई 9 'राजा निरबंसिया' – कमलेश्वर

रूपरेखा

9.1 उद्देश्य

9.2 प्रस्तावना

9.3 लेखक परिचय

9.4 'राजा निरबंसिया' कहानी : कथाकार

9.5 'राजा निरबंसिया' कहानी : विशेषता एवं मूल्यांकन

9.6 सारबिंदु

9.7 परीक्षोपयोगी प्रश्नावली

9.8 उपयोगी पाठ्यसामग्री

9.1 उद्देश्य

विद्यार्थी मित्रो! इस इकाई के अध्ययन करने के बाद आप –

– कमलेश्वर का जीवन परिचय प्राप्त कर सकेंगे.

– कमलेश्वर के लेखन कार्य की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे.

– नयी कहानी आंदोलन का सामान्य परिचय प्राप्त कर सकेंगे.

– 'राजा निरबंसिया' कहानी के बारे में जान सकेंगे.

– 'राजा निरबंसिया' कहानी के माध्यम से सामंती मूल्यों और नए मूल्यों के बीच द्वन्द्व से परिचित हो सकेंगे.

9.2 प्रस्तावना

नयी कहानी आमतौर पर सन् 1950-1965 ई. के बीच नए दृष्टिकोण से रची गई कहानियाँ हैं. यह विभिन्न प्रकार के वाद-विवाद से गुजरता हुआ कहानीकारों के व्यवस्थित और संगठित वैचारिक प्रयास से एक आंदोलन के रूप में उभरता है. इन कहानीकारों में राजेन्द्र यादव, कमलेश्वर और मोहन राकेश प्रमुख हैं.

हिन्दी कहानी के इतिहास में कमलेश्वर को एक सशक्त हस्ताक्षर के रूप में माना जाता है. परंपरा से चली आ रही हिन्दी कहानी में युगांतकारी परिवर्तन करने के साथ ही व्यक्ति-चेतना के निर्माण में मध्यवर्गीय समाज की परिस्थितियों की भूमिका को दर्शाने वाली कहानियों की एक नई जमीन तैयार की. काठी हो या शिल्प दोनों स्तरों पर परंपरा से चली आ रही परिपाटी को तोड़ते हुए नये कथ्य और शिल्प का निर्माण करते हुए अनेक कहानियाँ रची गईं. इनकी कहानियाँ निम्न मध्यवर्गीय कस्बाई व्यक्ति-पात्र के जीवन-संघर्ष का प्रमाणिक दस्तावेज़ हैं. कमलेश्वर नयी कहानी आंदोलन के कहानीकार हैं और उनकी कहानी 'राजा निरबंसिया' नई कहानी में चर्चित और प्रतिष्ठित कहानी है; जो मध्यवर्गीय समाज के पुराने और नए मूल्यों के द्वन्द्व को सूक्ष्मता से दर्शाती है. नयी कहानी आंदोलन हिन्दी साहित्य के विभिन्न कहानी आंदोलनों में सबसे प्रमुख आंदोलन है. नयी कहानी में 'नयी' शब्द केवल कालवाची विशेषण नहीं है जो पिछली या पुरानी और अगली या नयी के समय को दर्शाने के लिए प्रयुक्त हुआ हो. यहाँ नयी जीवन के प्रति नये दृष्टिकोण को अभिव्यक्त करने के लिए प्रयुक्त किया गया विशेषण है. यहाँ नयी - आधुनिक चेतना के पर्याय के रूप में प्रयुक्त हुआ है. अत:

नयी शब्द सिर्फ समसामयिक के लिए नहीं, बल्कि नये दृष्टिकोण, नये मूल्यबोध और नयी चेतना के लिए प्रयुक्त हुआ है. नये कथाकार कमलेश्वर 'नयी कहानी' की भूमिका में लिखते हैं - "स्वतंत्रता-प्राप्ति के साथ ही देश का वैचारिक पुनर्जन्म हुआ था. आज़ादी केवल राजनीतिक मूल्य के रूप में स्वीकृत नहीं हुई थी, बल्कि विचारों की एक नवक्रांति का सपना भी उससे जुड़ा हुआ था. लोकतंत्र ने जब व्यक्ति-व्यक्ति को मतदान का अधिकार दिया, तो वैयक्तिक सत्ता (व्यक्तिगत नहीं) ने अपनी गरिमा का अनुभव किया और पुरातन विधि-विधान, विचार-पद्धति, समाज-संरचना और नैतिक प्रतिमानों के आगे अपने-अपने प्रश्न-चिन्ह लगा दिये. उधर इतिहास के क्रम में जो कुछ झूठा, विगलित, कुण्ठित और रूढ़ था, उसे अस्वीकार किया गया और भारतीय संविधान ने नये समाज की संरचना की वैचारिक नींव डाली."

कमलेश्वर ने हिंदी कहानी को ऐय्यारी, आदर्श एवं पूर्वाग्रह से जोड़ने की जगह उसे जीवन के यथार्थ से जोड़ने का कार्य किया. भोगे हुए यथार्थ को कहानी का विषय-वस्तु बनाकर नये शिल्प नये रचना-विधान के जरिए मध्यवर्गीय समाज की समस्याओं को दर्शाने के लिए सूक्ष्म कथा तंतुओं को अपने लेखन में स्थान दिया. नयी कहानी आंदोलन की कहानियों की विशेषताओं को रेखांकित करते हुए कमलेश्वर लिखते हैं- "मानवीय मूल्यों के संरक्षण, जीवन शक्ति के परिप्रेषण एवं सामाजिक नव-निर्माण की जितनी उत्कट प्यास इस पीढ़ी के कहानीकारों में है. वह पिछले दौर में नहीं थी." इस उत्कट प्यास का परिणाम वस्तु के चयन पर होता ही है, जब इस प्रकार की किसी विशिष्ट मंजिल को कथाकार अपने सम्मुख रखता है, तब उसके अनुकूल ही वह वस्तु का चयन करता है, इसी कारण सामाजिकता और सोद्देश्यता के कारण कथाएँ प्रचारात्मक नहीं हुई हैं. कलात्मकता के अपेक्षित स्तर तक यह कहानियाँ अपने-आप पहुँच जाती हैं. नयी कहानी अपने परिवेश के लिए जागरूक है. जीवन की जटिलता हो या फिर कड़वा यथार्थ सभी मनोभावों और अंतर्द्वंद्वों को पाठक तक पहुँचाने के लिए वह प्रतिबद्ध है.

9.3 लेखक परिचय

बीसवीं सदी के सशक्त हस्ताक्षर कमलेश्वर का जन्म 6 जनवरी 1932 ई. को उत्तर प्रदेश के मैनपुरी जिले में हुआ था. श्री जगदंबा प्रसाद और श्रीमती शांति देवी की सबसे छोटी संतान कमलेश्वर थे. इनका पूरा नाम कमलेश्वर प्रसाद सक्सेना था. बचपन में ही पिता जी का देहांत हो गया जिससे बचपन अभाव और संघर्ष के साथ बीता. आरंभिक शिक्षा मैनपुरी से प्राप्त करने के बाद उच्च शिक्षा के लिए जब कमलेश्वर इलाहाबाद गए तो वहाँ वे क्रांतिकारियों के संपर्क में आए जिससे उनके जीवन और विचारों को एक नई दिशा मिली. कमलेश्वर के अनुसार - 'जनक्रांति' अखबार निकलता है और उसमें क्रांतिकारियों की जीवनियाँ लिखना शुरू करता हूँ. वहीं पार्टी के दफ्तर में बैठ-बैठ कर तमाम किताबें पढ़ता हूँ और अपनी असली लड़ाई को पहचानता हूँ. जिन्दगी में सब कुछ है, सिर्फ पैसे नहीं हैं, पर अब पैसों की कमी उतनी नहीं खलती. इस जिन्दगी में यह दिक्कतें उठानी ही पड़ती हैं. हम में से किसी के पास पैसा नहीं है, कपड़ा नहीं है, जूते नहीं हैं, बिस्तर नहीं है. प्रस्ताव हैं, वक्तव्य हैं आंदोलन है इस लिए सबकुछ है.' सन् 1952 ई. में इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद में एम. ए. हिन्दी में प्रवेश लिया. हिन्दी से कमलेश्वर का एक संबंध बना और वे एक संभावनाशील कहानीकार के रूप में उभरे. कमलेश्वर अपने हिन्दी विषय से जुड़ने की कहानी बताते हैं - "सन् 1952 में मैं हिंदी में दाखिला ले चुका था, क्योंकि मुझे देरी होने के कारण किसी और विषय में दाखिला नहीं मिला था. अपना एक वर्ष बचाने के लिए मैंने हिंदी में दाखिला ले लिया था और जो दाखिला लिया तो फिर मैं हिंदी का ही बनकर रह गया. मैं शुरू से विज्ञान का विद्यार्थी था पर हिंदी नें मुझे पहचान दी. यह पहचान विज्ञान नहीं दे पाता." अपनी मेहनत से अपने हुनर को धार देते हुए कमलेश्वर ने आकाशवाणी, दूरदर्शन, फिल्मों

तथा पत्रकारिता के क्षेत्र में भी कार्य किया. कमलेश्वर अनवरत यात्रा करते रहते थे जिससे कहानियों के लिए विभिन्न विषय मिलते रहते थे. कमलेश्वर के संघर्ष के दिनों के साथी दुष्यंत कुमार के अनुसार - "उसकी हर कहानी जीवन के सन्दर्भों से जुड़ी हुई है. उसकी शायद ही कोई ऐसी कहानी हो जिसके सूत्र जिंदगी में न हों, क्योंकि वह बहुत खूबी से अन्तर्विरोधों को पकड़ता है. उसकी लगभग हर कहानी का एक वास्तविक स्थल है जहाँ से वह उसे उठाता है और अपने कथ्य की कल्पना अपेक्षाओं के साथ अभिव्यक्त कर देता है. मुझे बहुत-सी वे घटनाएँ, लोग, स्थितियाँ, विचार, सन्दर्भ, पात्र आदि याद हैं जिन्होंने उसकी सशक्त कहानियों को जन्म दिया है. कमलेश्वर इस मामले में बंजारा हैं, क्योंकि वे अनवरत यात्रा पर रहते हैं. कमलेश्वर की पहली कहानी 'फरार' है जो सन् 1945 ई. में 'जयभारत' पत्रिका में प्रकाशित हुई. यहाँ से उनके लेखन कार्य का सिलसिला शुरु हुआ जो उनकी अधूरी रचना 'अंतिम सफर' उपन्यास से समाप्त हुआ जिसे तेजपाल सिंह ने पूरा किया. कमलेश्वर ने कई कहानियाँ लिखी जो उनके निम्नलिखित कहानी संग्रह में संग्रहित हैं:-

कहानी संग्रह

'राजा निरबंसिया' (1957), 'कसबे का आदमी' (1957), 'खोई हुई दिशाएँ' (1963), 'मांस का दरिया' (1966), 'बयान' (1973), 'आजादी मुबारक,' 'जार्ज पंचम की नाक' (1969), 'अपना एकांत साँप,' 'नीली झील,' 'जोखिम,' 'नागमणि,' 'आसक्ति,' 'जिन्दा मुर्दे' (1969), 'मुर्दों की दुनिया,' 'स्मारक, इतने अच्छे दिन' (1970), 'कथा प्रस्थान' (1990) 'कोहरा' (1969).

उपन्यास

'एक सड़क सत्तावन गलियाँ' - (1957), 'तीसरा आदमी' - (1976), 'डाक बंगला' - (1959), 'समुद्र में खोया हुआ आदमी'-(1967), 'काली आँधी'-1974, 'आगामी अतीत' - (1976), 'सुबह... दोपहर... शाम' - (1982), 'रेगिस्तान' - (1988), 'लौटे हुए मुसाफ़िर' - (1961), 'वही बात' - (1980), 'एक और चंद्रकांता', 'कितने पाकिस्तान' - (2000), 'अंतिम सफर'.

नाटक

कमलेश्वर ने कुल तीन नाटकों की रचना की है – 'अधूरी आवाज़', 'रेत पर लिखे नाम', 'हिंदोस्ता हमारा'.

कमलेश्वर ने फिल्मों के संवाद, कहानी या पटकथा लेखन का कार्य भी किया.

मौसम (1915, कहानी/पटकथा)

आँधी (1975, पटकथा)

राम, बलराम (1981, संवाद पटकथा)

साजन की सहेली (1981, संवाद पटकथा)

सौतन (1983, संवाद)

रंगबिरंगी (1983, पटकथा)

कमलेश्वर ने 'सारिका', 'धर्मयुग', 'जागरण', और 'दैनिक भास्कर' आदि पत्रकारिताओं का सम्पादन किया.

सन् 2003 ई. में कमलेश्वर को 'कितने पाकिस्तान' (उपन्यास) के लिए 'साहित्य अकादमी पुरस्कार' से सम्मानित किया गया. सन् 2005 ई. में 'पद्मभूषण' सम्मान दिया गया है. 27 जनवरी, 2007 को कमलेश्वर का स्वर्गवास हुआ.

9.4 'राजा निरबंसिया' : कथासार

राजा निरबंसिया कहानी कमलेश्वर के द्वारा रचित कहानी है जिसका प्रकाशन सन् 1957 ई. में हुआ. इस कहानी में एक साथ दो कथाएँ चलती हैं. पहली कहानी लेखक की माँ सुनाती है राजा निरबंसिया की कहानी. राजा की रानी का नाम लक्ष्मी था. वह बहुत ही सुंदर थी. एक दिन राजा शिकार के लिए जंगल में जाते हैं. बहुत देर तक वह वापस नहीं आते हैं तो रानी को चिंता होने लगती है रानी अपने एक मंत्री और सिपाहियों के साथ राजा को ढूँढ़ने जाती है. बहुत ढूँढ़ने के बाद भी रानी को राजा नहीं मिलते हैं तो वह निराश होकर महल वापस आ जाती है लेकिन महल आकर वह देखती हैं कि राजा तो पहले ही महल में आ चुके हैं. राजा का रानी पर से विश्वास डगमगा जाता है वह कहता है कि एक रानी को किसी मंत्री या सिपाही के साथ अकेले नहीं जाना चाहिए था. राजा के मन में रानी के प्रति शंका घर कर जाती है. जब दूसरी बार राजा शिकार के लिए निकलते हैं. उसी रात रानी को सपना हुआ कि कल की रात तेरी मनोकामना पूरी होने वाली है. रानी बहुत पछता रही थी. पर फ़ौरन ही रानी राजा को खोजती-खोजती उस सराय में पहुँच गईं, जहाँ वह टिके हुए थे. रानी भेस बदलकर सेवा करने वाली भटियारिन बनकर राजा के पास रात में पहुँची. रातभर उनके साथ रही और सुबह राजा के जगने से पहले सराय छोड़ महल में लौट गईं. राजा सुबह उठकर दूसरे देश की ओर चले गए. दो ही दिनों में राजा के निकल जाने की खबर राज्य में फैल गई, राजा निकल गए, चारों तरफ़ यही खबर थी... राजा और रानी में संभोग होता है लेकिन राजा इस बार वापस महल लौटकर नहीं आता है रानी एक संतान को जन्म देती है. राजा जब बहुत सालों बाद अपने राज्य में वापस आते हैं तब वह कहता है - 'मैं तो यहां था ही नहीं तो रानी को पुत्र प्राप्ति कैसे हो सकती है?' रानी का सतीत्व जाग जाता है और वह अपनी देवी माँ के पास जाकर याचना करने लगती है. देवी प्रसन्न होकर उस लड़के को बालक बना देती है तब राजा को पता चलता है कि यह उसी का पुत्र है.

दूसरी जो मुख्य कथा है वह जगपति और चंदा की है. दोनों अच्छे परिवार से हैं और पति-पत्नी हैं. एक दिन उनके घर पर डकैती पड़ जाती है जब डकैती होती है वह मायके या किसी रिश्तेदार के यहाँ गई होती है. इस हादसे के दौरान जगपति की जांध में गोली लग जाती है इस कारण उसको अस्पताल में भर्ती कराया जाता है किंतु चोरी होने के कारण उनके पास इलाज कराने के लिए पैसे नहीं होते. चंदा अपने मायके से आकर अपने पति की सेवा में लग जाती है. अस्पताल का खर्चा और घर संभालना अकेली चंदा को बहुत बड़ा संघर्ष करना पड़ता है. जगपति स्वाभिमानी चरित्र का आदमी वह किसी का भी उधार या कर्ज नहीं लेना चाहता - 'कर्ज लेकर मेरा इलाज हो गया और मैं ठीक भी हो गया तो मैं ऊपर से तो ठीक हो जाऊंगा लेकिन मेरा मन हमेशा कचोटता रहेगा' ऐसा जगपति अपनी पत्नी चंदा को कहता है. तभी उनके जीवन में बच्चन सिंह का प्रवेश होता है. वह स्त्री की मजबूरी का फायदा उठाना चाहता है. बच्चन सिंह एक कंपाउंडर है. बच्चन सिंह की बुरी नजर चंदा के शरीर पर पड़ती है जगपति के इलाज के बहाने वो चंदा को देखता रहता है अपनी बातों से चंदा को प्रभावित करना चाहता है. चंदा से एक भी रुपया नहीं लेता है और सारी दवाइयों का खर्चा स्वयं उठाता है. चंदा अपने पति का मन समझती है, वह अपने पति से ऐसा नहीं कह सकती है कि बच्चन सिंह ने मदद की है इस कारण पति के पूछने पर की इतनी सारी दवाइयाँ और इलाज किस तरह से हो रहा है? कहाँ से पैसे आ रहे हैं? तो वह जगपति को उत्तर देती है - 'मैंने अपने हाथों के दो कंगन बेच दिए हैं. चंदा के मन में बच्चन सिंह के प्रति कोई आकर्षण नहीं है. वह बच्चन सिंह को पैसे के

बदले में कंगन देने जाती है मगर बच्चन सिंह कंगन नहीं लेता. जगपति अब ठीक होकर घर वापस आ जाता है अब बच्चन सिंह का जगपति और चंदा के जीवन में हस्तक्षेप बढ़ने लगता है. चंदा उसकी मदद के कारण, उसकी बातों के कारण उसे अच्छा व्यक्ति मान बैठी है. जगपति के मन में बच्चन सिंह के प्रति शंका उत्पन्न होती है और एक दिन उसे घर में वह कंगन मिल जाते हैं, कंगन देखकर उसकी शंका यकीन में बदल जाती है. उसके पास अभी कोई काम धंधा भी नहीं था जिस वकील के यहाँ वह मोहरीर का काम करता था नौकरी पर इतने दिन ना जाने से वह काम भी हाथ से चला गया अब जब भी वह अपने सामने बच्चन सिंह को देखता है तब उसे घुटन होने लगती है. एक दिन पता चलता है कि चंदा गर्भवती हो गई है. जगपति को लगता है कि यह तो मेरा बच्चा है ही नहीं. बच्चन सिंह के घर पर बार-बार आने से मोहल्ले की स्त्रियाँ भी बातें बनाती हैं कि यह बच्चा तो उस बच्चन सिंह का ही होगा. चंदा और जगपति के रिश्तें में दरार पड़ गई है और चंदा अपने मायके चली जाती है. चंदा को कुछ दिनों बाद लड़का होता है. जगपति लकड़ियों का बिजनेस करने लगता है जगपति को अपने ससुराल के व्यक्तियों से पता चलता है कि चंदा बच्चे के साथ किसी और की होने जा रही है. वह लकड़ी वाला व्यक्ति जगपति को सलाह देता है कि तुम जाकर अपने बच्चे को लेकर आ जाओ . जगपति को लगता है कि जब वह मेरा बच्चा है ही नहीं तो मैं उसे क्यों लेकर आऊँ? किस हक से लेकर आऊँ? उसका दूसरा मन यह भी कहता है कि ठीक है बच्चा अपना नहीं है तो क्या हुआ लेकिन चंदा तो अपनी है. वह घर में अकेला सोच रहा होता है उसके जीवन में निराशा और घुटन आ गई है अभी भी वह कर्ज में डूबा हुआ है क्योंकि जिस व्यक्ति का मन शांत नहीं होता है तो वह अच्छा काम करके पैसे भी नहीं कमा पाता और इसका असर उसके जीवन पर होने लगता है. निराशा के कारण वह आत्महत्या कर लेता है. आत्महत्या से पहले दो चिट्ठियाँ लिखकर जाता है. एक चिट्ठी चंदा के नाम लिखता है और दूसरी चिट्ठी पुलिस या कानून के लिए लिखता है. पहली चिट्ठी में चंदा के लिए लिखता है कि तुम अपने बच्चे को लेकर वापस आ जाओ मैंने अपने पापों का प्रायश्चित कर लिया है बच्चे को जरूर लेकर आना मेरा अंतिम दर्शन करने के लिए. दूसरी चिट्ठी में लिखता है 'मुझे किसी ने मारा नहीं है मैं अपनी मृत्यु के लिए खुद ही जिम्मेदार हूँ. मेरी लाश को तब तक ना जलाया जाए जब तक चंदा बच्चे को लेकर ना आ जाए . और उस बच्चे के हाथों से ही मुझे मुखाग्नि दी जाए यही मेरी अंतिम इच्छा है.'

कहानी यहीं समाप्त होती है और कुछ.... (डॉट) के निशान लेखक कहानी के अंत में लगाता है जिससे संकेतपूर्ण कहानी के कुछ और आगे बढ़ने और पाठक के लिए बहुत सारे सवाल छोड़ता है.

9.5 'राजा निरबंसिया' कहानी : विशेषता एवं मूल्यांकन

नयी कहानी का पसंदीदा विषय प्रेम का विभिन्न रूप है. इसलिए इस दौर की कहानियों में प्रेम के विविध रूप मिलते हैं. नयी कहानी में स्त्री-पुरुष के बनते-बिगड़ते संबंधों को लेकर अनेकों कहानियाँ लिखी गई हैं जो पुरानी मान्यताओं को तोड़ते हुए प्रेम के अनेक रूप प्रस्तुत करती है, जैसे- 'परिंदे' कहानी में एकनिष्ठ, एकाकी, एकांतिक प्रेम को प्रस्तुत किया गया है. फणीश्वरनाथ 'रेणु' की कहानी 'तीसरी कसम' में प्रेम का लोकरस रूप दर्शाया गया है. शिवप्रसाद सिंह की कहानी 'नन्हों' में प्रेम का स्वरूप पीड़ा वाला है. इस कहानी में प्रेम और द्वेष का द्वन्द्व दर्शाया गया है. कहानी 'मछलियाँ' में प्रेमिका का सबल रूप दर्शाया गया है जो अपने प्रेमी से मिलने अमेरिका पहुँच जाती है. हिन्दी कहानी में इस प्रकार का सबल स्त्री रूप दुर्लभ है. 'यही सच है' कहानी में प्रेम में नारी के मानसिक द्वन्द्व का चित्रण हुआ है.

राजा निरबंसिया एक रोमांचक और दारुण कथा है. इसमें स्त्री-पुरुष संबंधों में सामाजिक और आर्थिक कारणों से आए बदलाव को दर्शाया है. इस कहानी में दो कथा है एक राजा और उसकी रानी लक्ष्मी की कहानी तथा दूसरी जगपति और चंदा की कहानी. दो अलग-अलग समय की कथाएँ लेकिन दोनों की मनोदशाएँ एक-सी परंतु दोनों कथाओं की प्रतिक्रिया भिन्न है. पहली कथा में रानी के तपस्या करने से जब राजा को रानी के सतीत्व का परिचय मिल जाता है तब वह बालक और रानी को अपनाकर फिर से अपना राज-काज संभाल लेता है. एक रानी के नाम से और कार्य करता है. बड़ा मंदिर बनवाता है और दूसरा राज्य के नए सिक्कों पर बड़े राजकुमार का नाम खुदवाकर चालू करता है. दूसरी कथा में भी जगपति दो कार्य करता है, दो पर्चे लिखता है एक चंदा के नाम जिसमें लिखा था "चंदा, मेरी अंतिम चाह यही है कि तुम बच्चे को लेकर चली आना... अभी एक-दो दिन मेरी लाश की दुर्गति होगी, तब तक तुम आ सकोगी. चंदा आदमी को पाप नहीं, पश्चाताप मारता है, मैं बहुत पहले मर चुका था. बच्चे को लेकर जरुर चली आना." कानून को उसने लिखा था- "किसी ने मुझे मारा नहीं है, किसी आदमी ने नहीं. मैं जानता हूँ कि मेरे ज़हर की पहचान करने के लिए मेरा सीना चीरा जाएगा. उसमें ज़हर है. मैंने अफ़ीम नहीं, रुपए खाए हैं. उन रुपयों में कर्ज का ज़हर था, उसी ने मुझे मारा है. मेरी लाश तब तक न जलाई जाए, जब तक चंदा बच्चे को लेकर न आ जाए. आग बच्चे से दिलवाई जाए. बस."

यहाँ प्रतिक्रिया अलग है जहाँ राजा बालक और रानी को अपनाकर फिर से अपना राज-काज संभाल लेता है, बड़ा मंदिर बनवाता है और राज्य के लिए राजकुमार के नाम से नए सिक्के चलवाता है. वहीं जगपति अपने मानसिक अंतर्द्वंद्व से हार जाता है और आत्महत्या कर लेता है.

नयी कहानी में संबंध-विघटन के मुद्दों पर लिखी गई कहानियाँ हैं इसलिए ज्यादातर कहानियों में संबंध जुड़ते नहीं बल्कि टूटते हैं फिर वह टूटन संयुक्त परिवार का हो, एकल परिवार का या फिर प्रेम की डोर का. यह अंतर्द्वंद्वों को सूक्ष्मता से प्रस्तुत करता है. कमलेश्वर ने 'राजा निरबंसिया' कहानी के माध्यम से भारतीय निम्न मध्यवर्ग की त्रासदी और मोहभंग को सूक्ष्मता से दर्शाया है. जगपति आर्थिक रुप से कमजोर है. इस स्थिति में वह सोचता है – 'शरीर का पिंजरा है, जो कुछ माँगता है, कुछ ! और वह सोचता, यह कुछ क्या है? सुख? शायद हाँ, शायद नहीं. वह तो दुःख में भी जी सकने का आदी है, अभावों में जीवित रह सकने वाला आश्चर्यजनक कीड़ा है. तो फिर वासना? शायद हाँ, शायद नहीं . चंदा का शरीर लेकर उसने उस क्षणिकता को भी देखा है. यहाँ कमलेश्वर मध्यवर्गीय पात्र की वर्गीय स्थिति और मानसिक स्थिति का चित्रण करते हैं. आर्थिक स्थिति के कारण पात्रों के भीतर उत्पन्न होने वाले मनोभावों को दर्शाने के साथ-साथ समाज के विषमतामूलक-व्यवस्था के दंश का चित्रण सूक्ष्मता से किया है.

लेखक इस कहानी में आर्थिक स्थिति के कारण निम्न मध्यवर्गीय पात्रों के भीतर बनने वाले मनोभावों को दर्शाने के साथ-साथ विषमतामूलक व्यवस्था के दंश के बीच उनकी वर्गीय स्थिति और मानसिकता को सूक्ष्मता से चित्रित किया है. आज का निम्न मध्यवर्ग का व्यक्ति उस घर में पैदा नहीं हुआ जहाँ सिर्फ बोलकर शासन किया जाता था, सिर्फ माँगकर जीने वाले होते थे. आज वह उस घर का है जो सिर्फ काम करना चाहता है काम करना ही उसकी इच्छा है वह बैठ कर नहीं काम कर के सुख भोगना चाहता है. यहाँ लेखक ने भारतीय सामाजिक व्यवस्था पर प्रहार करते हुए उसके व्यवस्था की बखिया उधेड़ी है जो असमानता की रस्सी से बँधी हुई है. आर्थिक रुप से असहाय जगपति को अपने व्यवसाय के लिए बच्चन सिंह से आर्थिक सहायता लेनी पड़ती है. गाँव के तालाब के दक्षिण की ओर जगपति की टाल लगाता है लकड़ी. मक्कार बच्चन सिंह के अस्तित्व के सामने जगपति का अस्तित्व विवश

और डूबा-सा लगता है. अक्सर संध्या के समय बच्चन सिंह उसके घर-बिक्री-व्यापार की बात करने चला आता. चंदा खाते वक्त उस पर ध्यान न देकर बच्चन सिंह की पहवाह ज्यादा करती. हीनभावना में यह बात उसे और भी कचोटती. रात में खाना खाकर जगपति टाल पर सोने के लिए चला जाता. चोरी-चमारी का डर था और कोई चौकीदार अभी तक मिला नहीं था. अपने जीवन की सार्थकता, परिवेश की व्यर्थता पर मन ही मन तर्क-वितर्क करता. अनायास उसका दिल भर-भर आता. पता नहीं, कौन-कौन से दर्द एक दूसरे से मिलकर तरह-तरह की टीस, चटख और ऐंठन पैदा करने लगते. जगपति विवश है, यथार्थ और कल्पना के स्तर पर उसे अपना अस्तित्व बीभत्स नजर आता है.

आधुनिक कथा का नायक अपने जीवन की त्रासदी का मुकाबला जीवन से पलायन करके आत्मघात से करता है. वह समाज के ताने झेलता है जिससे उसे जीवन असंभव-सा प्रतीत होने लगता है. परंतु इतना सब कुछ सहते हुए भी वह परंपरागत मूल्यों को छोड़ नहीं पाता है, जिसमें औलाद की कामना है औलाद से मुखाग्नि पाने की कामना है. इसी अंतर्द्वंद्व को कहानीकार पाठक के समक्ष प्रस्तुत करता है.

9.6 सारबिंदु

नयी कहानी आधुनिक कथासाहित्य का वह साहित्यिक आंदोलन है जो नये दृष्टिकोण, नये शिल्प के माध्यम से इस अंतर्द्वंद्व को देखता है और उसे पाठक के समक्ष प्रस्तुत करता है. इस कहानी की रचना में नए शिल्प का प्रयोग देखा जा सकता है. 'राजा निरबंसिया' कहानी कमलेश्वर के द्वारा रचित कहानी है जिसका प्रकाशन सन् 1957 ई. में हुआ. दो समानांतर कहानियाँ कथा के केंद्र में हैं. माँ, एक राजा-रानी की कहानी सुनाती है जो पौराणिक कथा-कथन शैली में है और दूसरी कहानी जो जगपति-चंदा की कहानी है. नए मूल्य और पुराने मूल्यों का अंतद्व भारतीय परिवेश में रचा-बसा है. यह कहानी आधुनिक जीवन-संघर्ष और मानसिक द्वन्द्व को दर्शाने में और एक संदेश छोड़ने में सफल हुई है. आधुनिक युग में आर्थिक स्थिति की महत्ता इतनी अधिक हो गई है कि वह आत्मीय संबंधों को तहस-नहस कर देती है.

9.7 परीक्षोपयोगी प्रश्नावली

- **बोध प्रश्न**

(1) नयी कहानी आंदोलन क्या है?

(2) कमलेश्वर के रचना-संसार के बारे में बतलाइए

(3) 'राजा निरबंसिया' कहानी का कथासार क्या है?

(4) 'राजा निरबंसिया' कहानी का मूल्यांकन कीजिए

- **मिलान करें**

(1)	धर्मवीर भारती	(क)	'परिंदे'
(2)	शानी	(ख)	'सेलर'
(3)	रामकुमार	(ग)	'दूध और दवा'
(4)	निर्मल वर्मा	(घ)	'गुलकी बन्नो'
(5)	मार्कण्डेय	(ङ)	'एक नाव के यात्री'

- **रिक्त स्थान की पूर्ति करें**

(1) राजा की रानी...................... के वेश में राजा से मिली. (भट्टरिन, सेविका)

(2) जगपति........................ की शादी में गया था. (तोताराम, दयाराम)

(3) राजा आखेट से हमेशा........................ वापस आ जाता था.(दूसरे रोज, सातवें रोज)

(4) जगपति ने........................ का धंधा शुरू किया था. (तेल, लकड़ी)

(5) जगपति ने........................ पत्र लिखे. (एक, दो)

9.8 उपयोगी पाठ्यसामग्री

- नई कहानी : संदर्भ और प्रकृति (सं.) देवीशंकर अवस्थी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली
- नयी कहानी : पुनर्विचार, मधुरेश, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली
- हिन्दी कहानी : अंतरंग पहचान, रामदरश मिश्र, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली
- कहानी : नई कहानी, नामवर सिंह, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद
- कुछ कहानियाँ : कुछ विचार, विश्वनाथ त्रिपाठी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली

इकाई 10 'कोसी का घटवार' – शेखर जोशी

रूपरेखा

10.1 उद्देश्य

10.2 प्रस्तावना

10.3 लेखक परिचय

10.3.1 जीवन परिचय

10.3.2 कृतित्व परिचय

10.4 'कोसी का घटवार' कहानी की तात्विक समीक्षा

10.4.1 कथावस्तु

10.4.2 चरित्र चित्रण

10.4.3 संवाद

10.4.4 देशकाल

10.4.5 भाषा शैली

10.4.6 उद्देश्य

10.5 सारबिंदु

10.6 परीक्षोपयोगी प्रश्नावली

10.7 उपयोगी पाठ्यसामग्री

10.1 उद्देश्य

विद्यार्थी मित्रो! हिंदी भाषा एवं साहित्य के प्रति आपकी रुचि को और अधिक विकसित और प्रगाढ़ करने के लिए इस इकाई के अंतर्गत शेखर जोशी की प्रसिद्ध कहानी 'कोसी का घटवार' रखी गई है. जिसका आप अध्ययन करने जा रहे हैं. इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- शेखर जोशी का जीवन परिचय प्राप्त कर सकेंगे.
- शेखर जोशी के साहित्य एवं नयी कहानी आंदोलन में उनकी भूमिका के बारे में जान सकेंगे.
- शेखर जोशी के साहित्य से परिचित होंगे.
- कहानी 'कोसी का घटवार' की कथावस्तु को जान सकेंगे.
- कहानी कला के तत्वों के आधार पर 'कोसी का घटवार' कहानी की समीक्षा से रू-ब-रू हो पाएँगे.

10.2 प्रस्तावना

नयी कहानी को गाँव से जोड़ने का श्रेय लेखक शेखर जोशी को जाता है. उन्होंने पहाड़ी क्षेत्र के जीवन, संघर्ष, गरीबी, मजदूरों की स्थिति, सामाजिक समस्याओं, विमर्श और जाति से जुड़ी रूढ़ियों को अपनी कहानियों का विषय बनाया. 'कोसी का घटवार' शेखर जोशी की एक प्रसिद्ध कहानी है, जिसमें ग्रामीण और पहाड़ी जीवन को मार्मिक रूप से चित्रित किया गया है. इस कहानी में गुसांईं नामक व्यक्ति के लछमा के प्रति अटूट प्रेम को दर्शाया

गया है. यह प्रेम निःस्वार्थ समर्पण और त्याग की भावना से परिपूर्ण है, जो प्रेम को उदात्त और व्यापक स्वरूप प्रदान करता है.

कहानी में ग्रामीण जीवन का मार्मिक चित्रण किया गया है. प्रेम और त्याग की भावना को दर्शाया गया है. सामाजिक रूढ़ियों और संघर्ष का चित्रण करते हुए पात्रों की मनोवैज्ञानिक स्थिति तक पाठकों को ले जाने का सफल प्रयास शेखर जी ने किया है. यह कहानी पाठकों को प्रेम के शुद्धतम रुप से परिचित कराती है, जो न केवल व्यक्तिगत अपितु मानवीय संवेदनाओं के उच्चतम स्तर तक पहुँचती है.

10.3 लेखक परिचय

हिंदी साहित्य के प्रसिद्ध कथाकार शेखर जोशी समकालीन हिंदी कथासाहित्य के महत्वपूर्ण हस्ताक्षर थे. उनकी कहानियाँ आम जनजीवन, श्रमिक वर्ग, मानवीय संवेदनाओं और सामाजिक विषमताओं को सजीव रुप में प्रस्तुत करती है. वे मुख्यतः कहानी विधा में सक्रिय रहे और अपनी लेखनी के माध्यम से समाज के निचले तबके के संघर्षों, उनकी पीड़ा, आशाओं और सपनों को अत्यंत मार्मिकता से व्यक्त किया.

10.3.1 जीवन परिचय

जन्म एवं पारिवारिक पृष्ठभूमि

शेखर जोशी का जन्म 10 सितम्बर सन् 1932 ई. में उत्तराखण्ड के अल्मोड़ा जनपद में कोसी घाटी के ओलिया नामक गाँव में एक पहाड़ी किसान परिवार में हुआ था. उनके पिता का नाम दामोदर जोशी था. अपने जन्म के सन्दर्भ में शेखर जोशी ने खुद लिखा है- 'कौसानी के निकट एक छोटे-से पहाड़ी गाँव में मेरा जन्म हुआ था. हमारा परिवार पहाड़ के छोटे भू-स्वामियों का परिवार था. पराये श्रम से समृद्ध और वर्णदृष्टि के लिए पूरी तरह समर्पित माता-पिता अल्प शिक्षित लेकिन संस्कारवान थे.'

शेखर जी की माता श्रीमती हरिप्रिया जोशी थीं. वे बहुत ही शान्त एवं धार्मिक स्वभाव की थीं, जब जोशी जी 10 वर्ष के थे, तभी उनकी माता का अकस्मात् निधन हो गया. इस घटना ने उन्हें अंदर से तोड़कर रख दिया, वे स्वयं को एकाकी अनुभव करने लगे, कुछ समय के बाद ही जोशी जी को मामा के घर भेज दिया गया. उनके मामा राजस्थान के अजमेर जनपद के केकड़ी गाँव में रहते थे. वे स्वयं कहते हैं - 'बाल्यावस्था में ही माँ को खोना तत्पश्चात् अपने लोगों और परिवेश से दूर रहना अत्यधिक तकलीफ देय था.'

जोशी जी के घर का वातावरण बहुत ही धार्मिक था, अनेक धार्मिक ग्रन्थों को उन्होंने बचपन से ही देखा और पढ़ा था, शेखर जोशी के मामा पंडित श्री कृष्ण पंत शास्त्री बहुत ही विद्वान एवं अध्ययनशील व्यक्ति थे. शेखर जी का मानना है कि, उनको लेखन की प्रेरणा अपने मामा से ही मिली थी.

शिक्षा एवं व्यवसाय

शेखर जोशी की स्कूली शिक्षा का प्रारम्भ उनके अपने गाँव से ही हुआ था, किन्तु बाल्यावस्था में ही माँ का निधन हो जाने के कारण शेखर जी को अपने मामा के घर अजमेर जिले के केकड़ी नामक कस्बे में जा कर बसना पड़ा. अतः कक्षा चार से उनकी शिक्षा मामा के घर पर रह कर ही हुई. तदुपरांत इंटरमीडिएट की पढ़ाई उन्होंने हॉस्टल में रह कर, डी. ए. वी. कॉलेज, देहरादून से की. इस सन्दर्भ में जोशी जी का यह कथन दृष्टव्य होता है - "पहली बार खुली हवा में सांस लेने और अपनी तरह की जिन्दगी जीने का मौका मुझे तब मिला जब मैंने कॉलेज में प्रवेश लिया और हॉस्टल में रहने लगा. डी. ए. वी. कॉलेज

देहरादून में तब पुस्तकालय की नई बिल्डिंग बनी और सम्भवतः पुस्तकों का नया स्टॉक भी आया था पहली बार पुस्तकों की एक अनोखी दुनिया से मेरा परिचय हुआ."

इंटरमीडिएट की पढ़ाई के दौरान ही उनका दिल्ली में सुरक्षा विभाग के ई.एम.ई. अप्रेन्टिसशिप के लिए चयन हो गया. वे सन् 1955 ई. से सन् 1986 ई. तक सैनिक सेवा में कार्यरत रहे. बाद में उन्होंने अपनी इच्छा से इस पद को त्याग दिया और वे स्वतंत्र लेखन कार्य में संलग्न हो गए. 4 अक्टूबर, 2022 को उनकी मृत्यु हुई.

10.3.2 कृतित्व परिचय

शेखर जी जब इंटर की पढ़ाई के लिए डी.ए.वी. कॉलेज देहरादून आए, तब अपना ज्यादा से ज्यादा समय साहित्य की पुस्तकों के साथ बिताते थे. प्रेमचन्द, राहुल सांकृत्यायन, यशपाल और गोर्की जैसे लेखकों की पुस्तकें पढ़ के उनके साहित्य से और विचारधारा से परिचित हुए. धीरे-धीरे उनका दुनिया को देखने और समझने का नजरिया बदल गया.

शेखर जोशी ने बचपन से ही अपने मामा पंडित श्री कृष्ण पंत शास्त्री को लेखन कर्म में लीन देखा था जो आगे चलकर उनके प्रेरणा स्रोत बने. जोशी जी को गुटके के भजन बहुत प्रिय थे और खास कर ब्रह्मानन्द स्रोत के गुटके के भजन बहुत प्रिय थे, जोशी जी स्वयं कहते हैं, घर में व्यंकटेश्वर प्रेस, मुम्बई से प्रकाशित बड़े आकार के पन्नों में मुद्रित 'भागवत' और 'महाभारत' के अतिरिक्त कुछ सामाजिक और ऐतिहासिक उपन्यास, 'चांद' और 'माधुरी' की प्रतियाँ जब-तब देखने को मिल जाती थीं. एक गुटका ब्रह्मानन्द स्रोत का था, जिसके भजन मुझे बहुत प्रिय थे और मैं अक्सर उसे अलापा करता. मेरी तन्मयता देखकर माँ कहती यह जोगी हो जाएगा. काव्य का मेरा प्रारम्भिक परिचय इन्हीं, गीतों, भजनों से हुआ.

किसी भी साहित्यकार के जीवन की घटनाओं का प्रभाव उनके साहित्य में स्पष्ट रूप से देखने को मिलता है. कभी-कभी तो यही घटनाएँ उनकी रचनाओं का बीज होती हैं. कौसानी के निकट एक छोटे से गाँव में जन्में शेखर जोशी की रचनाओं में हमें जो पहाड़ी परिवेश, किसान, मजदूर, जीवन, रीति-रिवाज, आदि के दर्शन होते है, वे उनके स्वयं के जीवन एवं अंचल विशेष का ही प्रतिरूप हैं. उनकी रचनाओं में अपार प्राकृतिक सौन्दर्य, गीत-संगीत एवं सांस्कृतिक गतिविधियाँ भी चित्रित की गई हैं, उन्होंने, गरीबी, दीनता एवं मानवीय शोषण पर भी लेखन कार्य किया है. उन्होंने अपनी बचपन की सम्पूर्ण स्मृतियों को 'मेरा ओलिया गाँव' नामक पुस्तक के माध्यम से पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है.

उसी प्रकार शेखर जोशी ने अपनी कृषक पृष्ठभूमि, अपने परिवेश, अपने रहन-सहन, पहाड़ी स्त्रियों इत्यादि को केन्द्र में रखकर 'पार्वती' कविता संग्रह की रचना की है. जिसमें कहीं खेतों में हुड़के की ताल एवं सुरीले गीतों के बीच धान रोपाई के दृश्य हैं, तो कहीं ओखल में धान काटती युवतियों का नृत्य है, जंगल के एकांत में बटोही के गीतों की गूँजार है तथा घास का पहाड़ उठाकर लाती स्त्रियाँ आदि केंद्रीय विषय रहा है.

शेखर जी बहुत ही विनम्र व्यक्तित्व के धनी थे, वे स्वयं को ऐसे रचनाकार की श्रेणी में रखते थे, जिन्होंने बहुत कम रचनाएँ की हों, उन्होंने कभी भी अपनी रचनाओं को लेकर घमंड नहीं किया. जोशी जी स्वयं के विषय में कहते हैं कि मैं बहुत अधिक लेखन नहीं कर पाया हूँ, जीवन की स्थितियाँ ही कुछ ऐसी रहीं लेकिन जो कुछ लिखा है, वह कहाँ तक परिपूर्ण रचना है और कहाँ तक कलाकृति यह मैं नहीं जानता. ऐसी स्थिति में रचनाकार और कलाकार की मुद्रा में कुछ कह पाना भी मेरे लिए धृष्टता होगी.

उनकी प्रमुख रचनाएँ निम्नानुसार हैं –

- **कहानी संग्रह**

1. 'कोसी का घटवार' 2. 'साथ के लोग' 3. 'हलवाहा' 4. 'मेरा पहाड़' 5. 'एक पेड़ की याद' 6. 'संवादहीन' 7. 'नौरंगी बीमार है' 8. 'डांगरी वाले' 9. 'प्रतिनिधि कहानियाँ' 10. 'दस प्रतिनिधि कहानियाँ' 11. 'बच्चे का सपना' आदि

- **काव्य संग्रह**

1. 'पार्वती' 2. 'अयांत्रिक' 3. 'आन्दोलन जन' 4. 'अस्पताल डायरी' 5. 'विविधा'

- **आत्म वृत्त**

'मेरा ओलिया गाँव'

शेखर जोशी को प्राप्त पुरस्कार

महावीर प्रसाद द्विवेदी पुरस्कार 1987

साहित्य भूषण पुरस्कार 1995

पहल सम्मान 1997

चन्द्रयान पुरस्कार 2010

आकाशदीप सम्मान 2023 आदि

नयी कहानी आंदोलन में शेखर जोशी

नयी कहानी आंदोलन सन् 1955 ई. में शुरु हुआ था और इसमें शेखर जोशी का योगदान महत्वपूर्ण रहा. शेखर जोशी को इस आंदोलन के दौरान रचनात्मक वातावरण मिला, क्योंकि वे इलाहाबाद में रहते थे, जहाँ उस समय इस आंदोलन से जुड़े कई लेखकों और पत्रकारों का जमावड़ा था. कमलेश्वर, अमरकांत, मार्कंडेय, भैरव प्रसाद गुप्त, श्रीपत राय, अमृत राय जैसे साहित्यकारों द्वारा संपादित कहानी और 'नयी कहानी' जैसी पत्रिकाएँ भी वहीं से प्रकाशित होती थीं. इस आंदोलन के प्रमुख लेखकों में मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव, कमलेश्वर, अमरकांत, मार्कंडेय, भैरव प्रसाद गुप्त, निर्मल वर्मा, भीष्म साहनी, फणीश्वरनाथ 'रेणु', मन्नू भंडारी, ईश्वरी प्रसाद, कृष्णा सोबती जैसे अनेक लेखक शामिल थे.

इस आंदोलन के दौरान हिंदी कहानी का स्वर्णिम काल था और उस समय के लेखकों ने साहित्य को कई महत्वपूर्ण और यादगार कृतियाँ दीं. उदाहरण के लिए, मोहन राकेश की 'मलबे का मालिक', राजेन्द्र यादव की 'एक कमजोर लड़की की कहानी', कमलेश्वर की 'राजा निरबंसिया', निर्मल वर्मा की 'परिंदे', भीष्म साहनी की 'अमृतसर आ गया', फणीश्वरनाथ 'रेणु' की 'तीसरी कसम', मन्नू भंडारी की 'यही सच है', उषा प्रियंवदा की 'वापसी', कृष्णा सोबती की 'सिक्का बदल गया' इत्यादि.

इन सभी कृतियों में एक समानता यह थी कि कहानीकारों ने अपनी व्यक्तिगत जीवन यात्रा को इस प्रकार प्रस्तुत किया, जिससे उनकी कहानियों में अनुभव की प्रामाणिकता झलकती है. शेखर जोशी की 'कोसी का घटवार' और उनकी अन्य रचनाएँ तथा इस आंदोलन से जुड़ी सभी कहानियाँ इसी संदर्भ में अत्यधिक महत्वपूर्ण मानी जाती हैं.

- **बोध प्रश्न**

(1) शेखर जी की माता का नाम क्या था?

(2) 'मलबे का मालिक' किसकी रचना है?

(3) शेखर जी के मामा का नाम क्या था?

(4) 'पार्वती' कहानी संग्रह है या काव्य संग्रह?

(5) शेखर जोशी के 'आत्मवृत्त' का नाम क्या है?

10.4 'कोसी का घटवार' कहानी की तात्विक समीक्षा

10.4.1 कथावस्तु

यह कहानी नि:स्वार्थ प्रेम को दर्शाती है. यह भाग्य की विडंबना और परिस्थितियों के दुष्चक्र में फंसे दो प्रेमियों की करुण कहानी है. इस कहानी को पढ़कर हमे 'गुलेरी' जी की कालजयी रचना 'उसने कहा था' की याद अवश्य आती है. इस कथा के माध्यम से पहाड़ी गाँवों की जीवनशैली को गहराई से समझा जा सकता है. यह कहानी पाठकों को ग्रामीण परिवेश, वहाँ के लोगों की सोच, प्रेम और सामाजिक मान्यताओं से परिचित कराती है.

कहानी का नायक गुसांई, जब पहली बार फौज से छुट्टी लेकर अपनी वर्दी में गाँव लौटता है, तो यह खबर पूरे गाँव में आग की तरह फैल जाती है. छोटे-बड़े, सभी लोग उससे मिलने आते हैं, पर उसकी निगाहें सिर्फ लछमा को ढूंढ रही होती हैं, जो उससे मिलने नहीं आती. कई दिनों बाद दोनों गाँव के बाहर काफल के पेड़ के नीचे मिलते हैं. लछमा गुसांई के घुटनों पर सिर रखकर फल खाती है. कुछ ही दिनों बाद लछमा का पिता गुसांई को अनाथ और फौज में भर्ती होने के कारण अपनी बेटी की शादी उसके साथ न कर अन्य किसी लड़के के साथ करता है. इस वजह से गुसांई का गाँव से लगाव खत्म हो जाता है और वह लगातार 15 वर्षों तक वहाँ वापस नहीं आता.

फौज से रिटायर्ड होने के बाद गुसांई समय काटने के लिए अपने गाँव के बाहर कोसी नदी के किनारे घट लगवा लेता है. वह वहाँ अकेला रहता है. उसने शादी भी नहीं की है. एक दिन, जब गुसांई अपनी चक्की पर काम कर रहा होता है, तो अनाज पिसवाने आई एक महिला की आवाज़ उसे सुनाई देती है लेकिन व्यस्तता के कारण वह आटा पिसवाने से मना कर देता है. उसको आवाज़ जानी पहचानी लगती है. वह उसे पहचानने की कोशिश करता है, जब वह महिला जाने लगती है, तो वह उसे दोबारा बुलाता है – "लछमा, लछमा!" यह सुनते ही लछमा ठिठक जाती है और हैरानी से पीछे मुड़ती है.

गुसांई, लछमा से उसके जीवन के बारे में पूछता है. जब उसकी नजर लछमा के गले पर जाती है, तो वह देखता है कि उसने मंगलसूत्र नहीं पहना है. वह बिना कुछ कहे ही उसकी स्थिति समझ जाता है. इसके बाद, गुसांई खाने का इंतजाम करता है और लछमा स्वयं रोटियाँ बनाने का आग्रह करती है. गुसांई, लछमा के बच्चे को अपने हाथों से खिलाता है और खुद भी खाता है. वह महसूस करता है कि सच में, किसी स्त्री के हाथों बनी रोटी का स्वाद अलग ही होता है.

बातों-बातों में लछमा अपने आर्थिक हालात का जिक्र करती है. गुसांई उसे पैसे देने की पेशकश करता है और कहता है कि कुछ दिनों में उसे मनी ऑर्डर मिल जाएगा. लेकिन लछमा पैसे लेने से इनकार कर देती है.

यह कहानी समाज के उन बंधनों को उजागर करती है, जो प्रेम को कभी पूर्ण नहीं होने देते. गुसांई और लछमा अपने मन की बातें एक-दूसरे से कह नहीं पाते, क्योंकि वे सामाजिक सीमाओं में बंधे होते हैं. अंत में, लछमा अपने बच्चे के साथ सिर पर आटे की बोरी रखकर अपने घर लौट जाती है और गुसांई चुपचाप उसे जाते हुए देखता रहता है. यह दृश्य दर्शाता है कि कभी-कभी परिस्थितियाँ इंसान को इतना विवश कर देती हैं कि वह चाहकर भी अपने दिल की बात नहीं कह सकता.

10.4.2 चरित्र चित्रण

गुसांईं सिंह

गुसांईं सिंह कहानी का मुख्य पात्र है. उसका त्याग और निश्चल प्रेम हिंदी साहित्य के पाठकों के मन में एक अमिट छाप छोड़ जाता है.

गुसांईं का अकेलापन और पीड़ा

कहानी का पात्र गुसांईं अपने प्रेम में असफल होने के बाद फौज में पंद्रह वर्ष की नौकरी कर वापस गाँव लौटता है. अपने अकेलेपन को दूर करने के लिए वह कोसी नदी के किनारे अपना घट चलाने लगता है. गुसांईं फौज में इसलिए गया था क्योंकि उसे पैंट पहनने की महत्वाकांक्षा थी, लेकिन जब वह लौटा, तो पैंट के साथ-साथ जीवन का गहरा अकेलापन भी उसके साथ आ गया.

अविवाहित जीवन उसे बोझिल लगने लगता है और कई बार उसका अकेलापन असहनीय हो उठता है. ऐसे समय में वह सोचता है – "सूखी नदी के किनारे का यह अकेलापन कुछ भी नहीं है, असली अकेलापन तो वह है, जो जीवनभर उसके द्वार पर दस्तक देकर स्थायी रूप से बैठ गया है. जिसे अपना कह सके, ऐसे किसी प्राणी का श्वर उसके लिए नहीं. पालतू कुत्ते-बिल्ली का स्वर भी नहीं. क्या ठिकाना ऐसे मालिक का, जिसकी न तो कोई गृहस्थी है, न परिवार, न खाने-पीने का ठिकाना"

गुसांईं के इस विचार से उसके अकेलेपन और मानसिक पीड़ा की गहराई उजागर होती है. लछमा के प्रति उसका अटूट प्रेम ही उसे जीवनभर अकेला बना देता है, और उसकी उदासी उसकी समूची जिंदगी पर छा जाती है.

निष्काम प्रेम की अभिव्यक्ति

कहानी में गुसांईं का लछमा के प्रति प्रेम निःस्वार्थ और अटूट रूप से व्यक्त होता है. वह संपूर्ण जीवन अविवाहित रहता है, लेकिन जब वह लछमा को देखता है, तो उसके प्रति उसके मन में गहरी सहानुभूति जागृत होती है. हालाँकि, सामाजिक बंधनों के कारण वह लछमा से विवाह नहीं कर पाता, फिर भी उसके प्रति अपनी संवेदना प्रकट करता है और आर्थिक सहायता देना चाहता है.

जब लछमा उसकी सहायता लेने से इंकार कर देती है, तो वह पीड़ा भरी आवाज में कहता है - "दुःख-तकलीफ के वक्त ही आदमी आदमी के काम नहीं आया, तो बेकार है! स्साला! कितना कमाया, कितना फूंका मैंने इस जिंदगी में, है कोई हिसाब? पर क्या फायदा! किसी के काम नहीं आया. इसमें इंसान की क्या बात है? पैसा तो मिट्टी है, स्साला! किसी के काम नहीं आया तो मिट्टी, एकदम मिट्टी!"

इसके बाद भी, जब लछमा उसकी मदद स्वीकार नहीं करती, तो गुसांईं चुपचाप अपने घट के अंदर जाता है और अपनी निजी आटे की टिन से दो-ढाई सेर आटा निकालकर लछमा के आटे में मिला देता है. इसके बाद संतोष की सांस लेकर अपने हाथ झाड़ता है और बाहर आकर बांध की ओर देखने लगता है.

गुसांईं का यह भाव उसकी निःस्वार्थ प्रेम भावना को दर्शाता है. उसके प्रेम में कोई स्वार्थ नहीं है, केवल त्याग, सहानुभूति और समर्पण है, जो प्रेम के उच्चतम रूप को दर्शाता है.

मानसिक अंतर्द्वंद्व

गुसांईं के मन में लछमा के प्रति अटूट प्रेम है. वह जीवनभर उसके इंतजार में अविवाहित

रहता है. जब वर्षों बाद लछमा से उसकी मुलाकात होती है, तो वह उसकी विषम परिस्थिति देखकर और अधिक व्याकुल हो जाता है. लछमा की गरीबी, दरिद्रता और साथ में उसके छोटे बेटे को देखकर गुसांई उसकी सहायता करना चाहता है और उसे अपनाने की इच्छा रखता है.

हालाँकि, समाज एक विवाहित स्त्री को उसके बेटे सहित स्वीकारने के लिए तैयार नहीं होगा, यह सोचकर वह खुद भी लछमा को स्वीकार नहीं कर पाता. वह नहीं चाहता कि लछमा को सामाजिक समस्याओं का सामना करना पड़े. लेकिन जब वह चुपचाप लछमा की ओर देखता है, तो लछमा को भी यह अहसास होता है कि वह कुछ कहना चाहता है.

गुसांई केवल इतना कहकर चला जाता है – "कभी चार पैसे जुट जाएँ, तो गंगनाथ का जागर लगाकर भूल-चूक की माफी मांग लेना. पूरे परिवारवालों को देवी-देवता के कोप से बचाए रखना चाहिए."

गुसांई अपने मन की भावनाओं को दबाकर, लछमा को स्वीकार करने की इच्छा रखने के बावजूद सामाजिक मान्यताओं और परंपराओं के कारण मानसिक अंतर्द्वंद्व में उलझ जाता है.

लछमा

लछमा कहानी की मुख्य स्त्री पात्र है. सामाजिक और पारिवारिक मर्यादा के कारण अपने प्रेमी से शादी न करके अपने पिता द्वारा चुने गए व्यक्ति से शादी करने पर विवश होती है. विधवा स्त्री के रूप में उसका चित्रण केवल उसका ही नहीं अपितु उसके जैसी हजारों, लाखों स्त्रियों का पक्ष हमारे सामने रखता है.

विधवा के रूप में

समाज में विधवा स्त्री को देखने का दृष्टिकोण हमेशा भेदभावपूर्ण रहा है. उसे तिरस्कार और उपेक्षा का सामना करना पड़ता है. न तो मायके वाले उसे सहानुभूति की दृष्टि से देखते हैं, न ही ससुराल वाले. विधवा स्त्री को जीवनभर सामाजिक उपेक्षा और मानसिक यातनाएँ सहनी पड़ती हैं.

लछमा के पिता ने उसकी इच्छा के विरुद्ध उसका विवाह किसी और युवक से कर दिया था. लेकिन एक बेटे के जन्म के बाद ही उसका पति गुजर गया और वह विधवा हो गई. विधवा का जीवन अत्यंत कष्टमय होता है. जब गुसांई लछमा के गले में सुहाग चिह्न नहीं देखता और उसे निराशा से भरा पाता है, तब लछमा अपने आँसू पोंछते हुए अपनी वेदना व्यक्त करती है – "जिसका भगवान नहीं होता, उसका कोई नहीं होता. जेठ-जेठानी से किसी तरह पिंड छुड़ाकर यहाँ माँ की बीमारी में आई थी, वह भी मुझे छोड़कर चली गई. एक अभागा (बेटा) रोने के लिए रह गया है, उसी के लिए जीना पड़ रहा है. नहीं तो कब का पेट पर पत्थर बाँधकर डूब मरती, यह जंजाल कट जाता."

यह संवाद विधवा स्त्री के जीवन की भयावह वास्तविकता को उजागर करता है. समाज की संकीर्ण मानसिकता और विधवा स्त्रियों के प्रति अमानवीय दृष्टिकोण उन्हें जीवनभर अपमान और पीड़ा सहने को मजबूर कर देता है.

गरीबी एवं दरिद्रता

पति की मृत्यु के पश्चात लछमा वैधव्य का कष्टमय जीवन जीने लगती है. गरीबी और दरिद्रता ने उसे अत्यंत परेशान कर दिया है. उसका छोटा बेटा भी है, लेकिन वह उसकी ठीक से परवरिश नहीं कर पा रही है.

जब गुसांईं और लछमा की मुलाकात होती है, तो गुसांईं बच्चे को भूखा देखकर अपनी बनाई रोटी उसकी ओर बढ़ा देता है. अपनी गरीबी छिपाने के लिए लछमा झिझकते हुए कहती है – "न-न, जी! वह तो अभी घर से खाकर ही आ रहा है. मैं रोटियाँ बनाकर रख आई थी."

लेकिन वास्तविकता तब उजागर होती है जब उसका बेटा रोते हुए कहता है –

"हाँ, यूँ ही कहती है. कहाँ रखी थीं रोटियाँ घर में?"

गुसांईं जब बच्चे को रोटी और थोड़ा-सा गुड़ देता है, तो वह तुरंत खाने लगता है. यह देखकर गुसाईं कहता है –

"कुछ साग-सब्जी होती तो बेचारा एक और आधी रोटी खा लेता."

तब लछमा व्यथित होकर उत्तर देती है –

"ऐसी ही खाने-पीने वाले की तकदीर लेकर पैदा हुआ होता तो मेरे भाग क्यों फूटते? दो दिन से घर में तेल-नमक तक नहीं है. आज कुछ पैसे मिले हैं, तो कुछ सौदा-सुलफ ले जाऊँगी."

इस संवाद के माध्यम से लछमा की गरीबी और दयनीय स्थिति स्पष्ट रूप से उजागर होती है. वह केवल अपनी ही नहीं, बल्कि अपने बच्चे की भूख और अभावों से भी जूझ रही है, जो उसकी पीड़ा को और गहरा कर देता है.

10.4.3 संवाद

शेखर जोशी की प्रसिद्ध कहानी 'कोसी का घटवार' संवाद योजना के दृष्टिकोण से बहुत ही प्रभावशाली और स्वाभाविक है. उनके संवाद पात्रों की सामाजिक पृष्ठभूमि, मनोभावों और परिवेश को सजीव रूप में प्रस्तुत करते हैं. जो यथार्थपरक और सहज भाषा में देखने को मिलते हैं. शेखर जोशी के संवाद पात्रों के स्वभाव और परिवेश के अनुसार हैं. भाषा में क्षेत्रीयता और लोकजीवन की झलक मिलती है, जिससे कहानी अधिक प्रभावी बनती है. नायक गुसांईं के संवाद उसकी भावनाओं, संघर्ष और पीड़ा को व्यक्त करते हैं. लछमा के संवादों से भी कहानी का यथार्थ उभर कर आता है. संवाद छोटे और सारगर्भित हैं, जिससे कथा प्रभावी बनती है. कम शब्दों में ही संवाद पात्रों की मनोदशा को स्पष्ट कर देते हैं. क्षेत्रीयता और लोकभाषा का सुंदर प्रयोग देखने को मिलता है. पहाड़ी अंचल की भाषा और लहजे का प्रयोग हुआ है, जो कहानी को अधिक सजीव बनाता है. यह शैली पाठकों को कथा से जोड़ती है. संवाद कहानी को आगे बढ़ाने में सहायक होते हैं. पात्रों की मनःस्थिति, उनके रिश्ते और घटनाओं का विस्तार संवादों के माध्यम से होता है.

शेखर जोशी की संवाद योजना उनकी अन्य कहानियों की तरह कोसी का घटवार में भी प्रभावशाली और स्वाभाविक है. उनके संवाद पात्रों के व्यक्तित्व, कथा के भाव और सामाजिक परिवेश को सजीव रूप से प्रस्तुत करने में सक्षम हैं.

कहानी के संवाद योजना को समझने के लिए उदाहरणार्थ कुछ संवाद देखें –

खंभे का सहारा लेकर वह (गुसाईं) बुदबुदाया, "जा स्साला! सुबह से अब तक दस पंसेरी भी नहीं हुआ. सूरज कहाँ का कहाँ चला गया है! कैसी अनहोनी बात!"

"जिसके आगे-पीछे भाई-बहन नहीं, माई-बाप नहीं, परदेस में बंदूक की नोंक पर जान रखने वाले को छोकरी कैसे दे दें हम? लछमा के बाप ने कहा था."

"गंगानाथज्यू की कसम, जैसा तुम कहोगे, मैं वैसा ही करूँगी." आँखों में आँसू भरकर लछमा ने कहा था."

“हाँ, यूँ ही कहती है. कहाँ रखी थीं रोटियाँ घर में?” बच्चे ने रुआँसी आवाज़ में वास्तविक स्थिति स्पष्ट कर दी.”

लछमा ने उसे झिड़क दिया, “मर! अब ले क्यों नहीं लेता? जहाँ जाएगा, वहीं अपने लच्छन दिखाएगा!”

लछमा बोलती है - “ऐसी ही खाने-पीने वाले की तक़दीर लेकर पैदा हुआ होता तो मेरे भाग क्यों पड़ता? दो दिन से घर में तेल-नमक नहीं है. आज थोड़े पैसे मिले हैं, आज ले जाऊँगी कुछ सौदा.”

10.4.4 देशकाल

कोसी का घटवार कहानी में लेखक ने पहाड़ी परिवेश और वहाँ के संघर्षपूर्ण जीवन को प्रभावी रूप से प्रस्तुत किया है. इस कहानी में पहाड़ी क्षेत्र के लोगों के जीवन की कठिनाइयों, गरीबी की यातना और मजदूरी की विवशता को संवेदनशीलता से उकेरा गया है.

कहानी में नदी और उसके आसपास के प्राकृतिक वातावरण का सुंदर चित्रण मिलता है, जो ग्रामीण जीवन की पृष्ठभूमि को सजीव बनाता है. साथ ही, यह भी दिखाया गया है कि समाज में प्रचलित मान्यताएँ कई बार व्यक्ति के जीवन में बाधा बन जाती हैं और उन्हें कठिन परिस्थितियों में जीने के लिए मजबूर कर देती हैं.

इसके अलावा, इस कहानी में यह दर्शाया गया है कि प्रेम न केवल भावनाओं तक सीमित रहता है, अपितु कठिन संघर्षों के बीच भी अपनी शुद्धता और उदात्तता को बनाए रख सकता है. कुल मिलाकर, ‘कोसी का घटवार’ एक ग्रामीण और पहाड़ी क्षेत्र के संघर्षशील जीवन को मार्मिक रूप से प्रस्तुत करती है.

10.4.5 भाषा शैली

इस कहानी में ‘फ्लैशबैक’ (पूर्वदीप्ति शैली) तकनीक का उपयोग किया गया है, जिसे सबसे पहले सन् 1915 ई. में चंद्रधर शर्मा ‘गुलेरी’ ने अपनी प्रसिद्ध कहानी ‘उसने कहा था’ में अपनाया था. इस तकनीक में कथा वर्तमान से अतीत में जाकर फिर से आगे बढ़ती है, जिससे घटनाओं का क्रम उलट जाता है और कहानी को एक अनूठा प्रवाह मिलता है. शेखर जोशी की कहानियों में मुख्य पात्र का परिचय शुरुआत में ही मिल जाता है, जिससे पाठक का ध्यान उसी पर केंद्रित रहता है. आमतौर पर उनकी कहानियों की शुरुआत इसी शैली में होती है, जिससे कथा की दिशा स्पष्ट हो जाती है. उदाहरण के लिए, गुसाईं पात्र का उल्लेख कहानी के पहले ही वाक्य में मिलता है – “गुसांईं का मन चिलम में भी नहीं लगा.” इसी तरह, ‘बदबू’ नामक कहानी की शुरुआत भी इसी प्रकार होती है, जहाँ पात्र का परिचय तुरंत मिलता है.

इस कथा में मुख्य पात्र के आसपास की परिस्थितियाँ उसकी मानसिक अवस्था को उजागर करती हैं, जिससे उसका आंतरिक संघर्ष स्पष्ट होता है. वातावरण का वर्णन इस तरह किया गया है कि वह पात्र के मनोविज्ञान को प्रतिबिंबित करता है. नामवर सिंह ने इस संदर्भ में कहा है – “जहाँ कोसी की सूखी धारा अकेलेपन का प्रतीक है, वहीं कठफोड़वे की आवाज़ और पनचक्की - मथानी की ध्वनि किसी खाली हृदय की व्यर्थ धड़कन जैसी प्रतीत होती है.” नदी की बहती या ठहरी हुई धारा और कठफोड़वे की आवाजें पात्र के मन की स्थिति को दर्शाती हैं. इस प्रकार, कथा का आरंभ और समापन गहरे भावनात्मक अर्थ उत्पन्न करते हैं और संपूर्ण कथानक पात्र की आंतरिक यात्रा को प्रस्तुत करता है.

इस कहानी में दो मुख्य पात्र हैं, जो इसकी गहराई और प्रभावशीलता को बढ़ाते हैं. हालाँकि, इससे भाषा की सहजता प्रभावित नहीं होती, बल्कि यह सरल और स्पष्ट खड़ी बोली

में लिखी गई है. कथा में कुछ स्थानीय शब्दों का उपयोग किया गया है, जैसे 'घट', 'मथानी' और 'गुल', जो कहानी के परिवेश को सजीव बनाते हैं. साथ ही, सेना से जुड़ी पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए कुछ अंग्रेजी शब्दों का भी समावेश किया गया है.

10.4.6 उद्देश्य

शेखर जोशी की कहानी 'कोसी का घटवार' मानवीय संवेदनाओं, समाज की वास्तविकताओं और जीवन की पीड़ाओं को अभिव्यक्त करती है. यह कहानी प्रेम की व्यथा, सामाजिक परिस्थितियों, गरीबी और अकेलेपन की मार्मिक तस्वीर प्रस्तुत करती है. इसमें मुख्य पात्र का संघर्षशील जीवन, दरिद्रता और सामाजिक उपेक्षा के बीच उसके अस्तित्व की लड़ाई को दर्शाया गया है. कहानी केवल व्यक्तिगत वेदना तक सीमित नहीं रहती, बल्कि इसके माध्यम से संस्कृति, परंपराओं और मानवीय मूल्यों का भी संदेश मिलता है. यह दिखाती है कि जीवन की कठिनाइयों के बावजूद इंसान अपनी जड़ों से जुड़ा रहता है और संघर्षों का सामना करता हुआ आगे बढ़ता है. शेखर जोशी ने अत्यंत संवेदनशीलता के साथ यह चित्रण किया है कि कैसे समाज की उपेक्षा और परिस्थितियों की मार व्यक्ति को भीतर तक तोड़ देती है, फिर भी जीवन अपने प्रवाह में आगे बढ़ता रहता है.

- **बोध प्रश्न**

(1) गुसांई वक्त निकालने के लिए अपने गाँव के बाहर किस नदी के किनारे घट लगवा लेता है?

(2) नयी कहानी आंदोलन कब शुरू हुआ था?

(3) न-न, जी! वह तो अभी घर से खाकर ही आ रहा है. मैं रोटियाँ बनाकर रख आई थी. यह वाक्य कौन बोलता है?

(4) कौन सामाजिक मान्यताओं और परंपराओं के कारण मानसिक अंतर्द्वंद्व में उलझ जाता है?

(5) अनाज पिसवाने आई एक महिला की आवाज गुसांई को सुनाई देती है. वह महिला कौन थी?

10.5 सारबिन्दु

विद्यार्थी मित्रो! आशा है आपने पूरी इकाई पढ़कर अच्छी तरह समझ ली होगी. अब आप इकाई के प्रत्येक उपशीर्षक से उसकी आवश्यक बातें एक जगह पर लिख लीजिए, जिससे इस इकाई को सार रूप में याद रखने में आपको सुविधा होगी. हम भी यहाँ यही काम करने जा रहे हैं. आप अपनी सूची से इस सूची का मिलान कीजिएगा और देखिएगा की कहीं हमसे कुछ छूट तो नहीं गया है, या आपसे कुछ रह तो नहीं गया!

इस इकाई में हमने शेखर जोशी का परिचय विस्तार से प्राप्त किया. जिसमें हमने उनके जीवन परिचय के साथ उनका कृतित्व परिचय भी प्राप्त किया. शेखर जोशी की कहानियों की विशेषता जानी. नयी कहानी में किस प्रकार जोशी जी अपना अलग स्थान रखते हैं वह देखा. कोसी का घटवार केवल एक कहानी नहीं अपितु भारतीय समाज के बहुतेरे लोगों की दबी हुई आवाज़ के रूप में उभरकर हमारे सामने आती है. गुसांई एवं लछमा के माध्यम से शेखर जी ने सच्चे प्रेम और बलिदान की परिभाषा हमारे समक्ष रखी. साथ ही यह भी बताया कि परंपरा एवं सामाजिक बंधनों के कारण किस प्रकार दो प्रेमियों को बिछड़ना पड़ता हैं उनकी करुणता का मार्मिक चित्रण करने में लेखक सफल हुए हैं. हमने 'कोसी का घटवार' कहानी की कथावस्तु को विस्तार से जाना तथा कहानी कला के तत्वों के आधार पर उसकी समीक्षा की.

10.6 परीक्षोपयोगी प्रश्नावली

- **निम्नलिखित प्रश्नं के उत्तर विस्तार से दीजिए**

(1) शेखर जोशी के जीवन एवं कृतित्व का परिचय दीजिए

(2) 'कोसी का घटवार' कहानी की तात्विक समीक्षा कीजिए

(3) 'कोसी का घटवार' कहानी की कथावस्तु अपने शब्दों में लिखिए

- **निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए**

(1) गुसांईं

(2) लछमा

(3) भाषा शैली

(4) शेखर जोशी

(5) कहानी का उद्देश्य

- **लघु प्रश्न**

(1) 'कोसी का घटवार' कहानी किसकी है?

(2) शेखर जोशी का जन्म कब हुआ था?

(3) फौज से रिटायर्ड होने के बाद गुसांईं क्या काम करता था?

(4) 'कोसी का घटवार' कहानी कब प्रकाशित हुई थी?

(5) शेखर जोशी के तीन (3) कहानी संग्रह के नाम बताइए

- **बहु वैकल्पिक प्रश्न**

(1) शेखर जोशी की कहानी कौन-सी है?

(अ) 'उसने कहा था' (ब) 'तीसरी कसम'

(स) 'परिंदे' (द) 'कोसी का घटवार'

(2) गुसांईं किस नदी के किनारे घट लगाता है?

(अ) गंगा (ब) जमुना

(स) कोसी (द) गोदावरी

(3) शेखर जोशी किस कहानी आंदोलन में कहानियाँ लिखते थे?

(अ) सचेतन कहानी (ब) नई कहानी

(स) अ-कहानी (द) सहज कहानी

(4) 'उसने कहा था' कहानी किसकी है?

(अ) शेखर जोशी (ब) फणीश्वरनाथ 'रेणु'

(स) चंद्रधर शर्मा 'गुलेरी' (द) निर्मल वर्मा

(5) शेखर जोशी का जन्म किस गाँव में हुआ था?

(अ) लमही (ब) चोटिला

(स) झाँसी (द) ओलिया

10.7 उपयोगी पाठ्यसामग्री

- कहानी नयी कहानी – डॉ. नामवर सिंह
- कोसी का घटवार – शेखर जोशी
- वागर्थ / नई कहानी के दौर में शेखर जोशी – मनोज मोहन
- आत्मवृत्त 'मेरा ओलिया गाँव' – शेखर जोशी
- शेखर जोशी की कहानियाँ : वैविध्य का वैभव – असीम अग्रवाल

इकाई 11 'पिता' – ज्ञानरंजन

रूपरेखा

11.1 उद्देश्य

11.2 प्रस्तावना

11.3 लेखक परिचय

11.3.1 जीवन परिचय

11.3.2 कृतित्व परिचय

11.4 'पिता' कहानी की तात्विक समीक्षा

11.4.1 कथावस्तु

11.4.2 पात्र एवं चरित्र चित्रण

11.4.3 संवाद

11.4.4 देशकाल एवं वातावरण

11.4.5 भाषा शैली

11.4.6 उद्देश्य

11.5 सारबिंदु

11.6 परीक्षोपयोगी प्रश्नावली

11.7 उपयोगी पाठ्यसामग्री

11.1 उद्देश्य

विद्यार्थी मित्रो! इस इकाई में आप प्रसिद्ध साठोत्तरी कहानीकार ज्ञानरंजन की 'पिता' कहानी का अध्ययन करेंगे. इस इकाई में आप कहानी कला के तत्वों के आधार पर ज्ञानरंजन की कहानी का बारीकी से अध्ययन तो कर ही पाएँगे साथ ही पिता के पात्र के माध्यम से संवेदना, भावुकता और सहृदयता से भी यथोचित परिचित हो पाएँगे. इस इकाई के अध्ययन से आप -

- ज्ञानरंजन कहानीकार का विस्तृत परिचय प्राप्त कर पाएँगे.
- पुरानी पीढ़ी का अपने समकालीन परिवेश से कटते चले जाने का दर्द समझ पाएँगे.
- वर्तमान समाज के बिखरते पारिवारिक संबंधों को जान सकेंगे.
- अत्याधुनिक रहन-सहन, देखादेखी और पश्चिमी अंधानुकरण के कारण वर्तमान पीढ़ी के संतान अपने माता-पिता से आज कैसे दूरी बना रहे हैं, ये समझ पाएँगे.
- कहानी की गद्य विधा से परिचित हो पाएँगे.

11.2 प्रस्तावना

ज्ञानरंजन साठोत्तरी कहानी के प्रमुख कहानीकारों में से एक हैं. उनकी कुल 26 कहानियाँ लिखी हुई हैं, जो 'सपना नहीं' नामक संग्रह से प्रकाशित हुई हैं. इसमें से 'पिता' उनकी बहुत ही चर्चित कहानी है, जो सन् 1965 ई. में प्रकाशित हुई थी. वर्तमान युवा पीढ़ी ज्यादा आधुनिकता के रंग में रंगने और पश्चिम का अंधानुकरण करने के कारण हमारे प्राचीन संस्कार 'वसुधैव कुटुंबकम्' की भावना भूलाती-बिसराती जा रही है. ऐसे संक्रांतिकाल में युवा पीढ़ियों की बदली हुई मानसिकता का चित्र लेखक ने 'पिता' नामक कहानी के माध्यम से यहाँ प्रस्तुत किया है. यहाँ हम बदलते पारिवारिक स्वरुप को देख सकते हैं. आज हमारे समाज में पारिवारिक संबंधों में बड़ी खाई देखने

को मिलती है. परिवार में बच्चे अपने माता-पिता की संवेदनाओं को समझने में व्यर्थ साबित हुए हैं. ऐसे में बूढ़े माता-पिता अपनी भावनाओं और संवेदनाओं को मन में दबाकर अभाव में जीवन यापन करते जाते है. इस कहानी का प्रमुख पात्र जो पिता है वह भी अपने परिवार में ही पराया बनकर अभाव में अपनी जिंदगी जी रहा है. इस कहानी के माध्यम से लेखक ने परिवार के बूढ़े लोगों के प्रति युवा पीढ़ी के मानसिक रवैये को प्रस्तुत किया है.

11.3 लेखक परिचय

11.3.1 जीवन परिचय

ज्ञानरंजन साठोत्तरी कहानी के प्रमुख कहानीकारों में से एक रहे हैं. उनका जन्म 21 नवंबर, 1936 ई. में महाराष्ट्र के अकोला में हुआ था. उनकी शिक्षा इलाहाबाद में सम्पन्न हुई. इतना ही नहीं इलाहाबाद उनका प्रिय शहर रहा है लेकिन उनके बचपन और किशोरावस्था का ज्यादातर समय अजमेर, दिल्ली और बनारस में बीता. उनका स्थाई निवास मध्यप्रदेश का जबलपुर रहा है.

साठोत्तरी कहानी में प्रमुख चार कहानीकार हुए हैं – ज्ञानरंजन, दूधनाथ सिंह, काशीनाथ सिंह और रवीन्द्रनाथ कालिया. ये चारों में से ज्ञानरंजन का नाम बड़े सम्मान और आदर के साथ लिया जाता है. लेखक ने सबसे ज्यादा लेखनी कहानियों पर ही चलाई है. देखा जाए तो ज्ञानरंजन की विशेष महारत कहानी साहित्य में ही रही है.

11.3.2 कृतित्व परिचय

ज्ञानरंजन साठोत्तरी कहानी के जाने-माने कहानीकार तो हैं ही साथ ही ‘अकहानी’ में शामिल लेखकों के परम मित्र भी रहे हैं. उनकी कहानी की कुल संख्या 25 है, जो ‘सपना नहीं’ नामक संकलन में संग्रहित हैं. उनके कुल छः कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं.

- **कहानी संग्रह**

1. ‘फेंस के इधर-उधर’ सन् 1968 ई.
2. ‘यात्रा’ सन् 1971 ई.
3. ‘क्षणजीवी’ सन् 1977 ई.
4. ‘सपना नहीं’ सन् 1977 ई.

इसके अलावा भी ‘घंट’, ‘बहिर्गमन’, ‘अनुभव’, ‘अमरूद का पेड़’, ‘छलांग’, ‘पिता’, ‘रचना प्रक्रिया’ और ‘हास्यरस’ रचनाएँ भी हैं.

- **संस्मरण**

1. ‘ज्ञानरंजन के बहाने’
2. ‘तारामण्डल के नीचे एक आवारागर्द’

- **अन्य साहित्य**

‘कबाड़खाना’

11.4 ‘पिता’ कहानी की तात्विक समीक्षा

हिन्दी गद्य साहित्य में कहानी कला के प्रमुख छः तत्व निर्धारित किये गए हैं. इन्हीं छः तत्वों के आधार पर लिखी गई कहानी ही पूर्ण कहानी मानी जाती है. कहानीकार को ये ध्यान रखना चाहिए की कहानी कला के सारे तत्वों का अपनी कहानी में सुभग समन्वय हो. कहानी कला के प्रमुख छः तत्व इस प्रकार से हैं - कथावस्तु, पात्र या चरित्र – चित्रण,

संवाद, देशकाल एवं वातावरण, भाषा शैली और उद्देश्य.

11.4.1 कथावस्तु

कथावस्तु के रूप में लेखक ने हमारे समाज में पुरानी पीढ़ी और नई पीढ़ी के पारिवारिक संबंधों के बदलते रूप को प्रस्तुत किया है. वर्तमान समय में युवा पीढ़ी अपने नौकरी-धंधों की वजह से कहीं ना कहीं अपने परिवार के सदस्यों की (बूढ़े लोगों को) संवेदना को समझने में नाकाम रहे हैं. यही कारण रहा है की वे अपने परिवार में पल रहे बूढ़े माता-पिता की संवेदनाओं से बेखबर रहते हैं. लेखक ने यहाँ एक ऐसे 'पिता' की मनोव्यथा को प्रस्तुत किया है जो अपने ही परिवार में बेगाना-सा बनकर जूझता रहता हैं. गोपालराय के शब्दों में कहा जाय तो उन्होनें इस कहानी के बारे में बताया है – "ज्ञानरंजन की 'पिता' कहानी पीढ़ियों की सोच और जीने के तौर तरीकों की खाई को व्यक्त करनेवाली कहानी है."

कहानी का प्रमुख पात्र 'पिता' घुटन, ऊब और द्वंद्व में जीता है. परिवार के सदस्यों में कोई उनकी सुध लेनेवाला नहीं है. परिणामस्वरूप परिवार में सभी सदस्यों के होते हुए भी वह अपने आप को अकेला महसूस करता है. परिवार के सारे सदस्य चाय-कॉफी के लिए जाते हैं पर पिता नहीं आता. इतना ही नहीं वह गुस्से से सबको कहते भी हैं - "आप लोग जाइए न भाई, कॉफी हाउस में बैठिए, जूठी वैनिटी के लिए, वेपरा को टिप दीजिए, रहमान के यहाँ डेढ़ रुपैएवाला बाल कटाइए, मुझे क्यों घसीटते हैं."

पिता इतना असन्तुष्ट क्यों है? इसकी वजह भी है. अपने पुत्र ही अपने घर में उनको सम्मान नहीं देते. हर समय वह अपने पिता को डांटने के स्वर में ही बात करते हैं, जो पिता के हृदय को तार-तार कर देता है. एक उदाहरण देखिए - "मुहल्ले में हम लोगों का सम्मान हैं. चार भले लोग आया-जाया करते हैं, आपको अंदर सोना चाहिए, ढंग के कपड़े पहनने चाहिए और चौकीदारों की तरह रात को पहरा देना बहुत ही भद्दा लगता है."

11.4.2 पात्र या चरित्र चित्रण

'पिता' कहानी में पात्रों की भरमार नहीं है. प्रमुख पात्र के रूप में पिता और पुत्र (सुधीर) है. गौण पात्रों के रूप में दादा भाई, माताजी, कप्तान भाई, दादी अम्मा, देवा (छोटा पुत्र) इत्यादि देखने को मिलते हैं.

'पिता' कहानी में प्रमुख पात्र पिता और पुत्र हैं. कहानी के प्रमुख पात्र पिता पुरानी पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करते हुए नजर आते हैं. वह संवेदनशील, भावुक और सहृदयी हैं लेकिन उनकी भावनाओं को समझने में उनके परिवार के सदस्य नाकाम हुए हैं. पर फिर भी ऐसे वातावरण में वे स्वाभिमानी, संवेदनशील और आत्मनिर्भर होकर अपनी जिंदगी यापन करते हैं. वे वर्तमान परिस्थितियाँ और परिवार के लोगों के रवैयों से ऊब चुका है. वह एकांत चाहता है. वह पल पल यह महसूस करता है की घर में इसकी कोई इज्जत नहीं है और सब स्वार्थ के रिश्ते हैं. वह अपनी ढलती उम्र के हिसाब से आत्मिक शांति पाने के लिए कभी-कभार भगवान के भजन में मस्त रहता है. "हे राम! तू ही सहारा है."

पिता सतत अपने आप में खोया रहता है. स्वयं के घर में उसे अपनी पत्नी का प्रेम भी नहीं मिलता. वह जब घर में आता है तब उसकी पत्नी सोते-सोते ही बड़बड़ाते हुए कहती है – 'आ गए' इतना कहकर वह बच्चे की ओर करवट लेकर सो गई. इस प्रसंग से हमें पता चलता है की एक पति की अपनी ही स्त्री के द्वारा अपने ही घर में कितनी इज्जत मिलती है? बाद में एक गैर मर्द की तरह वह अपना बिस्तर लेकर बाहर की ओर चला जाता है, फिर भी उसकी पत्नी के दिलों-दिमाग पर इसका कोई असर नहीं होता है. इस कहानी में लेखक 'नई मौसम की गर्मी' को प्रतीकात्मक रूप में लिया है . लेखक कहता

है – "मौसम की गर्मी से कहीं अधिक प्रबल पिता है."

दूसरा प्रमुख पात्र है – पुत्र का. पुत्र नई पीढ़ी के रंगों में रंगा हुआ पात्र है. कहने का मतलब वह आधुनिक पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करता है. वह अपने पिता के क्रिया- कलाप से सतत व्यथित रहता है. वह अपने पिता को रुष्ट होकर कह देता है – "आपको अंदर सोना चाहिए और चौकीदारों की तरह रात को पहरा देना बहुत ही भद्दा लगता है ."

11.4.3 संवाद

किसी भी कहानी की संवाद योजना कहानी को उत्कृष्ट बनाने में सहायक भूमिका का काम करता है. कहानी का पात्र 'पुत्र' हमेशा परेशान रहता है. वह अपने पिता की रहन-सहन, उनका पहनावा, अपने-आप में सतत खोए रहने के अपने स्वभाव से दुखी रहता है. वह कहता है – "मुहल्ले में हम लोगों का सम्मान है. चार भले लोग आया-जाया करते हैं."

इस कहानी के संवाद छोटे-छोटे और आकर्षक हैं. छोटे-छोटे संवाद हृदय को झकझोर देते हैं. कहानी में दादा भाई ने घर में नहाने के लिए सब के लिए बाथरूम में शावर लगवाया था, लेकिन पिताजी कभी उसमें नहीं नहाते इससे दुखी होकर बात करते हुए कहता है – "आप अंदर आराम से क्यों नहीं नहाते?"

साथ ही साथ पिता परिवार के सभी सदस्य घर के बाहर चाय कॉफ़ी के लिए जाते है तब वह उनकों डांटने के स्वर में कहता है – "आप लोग जाइए ना भाई, कॉफी हाउस में बैठिए, झूठी वैनिटी के लिए वेटर को टिप्स दीजिए, रहमान के यहाँ डेढ़ रुपैयावाला बाल कटाइए, मुझे क्यों घसीटते हों."

11.4.4 देशकाल एवं वातावरण

लेखक ने इस कहानी में स्वतंत्र्योत्तर के बाद के हमारे देश के मध्यमवर्गीय परिवारों की दशा और मानसिकता का विस्तृत परिचय दिया है. इस कहानी के माध्यम से लेखक ने साठोत्तरी दशक के समाज की मानसिकता का परिचय यहाँ देने का प्रयास किया है. स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हमारे देश की परिस्थिति इतनी अच्छी नहीं थी. देश पूर्णरूप से तरक्की नहीं कर पाया था. समाज में ज्यादातर मध्यमवर्गीय परिवारों की हालत बेहाल थी . ऐसे हालात में भी कई परिवार देखा-देखी का शिकार बने हुए थे, तो कई परिवार पश्चिमी संस्कृति के अंधानुकरण से ओतप्रोत थे. ऐसे माहौल में कोई किसी का सुनने को तैयार नहीं था, इतना ही नहीं समाज में सब अपनी-अपनी डफली और अपने-अपने राग आलापने में लगे थे. ऐसे में हमारी 'वसुधैव कुटुंबकम्' की भावना मृतप्राय अवस्था में थी. ज्ञानरंजन जी ने जाने अनजाने हमारे समाज के परिवारों की मानसिक स्थिति को भी दिखाने का प्रयास किया है. चाहे कोई भी कहानीकार क्यों ना हों उसकी कहानी तब ही सर्वश्रेष्ठ सिद्ध होगी जब उसने तत्कालीन वातावरण का निर्माण किया हो.

11.4.5 भाषा शैली

किसी भी कहानी की भाषा-शैली कहानी की प्रसिद्धि तय करती है, इतना ही नहीं तत्कालीन समाज एवं उसकी रहन-सहन को समझने में भी उपकारक होती है. इस कहानी में भी लेखक ने तत्कालीन परिवेश के आधार पर पात्रों के मुँह से पात्रों के कथन कहते हुए दिखाए है. इस कथनों में से हमें तत्कालीन भाषा और माहौल का पता चलता है . लेखक ने इस कहानी में समय-समय पर कई कहावतों एवं मुहावरों का प्रयोग भी किया है. इसके अलावा अंग्रेजी शब्दों का भी खुलकर प्रयोग किया है. जैसे की अंग्रेजी शब्दों को देखिए : रिलीफ़, वाश बेसिन, एम्पोरियम, काफी-हाउस, रिप, मुनिसिपल, मार्केट, यूनिवर्सिटी, इत्यादी.

इसके अलावा लेखक ने इस कहानी में समय-समय पर मुहवरें और कहावतों का प्रयोग

भी किया है. जैसे – 'अँधेरे में आम खोजना और खाली गमले में इकट्ठा करते जाएंगे', 'कुनमुनाकर रोना', 'खुद को छुरा भोंक देना', 'दीवार पर सिर पटकना' इत्यादि.

11.4.6 उद्देश्य

कोई भी कहानीकार जब कहानी की रचना करता है तो वह कोई भी उद्देश्य या सीख को नजर सम्मुख रखकर ही लिखता है. इतना ही नहीं हिन्दी साहित्य के इतिहास में आजतक जितनी भी कहानियों की रचना की गई है वह सब सोद्देशपूर्ण कहानियाँ ही रही हैं. साथ ही साथ एक कहानीकार संवेदनशील होता है, उसे अपने समाज की समस्याएँ निरंतर मथती रहती हैं. समाज की समस्याएँ लेखक को अंदर से झकझोर देती हैं. इसका परिणाम यह होता है की लेखक समाज की समस्याओं को साहित्य के माध्यम से सामाज के सम्मुख प्रस्तुत करता है. इस कहानी मे लेखक ने पुरानी पीढ़ी के और वर्तमान पीढ़ी के लोगों की मानसिकता एवं द्वंद्व को अभिव्यक्त करने का भरसक प्रयास किया है. पुरानी पीढ़ी आज अपने समकालीन परिवेश से कटती चली जा रही है. इसका नग्न यथार्थ लेखक ने यहाँ प्रस्तुत करने का प्रयास किया है. आज की युवा पीढ़ी देखा- देखी और दिखावे की होड़ में लगी है. इतना ही नहीं आज की युवा पीढ़ी पश्चिमी रंग में रंगी हुई है. यही बदली हुई मानसिकता लेखक ने यहाँ अंकन किया है. यहाँ दो पीढ़ियों का तनाव और संघर्ष (Conflict) लेखक ने ब-खू-बी प्रस्तुत किया है. वर्तमान युवाओं की उस मानसिकता के साथ चल पाने में असमर्थ एक पिता की व्यथा को लेखक ने इस कहानी के माध्यम से प्रस्तुत किया है.

इस कहानी के माध्यम से लेखक ने यह बताने का प्रयास किया है की आज के युवा संतान अपने माता-पिता के रखरखाव से कैसे दूरी बनाते जा रहे हैं. इतना ही नहीं जाने अनजाने वो कैसे अपने बूढ़े माता-पिता की भावनाओं को ठेस पहुँचाते हैं. इसका भी लेखक ने यहाँ वर्णन प्रस्तुत किया है. इससे हमें यह सीख मिलती है की वृद्ध लोगों के भी सपने होते हैं, उनकी भी संवेदनाएँ होती हैं, वे भी चाहते हैं कि कोई उनकी भी सुने. लेखक ने इस कहानी में पिता और पुत्र के मध्य भावनात्मक और प्रेमात्मक दूरी दिखाई है जो आज के समाज में यह आम बात है. आज के समाज में वृद्ध और युवाओं के बीच ये समझदारी की कम समझ के कारण कई वृद्ध माता-पिता वृद्धाश्रमों में देखने को मिलते है. इस कहानी में पिता-पुत्र एक दूसरे का ख्याल तो अवश्य रखते हैं पर दोनों की भावनाओं को समझने में दोनों असमर्थ हैं. दोनों एक ही छत के नीचे रहते हुए भी दोनों एक दूसरे के साथ नहीं है. लेखक ने बड़े ही मार्मिक ढंग से यहाँ पर उस दौर और समकालीन दौर की प्रासंगिक विडंबना को प्रस्तुत किया है. इसके पीछे लेखक का उद्देश्य यह रहा है की समाज का बहुआयामी वर्ग समाज की इस त्रासदी से सुपरिचित हो पाए.

11.5 सारबिंदु

'पिता' कहानी के माध्यम से लेखक ने पुरानी पीढ़ी और समकालीन पीढ़ी की बदली हुई मानसिकता का सुभग चित्रण प्रस्तुत किया है. लेखक ने आज के समाज में यह महसूस किया है की पुरानी पीढ़ी अपने समकालीन परिवेश से कैसे कटती चली जा रही हैं? इस कहानी के प्रमुख पात्र पिता और पुत्र आज हरेक घर में देखने को मिलते है . कहानी के सम्पूर्ण अध्ययन के बाद आज हमें यह भी ख्याल रखना है की आज के संघर्ष के दौर में जाने-अनजाने हम अपने बूढ़े माता-पिता की संवेदनाओं को ठेस ना पहुँचाएँ, क्योंकि वृद्ध लोगों के भी अपने सपने और अरमान होते हैं, उनके पास भी संवेदनाएँ, भावनाएँ और दर्द होता है. लेखक यहाँ पर पिता रूपी पात्र के माध्यम से यह भी बताना चाहता है की एक पिता अपने ही घर में कैसे बेगाना बन जाता है, जबकी उसने पूरी जिंदगी अपने घर और परिवार को सजाने एवं संवारने में लगा दी है. यहाँ तक की उनकी पत्नी को भी उसमे कोई

रुचि अब नहीं दिखती. इसी वजह से जब वह अपने ही घर में जब प्रवेश करता है तब उनकी स्वयं की पत्नी ही बिल्कुल नीरस होकर कहती है – 'आ गए .' उनकी पत्नी के इन शब्दों से हम पति-पत्नी दोनों के बीच का दाम्पत्य जीवन एवं दोनों के संबंधों की मानसिकता को महसूस कर सकते हैं. कोई भी व्यक्ति जब अपने ही परिवार से अपमानित होता है तब वह अंदर से टूट जाता है. इस कहानी का प्रमुख पात्र 'पिता' भी अपने ही परिवार में अपनी पत्नी और अपने संतानों के क्रिया-कलाप से ऊब चुका है.

तो इस तरह लेखक ने इस कहानी के माध्यम से हमारे समाज में पल रहे पुरानी पीढ़ी के लोगों की संवेदना और समकालीन परिवेश को प्रस्तुत किया है. लेखक इस कहानी के माध्यम से पिता और पुत्र के बीच का द्वंद्व प्रस्तुत करने में कामयाब रहे हैं. यह कहानी पढ़ने के बाद हमें यह ज्ञात होता है कि हमें अपने परिवार के लोगों की संवेदनाओं और भावनाओं का हमेशा ख्याल रखना चाहिए, क्योंकि एक मर्यादित उमर बीत जाने के बाद कई लोग अपनी संवेदनाओं को तबतक व्यक्त नहीं करते जब-तक उनकों कोई अपना समझने वाला ना मिल जाए.

11.6 परिक्षोपयोगी प्रश्नावली

(1) कहानी कला के तत्त्वों के आधार पर 'पिता' कहानी का मूल्यांकन कीजिए

(2) 'पिता' कहानी के माध्यम से एक समकालीन पिता के मानसिक द्वंद्व को अपने शब्दों में अभिव्यक्त कीजिए

(3) 'पिता' कहानी की कथावस्तु अपने शब्दों मे लिखिए

(4) 'पिता' कहानी अपनी पुरानी पीढ़ी का अपने समकालीन परिवेश से कटते चले जाने का दर्द प्रस्तुत करती है. अपने शब्दों में समझाइए

(5) ज्ञानरंजन का जीवन एवं साहित्य का परिचय विस्तृत रूप से कीजिए

- **टिप्पणी लिखिए**

(1) 'पिता' कहानी में चित्रित पिता का लेखन कीजिए

(2) 'पिता' कहानी में चित्रित समकालीन पुत्र का लेखन कीजिए

(3) भाषा शैली

(4) उद्देश्य

(5) ज्ञानरंजन सर्जित साहित्य

- **एक-एक वाक्य में उत्तर दीजिए**

(1) 'पिता' किसकी कहानी है?

(2) देवा किसका नाम है?

(3) 'पिता' कहानी का प्रमुख पात्र कौन है?

(4) ज्ञानरंजन की कहानियों की कुल संख्या कितनी है?

(5) ज्ञानरंजन का जन्म कब और कहाँ हुआ था?

- **निम्नांकित रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए**

(1) 'पहल' पत्रिका के प्रधान संपादक................... थे!

(2) ज्ञानरंजन का जन्म किस .... शहर में हुआ था?

(3) कहानी में सुधीर किसका.................... नाम है?

(4) कहानी में छोटे बच्चे का.................... नाम है?

(5) कहानी में दादाभाई.................... का नाम है?

11.7 उपयोगी पाठ्यसामग्री

- समकालीन कहानी : दिशा और दृष्टि - डॉ. धनंजय
- नयी कहानी : पुनर्विचार - मधुरेश
- बीसवीं शताब्दी का उत्तरार्ध : हिन्दी कहानी - नरेंद्र मोहन
- नयी कहानी : संदर्भ प्रकृति - देवीशंकर अवस्थी
- बीसवीं शताब्दी का हिन्दी साहित्य - डॉ. नन्ददुलारे वाजपेयी

इकाई 12 'इंस्पेक्टर मातादीन चाँद पर' – हरिशंकर परसाई

रूपरेखा

12.1 उद्देश्य

12.2 प्रस्तावना

12.3 लेखक परिचय

12.3.1 व्यक्तित्व

12.3.2 कृतित्व

12.3.3 पुरस्कार और सम्मान

12.4 'इंस्पेक्टर मातादीन चाँद पर' : वाचन

12.5 परसाई की रचनाओं के विश्लेषण-मूल्यांकन के मानक

12.6 'इंस्पेक्टर मातादीन चाँद पर' : विश्लेषण और मूल्यांकन

12.7 सारबिंदु

12.8 परीक्षोपयोगी प्रश्नावली

12.9 उपयोगी पाठ्यसामग्री

12.1 उद्देश्य

विद्यार्थी मित्रो! यह बारहवीं इकाई विलक्षण व्यंग्यकार हरिशंकर परसाई की व्यंग्य रचना 'इंस्पेक्टर मातादीन चाँद पर' का अध्ययन प्रस्तुत करती है. इस इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- हरिशंकर परसाई के व्यक्तित्व और कृतित्व से परिचित हो पाएँगे.
- व्यंग्य रचना की विशेषताओं से परिचित हो पाएँगे.
- एक व्यंग्य रचना के रूप में 'इंस्पेक्टर मातादीन चाँद पर' का मूल्यांकन कर पाएँगे.

12.2 प्रस्तावना

विद्यार्थी मित्रो! इस प्रश्नपत्र में आप अलग-अलग समय में लिखी गयी अलग-अलग प्रकार की हिंदी कहानियों का अध्ययन कर रहे हैं. इस क्रम में अब आपके सामने जो कहानी प्रस्तुत है, वह कहानी होते हुए भी व्यंग्य रचना के रूप में एक अलग ही पहचान रखती है.

'व्यंग्य' शब्द मूलतः संस्कृत काव्यशास्त्र का है. संस्कृत काव्यशास्त्र में शब्द की तीन शक्तियाँ बतायी गयी हैं – अभिधा, लक्षणा और व्यंजना. इन तीन तरह की शक्तियों के माध्यम से शब्द से तीन तरह के अर्थ निकलते हैं - अभिधेयार्थ या मुख्यार्थ, लक्ष्यार्थ और व्यंग्यार्थ.

अभिधेयार्थ/मुख्यार्थ यानी कि शब्द का सीधा प्रत्यक्ष अर्थ. जैसे, 'यह कमल है' - इस वाक्य में 'कमल' शब्द का अभिधेयार्थ/मुख्यार्थ कमल का फूल है.

'लक्ष्यार्थ' यानी जब शब्द का अभिधेयार्थ सही न लगे और उससे संबंधित लेकिन उससे अलग कोई दूसरा अर्थ सही लगे. जैसे, 'सुंदरी का कमल जैसा मुख प्रसन्नता देता है' इस वाक्य में यदि 'कमल' शब्द का अर्थ फूल लें, तो निश्चय ही यह सही नहीं लगेगा, क्योंकि किसी की गर्दन पर 'मुख' की जगह पर 'फूल' तो लगा नहीं ही हो सकता, यहाँ कमल का अर्थ कमल के फूल जैसा 'कोमल', 'सुंदर' आदि निकलेगा, जो उसके मुख्य अर्थ से

संबंधित भी है और अलग भी.

'व्यंग्यार्थ' वह होता है, जब किसी शब्द का मुख्यार्थ या लक्ष्यार्थ ठीक लगे, लेकिन फिर उसके बाद एक और अर्थ उसमें से निकले और निकलने वाला दूसरा अर्थ कोई जरूरी नहीं कि पहले अर्थ से सीधे संबंधित ही हो. जैसे – 'आज की खास खबर यह है कि दिल्ली में कमल उग आया है.' इस वाक्य में 'कमल' का मुख्यार्थ – कमल का फूल लेने से कोई बाधा नहीं आती, जैसा कि ऊपर लक्ष्यार्थ के संदर्भ में आई थी, जहाँ अर्थ बैठ ही नहीं रहा था. लेकिन खास खबर कमल का फूल उग आना नहीं है, अपितु दिल्ली विधानसभा चुनावों में भाजपा को बहुमत मिलना है, जिसका निहितार्थ यह है कि अब दिल्ली में भाजपा सरकार बनेगी.

हिंदी में 'व्यंग्य' इस उपर्युक्त अर्थ में ही आया, लेकिन फिर यह एक खास तरह की कथन शैली के लिए रूढ़ हो गया. एक ऐसी कथन शैली जिसमें से दूसरी निकलने वाली बात हमारी चेतना पर कठोर प्रहार करे, हमें झकझोरे और नींद से जगा दे. कई बार इसे हास्य के साथ जोड़ कर 'हास्य-व्यंग्य' के रूप में भी प्रस्तुत किया जाता है. 'हास्य-व्यंग्य' में कही गयी बात सामान्यतः सीधे तौर पर हास्य का सृजन करती है, लेकिन उसके अंदर कोई न कोई गहरी मर्मभेदी बात छुपी होती है, जो विचारवान पाठक को मनन करने के लिए बाध्य करती है.

'व्यंग्य' कथन शैली किसी भी विधा में प्रयुक्त की जा सकती है यथा कविता में, कहानी में, नाटक में, निबंध में या फिर अन्य किसी विधा में. कबीर ने अपने समय की धार्मिक सामाजिक कुरीतियों पर प्रहार करने के लिए अपने दोहों और पदों में व्यंग्य कथन शैली का सशक्त धारदार उपयोग किया था. भारतेंदु ने अपने परिवेश की विसंगतियों की ओर ध्यान खींचने के लिए गद्य में व्यंग्य का सार्थक इस्तेमाल किया था. इसके बाद तमाम लेखक अपनी रचनाओं में व्यंग्य की जरुरत के अनुसार कम या ज्यादा इस्तेमाल करते रहे हैं. लेकिन हरिशंकर परसाई ने अपनी रचनाओं को पूरी तरह व्यंग्यशैली में ही रचा है. वस्तुतः उन्होंने एक तरह से व्यंग्य को एक स्वतंत्र विधा के रूप में स्थापित कर दिया है. इस इकाई में हम उनकी 'व्यंग्य' का अध्ययन विश्लेषण करेगें. तो, आइये! रचना को जानने से पहले रचनाकार को जान लेते हैं.

12.3 लेखक परिचय

12.3.1 व्यक्तित्व

हरिशंकर परसाई का जन्म 22 अगस्त, सन् 1924 ई. को मध्य प्रदेश के होशंगाबाद जिले के जमानी नामक गाँव के एक श्रमजीवी कायस्थ परिवार में हुआ था. पाँच भाई बहनों में परसाई जी सबसे बड़े थे. जब वे तेरह चौदह साल के रहे होंगे, तब उनकी माता जी का देहांत हो गया. आर्थिक स्थिति ठीक न होने के कारण उन्हें हाईस्कूल पास करते ही नौकरी शुरु कर देनी पड़ी. किंतु फिर भी उन्होंने अपना अध्ययन जारी रखा और नागपुर विश्वविद्यालय से हिंदी में एम.ए. करने के बाद डिप्लोमा इन टीचिंग पूरा किया. सन् 1957 ई. तक कई अलग-अलग संस्थाओं में अध्यापन करने के बाद उन्होंने अपने आप को पूरी तरह लेखन के लिए समर्पित कर दिया. हालाँकि सन् 1948 ई. से ही उन्होंने लिखना शुरु कर दिया था और सन् 1950-51 ई. आते-आते तो वे जमकर लिखने लगे थे. उन्होंने प्रतिष्ठित साहित्यिक पत्रिका 'वसुधा' का कई वर्षों तक संपादन व प्रकाशन किया और कई अन्य साहित्यिक पत्रिकाओं में नियमित स्तंभकार रहे. उनकी पहचान बीसवीं सदी के छठे और सातवें दशक के प्रतिनिधि जनलेखक के रूप में है.

परिस्थितिजन्य संघर्षों ने उन्हें अनुभवसमृद्ध बनाया और अनुभवों के विश्लेषण से प्राप्त अंतर्दृष्टि ने उन्हें लेखक बना दिया. वे एक ऐसे व्यंग्य लेखक हैं जिनमें सार्थक आलोचनात्मक दृष्टि है. उनका लेखन पाठक को विचलित करता है, पर साथ ही उन्हें जिम्मेदारी का अहसास दिलाते हुए सोचने के लिए मजबूर भी करता है. वे अपने व्यंग्य साहित्य के माध्यम से सर्वसाधारण जनता को सामाजिक और राजनीतिक समझदारी और सड़ी-गली समाजव्यवस्था को हटाकर समताधारित स्वस्थ्य समाजव्यवस्था की स्थापना का संकल्प देते हैं.

आजीवन पाखंड, भ्रष्टाचार, बेईमानी और अंतर्विरोधों के विरुद्ध जनमानस को जागृत और सचेत करने में अपने लेखन को समर्पित करने वाले हिंदी के अप्रतिम व्यंग्यकार हरिशंकर परसाई 10 अगस्त, सन् 1995 ई. को जबलपुर में इस दुनिया से विदा हो गये.

12.3.2 कृतित्व

परसाई जी का लेखन विविध और विपुल है, जिनमें से कुछ प्रमुख हैं –

- **कहानी संग्रह**
- ‘हँसते हैं रोते हैं’
- ‘जैसे उनके दिन फिरे’
- **उपन्यास**
- ‘रानी नागफनी की कहानी’
- ‘तट की मोज’
- **निबंध संग्रह**
- ‘तब की बात और थी’
- ‘भूत के पाँव पीछे’
- ‘बेईमानी की परत’
- ‘वैष्णव की फिसलन’
- ‘पगडंडियों का ज़माना’
- ‘शिकायत मुझे भी है’
- ‘सदाचार का ताबीज’
- ‘विकलांग श्रद्धा का दौर’
- ‘तुलसीदास चंदन घिसैं’
- ‘हम इक उम्र से वाकिफ हैं’
- ‘निठल्ले की डायरी’
- ‘आवारा भीड़ के खतरे’
- ‘जाने पहचाने लोग’
- ‘कहत कबीर’
- ‘ठिठुरता हुआ गणतंत्र’
- **साक्षात्कार**
- ‘पूछो परसाई से’

राजकमल प्रकाशन द्वारा सन् 1985 ई. में छह खंडों में प्रकाशित 'परसाई रचनावली' में उनकी अधिकतर रचनाएँ संकलित हैं.

12.3.3 पुरस्कार और सम्मान

- सन् 1962 ई. में रूस में हुए विश्व शांति सम्मेलन में परसाई जी ने भारत सरकार के प्रतिनिधि मंडल के सदस्य के तौर पर शिरकत की.
- सन् 1982 ई. में उनकी रचना 'विकलांग श्रद्धा का दौर' के लिए उन्हें केंद्रीय साहित्य अकादमी के पुरस्कार से सम्मानित किया गया.
- सन् 1982 ई. में ही जबलपुर विश्वविद्यालय ने उनकी आजीवन साहित्य सेवा का सम्मान करते हुए उन्हें डी.लिट्. की मानद उपाधि प्रदान की.
- मध्य प्रदेश शासन ने शिखर सम्मान से उन्हें विभूषित किया.
- सन् 1992 ई. में उन्होंने 'शरद जोशी' सम्मान प्राप्त किया.

विद्यार्थी मित्रो! आशा है, रचनाकार हरिशंकर परसाई जी का आपको पर्याप्त परिचय प्राप्त हो गया होगा. आइये! आगे बढ़ने से पहले जाँचते हैं कि आपने क्या समझा? नीचे लिखे प्रश्नों के उत्तर एक वाक्य में दें. यदि आप पुन: ऊपर देखे बिना सभी प्रश्नों के उत्तर बिना किसी शंका के सही-सही दे पाते हैं, तो आपने सचमुच अच्छी तरह से पढ़ लिया है. लेकिन यदि आपको इन प्रश्नों के उत्तर देने में कठिनाई हो रही है, तो आपको ऊपर के अनुच्छेद फिर से पढ़ने की आवश्यकता है. तो अपने को जाँचिये और आवश्यकतानुसार आगे बढ़िए.

- **बोध प्रश्न**

(1) हरिशंकर परसाई का जन्म कब और कहाँ हुआ था?

(2) हरिशंकर परसाई को किस विशिष्ट शैली की 'विधा' के रूप में स्थापित करने का श्रेय दिया जाता है?

(3) परसाई जी का साक्षात्कार किस नाम से प्रकाशित है?

(4) हरिशंकर परसाई को किस रचना के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त हुआ है?

(5) किस प्रतिष्ठित साहित्यिक पत्रिका का संपादन प्रकाशन हरिशंकर परसाई जी ने किया था?

12.4 'इंस्पेक्टर मातादीन चाँद पर' : वाचन

विद्यार्थी मित्रो! किसी भी रचना को समझने के लिए, उसका विश्लेषण करने के लिए आवश्यक है कि सबसे पहले तो उसको अच्छी तरह पढ़ा जाय, उसका मजा लिया जाय. आप जिस रचना का मजा नहीं ले सकते, उसका विश्लेषण भी बहुत अच्छी तरह नहीं कर सकते. इसलिए सबसे पहले तो 'इंस्पेक्टर मातादीन चाँद पर' – इस व्यंग्य कहानी को आप पढ़िए, जरूरत हो तो एक से अधिक बार पढ़िए. यदि आपके लिए इसकी हार्ड कॉपी उपलब्ध कर पाना मुश्किल हो तो नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करते हुए आप इंटरनेट पर यह कहानी पढ़ सकते हैं.

https://archive.org/details/qleq_parsai-rachanavali-part-2-by-harishankar-parsai-1985-new-delhi-raj-kamal-prakash/page/n11/mode/2up

इस वेबसाइट www.archive.org पर हिंदी की हजारों किताबें स्कैन करके रखी हुई हैं, जिन्हें आप ऑनलाइन भी पढ़ सकते हैं और डाउनलोड भी कर सकते हैं. यह परसाई

रचनावली भाग 2 का लिंक है. इस पुस्तक की पृष्ठ संख्या 134 पर पाठ के लिए चयनित कहानी – 'इंस्पेक्टर मातादीन चाँद पर' आप पढ़ सकते हैं.

तो, पहले आप कहानी पढ़ लें, तब हम आगे चलते हैं.

12.5 परसाई की रचनाओं के विश्लेषण-मूल्यांकन के मानक

विद्यार्थी मित्रो! अब तक आपने जिन कहानियों को पढ़ा, उनके विश्लेषण के लिए मानक सुनिश्चित थे. इसके पहले की सभी इकाइयों में और बाद में आने वाली इकाइयों में भी, जब भी कहानी के विश्लेषण की बात आयेगी, तो कहानी के छह तत्वों – (1) कथावस्तु (2) पात्र और चरित्र चित्रण (3) संवाद और कथोपकथन (4) देशकाल और वातावरण (5) भाषाशैली और (6) उद्देश्य – के आधार पर किया हुआ विश्लेषण आपको मिलेगा. परसाई की कहानियाँ इन बँधे बँधाये खाँचों में कतई फिट नहीं बैठ सकतीं. वस्तुतः वे आलोचना के तमाम प्रचलित मानकों में ही फिट नहीं बैठतीं. 'परसाई रचनावली' के संपादकों में से एक धनंजय वर्मा जी भाग 1 की भूमिका 'परसाई की कहानियाँ : समकालीन हिन्दुस्तान का कैलिडोस्कोप' में उनकी कहानियों के लिए लिखते हैं – "वो हमारे इतने रू-ब-रू, तीखी चोट करने वाली, तिलमिला देने वाली, अपनी, आत्मीय, सीधी और सहज हैं कि सारी आलोचना उनके सामने निहत्थी और असहाय खड़ी रह जाती है. 'भोगे हुए यथार्थ और अनुभव की प्रामाणिकता' वाली शब्दावली इन कहानियों को विश्लेषित करने के लिए उतनी ही नाकाम है, जितनी अ-कहानी, सचेतन कहानी, समनांतर कहानी आदि कहानी आंदोलनों के अंतर्गत उन्हें समाहित करने की कोशिश."

परसाई की इन व्यंग्यात्मक कहानियों ने कहानी पढ़ने के परंपरागत संस्कार, रुचि और संस्कृति को बदल दिया है. अपने समय से गहरे जुड़ कर ये कहानियाँ कालजयी हो गयी हैं.

तब ऐसी स्थिति में, जब कहानी का विश्लेषण करने के सभी स्थापित मानक परसाई जी की कहानियों के विश्लेषण के लिए अनुपयुक्त दिखाई पड़ रहे हैं, हमें उनकी कहानियों का विश्लेषण करने के लिए उपयुक्त मानकों की तलाश करनी होगी. उनके आलोचकों ने जिस तरह उनकी कहानियों को देखा परखा है, उनसे ही हम कुछ बिंदु निकाल सकते हैं, जिनके आधार पर उनकी कहानियों का विश्लेषण कर पाने में हम सक्षम हो सकें. ऐसे ही कुछ बिंदु निम्नांकित हैं –

- परसाई की भाषा ऊपर से अत्यंत सरल और सहज है, किंतु व्यंग्य की एक तेज धारदार अंतर्धारा उसमें सदा छिपी रहती है.
- परसाई प्रसंगानुकूल वैविध्यपूर्ण भाषा का प्रयोग करते हैं, जिसमें हिंदी उर्दू के विविध रूपों के साथ बोलियों, विशेषकर बुंदेली का भी पुट शामिल होता है.
- कहानियों की अंतर्वस्तु जिस समाज से आती है, उसके पात्र जिस समाज के सदस्य हैं, उनकी भाषा भी उसी की बोलचाल की, रहन सहन और रीति रिवाजों की होती है. उसमें सड़कों-गलियों, कार्यालयों-कारखानों, खेत-खलिहानों के जन-जीवन की देसी बोली के तेवर हैं, उन्हीं के कहावतें और मुहावरें हैं.
- परसाई जी की रचनाएँ गागर में सागर की उक्ति को चरितार्थ करती हैं, यानी वे कम से कम शब्दों में ज्यादा से ज्यादा कह सकने की क्षमता रखते हैं. उनकी छोटी-छोटी रचनाएँ बड़े-बड़े सत्यों का साक्षात्कार करवाती हैं.
- परसाई जी की रचनाओं में फैंटेसी का सघन तथा पौराणिक मिथकों और लोककथाओं का सटीक और सार्थक प्रयोग दिखाई पड़ता है.

- उनकी कहानियों में रूमानियत की कोमलता की जगह यथार्थ का खुरदुरापन और मर्म चीरने वाला पैना दृष्टिकोण दिखाई देता है.
- परसाई जी की कहानियों की एक खास विशेषता यह है कि अन्य समकालीन कथाकारों की रचनाओं की तरह उनकी रचनाओं में व्यंग्य सहायक या गौण तत्व की तरह नहीं आता, अपितु व्यंग्य ही गद्य के रूप में साकार हो उठता है, वही मूलाधार है.
- परसाई जी अपने व्यंग्य की धार का इस्तेमाल अपने समय के तमाम अंतर्विरोधों को उभार कर उसकी तीक्ष्ण आलोचना करने के लिए करते हैं. मजबूत से मजबूत निरंकुश सत्ता और अमानवीय क्रूरता को दंड दे सकने का नैतिक साहस उनके व्यंग्यों में दिखाई पड़ता है.
- परसाई जी का व्यंग्य में सदा 'हास्य' का पुट भी दिखाई देता है, जो कि जनसाधारण की दुरावस्था के प्रति करुणा और शासक शोषक वर्गों के नैतिक पतन और दमन के प्रति आक्रोश और घृणा से उत्पन्न होता है.
- यह 'हास्य' हिंदीभाषी जनता की अपराजेय जिंदादिली का प्रतीक है, जो अपने समय की विसंगतियों की तीक्ष्ण आलोचना के बावजूद परसाई जी के लेखन में कहीं भी नकारात्मकता और निराशा को नहीं आने देता.
- उनकी कहानियाँ अपने समय का जिंदा दस्तावेज हैं, जो वस्तुस्थितियों के ऊपरी वर्णन मात्र तक ही सीमित नहीं रहतीं, अपितु वे व्यापक सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक विसंगतियों, मिथ्याचारों, असामंजस्य और अन्यायों की तह तक जाकर उन्हें सही परिप्रेक्ष्य में देखते हुए उनके कारणों का विश्लेषण करने की चेष्टा करती हैं.
- परसाई जी की कहानियाँ प्रतिवाद और प्रतिरोध की कहानियाँ हैं. वे उस सब के खिलाफ हैं जो मनुष्यकी अस्मिता, उसकी गरिमा, उसकी स्वतंत्रता, उसकी समग्रता और उसकी पूर्णता के विरुद्ध हैं.
- इन कहानियों का परिप्रेक्ष्य समाज का क्रांतिकारी परिवर्तन, मनुष्य की मुक्ति और बेहतर संसार का सृजन है.
- परसाई जी की कहानियों में मूल्यपरक विश्वदृष्टि के साथ एक जीवन दर्शन, एक विचारधारात्मक विवेक दिखाई पड़ता है.
- परसाई जी की कहानियों के पात्र सजीव, स्थितियाँ वास्तविक, प्रसंग ज्वलंत और घटनाएँ घटित होती हुई होती हैं. वे अनुभव की संभावना से अधिक उसकी वास्तविकता की कहानियाँ हैं.

विद्यार्थी मित्रो! अब तक आप परसाई जी के लेखन शैली और कहानी की विशेषताएँ समझ गये होंगे. आइये, आगे बढ़ने से पहले एक छोटी सी परीक्षा हो जाय कि आपने क्या समझा!

- **बोध प्रश्न**
- **नीचे लिखे तथ्यों की सही या गलत के रूप में पहचान कीजिए**

(1) हरिशंकर परसाई की कहानियों का विश्लेषण पारंपरिक ढंग से कहानी के छह तत्वों के आधार पर नहीं किया जा सकता

(2) हरिशंकर परसाई की भाषा सरल, एकरस और सपाट है

(3) हरिशंकर परसाई की छोटी-छोटी रचनाएँ बड़े-बड़े सत्यों का साक्षात्कार करवाने में सक्षम हैं

(4) अपने समय की विसंगतियों को उजागर करने की चेष्टा में हरिशंकर परसाई का लेखन नकारात्मक हो गया है

(5) परसाई की कहानियाँ प्रतिवाद और प्रतिरोध की कहानियाँ हैं

12.6 'इंस्पेक्टर मातादीन चाँद पर' : विश्लेषण और मूल्यांकन

विद्यार्थी मित्रो! परसाई जी की रचनाओं के विश्लेषण की जो कसौटी हमने ऊपर के अनुच्छेद में अन्वेषित की है, उसपर आइये, प्रस्तुत कहानी – 'इंस्पेक्टर मातादीन चाँद पर' को कसते हैं!

सहज सरल भाषा के नीचे व्यंग्य की तेज अंतर्धारा

प्रस्तुत कहानी बेहद साधारण भाषा में लिखी गयी है, पर उसका प्रत्येक वाक्य एक तीखे व्यंग्य का संकेत देता है, या उसकी भूमिका बनाता है. उदाहरणार्थ कहानी के दूसरे ही अनुच्छेद में – 'विज्ञान ने हमेशा इंस्पेक्टर मातादीन से मात खायी है. फिंगर प्रिंट विशेषज्ञ कहता रहता है – 'छुरे पर पाये गये निशान मुलजिम की अँगुलियों के नहीं हैं, पर मातादीन उसे सजा दिलवा ही देते हैं.' पुलिसिया चरित्र पर करारा व्यंग्य इस साधारण से वाक्य में अपनी पूरी मारक क्षमता के साथ अंतर्निहित दिखाई देता है. व्यंग्य की ऐसी ही अंतर्धारा आप पूरी कहानी में स्पष्ट बहती देख सकते हैं.

प्रसंगानुकूल वैविध्यपूर्ण भाषा का प्रयोग

'इंस्पेक्टर मातादीन चाँद पर' कहानी प्रथम पुरुष में लिखी गयी कहानी है, जिसे कहानीकार अपनी तरफ से कह रहा है. अतः इस कहानी में मुख्य रूप से परिनिष्ठित हिंदी का प्रयोग हुआ है. पुलिस महकमे की कहानी होने के कारण उस महकमे में सामान्य रूप से प्रयोग किये जाने वाली अंग्रेजी पारिभाषिक शब्दों – 'इन्वेस्टीगेशन', 'एविडेंस', 'डिपार्टमेंट' आदि से युक्त भाषा का इस्तेमाल हुआ है.

कहानी में चित्रित समाज और पात्रों के अनुकूल भाषा का प्रयोग

मुख्य पात्र इंस्पेक्टर मातादीन रोबीली पुलिसिया बोली बोलता है – "हनुमान सुग्रीव के यहाँ स्पेशल ब्रांच में थे. उन्होंने सीता माता का पता लगाया था. एब्डक्शन (अपहरण) का मामला था, दफ़ा 362. हनुमान जी ने रावण को सज़ा वहीं दे दी. उसकी प्रापर्टी में आग लगा दी." चाँद पर ले जाने वाले अंतरिक्ष यान के चालक को वह रौब से डाँटता है – "अबे, हॉर्न क्यों नहीं बजाता?"

थाने का मुंशी और हवलदार 'इंस्पेक्टर साहब' का संक्षिप्त तद्भव रूप 'पेक्टसा' बोलते हैं. बलभद्र 'बलभद्दर' पुकारा जाता है. पत्नी के लिए 'खटला' और 'मकान' जैसे शब्दों का प्रयोग होता है.

कम शब्दों से ज्यादा की अभिव्यक्ति

'इंस्पेक्टर मातादीन चाँद पर' एक छोटी कहानी है. वस्तुतः 'छोटा होना' व्यंग्य रचनाओं की एक बड़ी विशेषता है. लेकिन इस छोटी कहानी में ही पुलिसिया बर्बरता, अत्याचार, भ्रष्टाचार, नाकाबिलियत, झूठा रौब, चाटुकारिता की प्रवृत्ति, सुरक्षा और न्याय की जगह खानापूर्ति के लिए झूठे केस बनाना और निर्दोषों को फँसाना जैसी कितनी ही प्रवृत्तियों की ओर इशारा करते हुए पूरे पुलिसिया चरित्र को उजागर किया गया है. कहानी के आरंभ से ही इसकी झलक मिलने लगती है – "विज्ञान ने हमेशा इंस्पेक्टर मातादीन से मात खाई है. फिंगर प्रिंट विशेषज्ञ कहता रहता है – छुरे पर पाये गये निशान मुलजिम की अँगुलियों के नहीं हैं, पर

मातादीन उसे सजा दिला ही देते हैं. .... अँधेरे पक्ष के मातादीन माहिर माने जाते हैं." ये पंक्तियाँ मातादीन और उसके बहाने से पूरे पुलिसिया चरित्र की पोल खोल कर रख देती हैं.

फैंटेसी का सघन प्रयोग

परसाई जी ने पुलिसिया चरित्र को उजागर करने के लिए इंस्पेक्टर मातादीन को चाँद पर भेजने की फैंटेसी रची है. किसी स्थल विशेष या राज्य विशेष के ऊपर अनापेक्षित आक्षेप और तत्संबंधी विवाद से दूर रहने के लिए इंस्पेक्टर मातादीन के कारनामों के जरिये पुलिसिया चरित्र को उद्घाटित करने के लिए वे चाँद पर बस्ती की कल्पना का सटीक उपयोग सफलतापूर्वक करते हैं.

यथार्थ की पैनी पकड़

'इंस्पेक्टर मातादीन चाँद पर' व्यंग्य कहानी परसाई जी ने पुलिस महकमे के भ्रष्टाचार और अन्याय को उजागर करने के लिए लिखी थी. इंस्पेक्टर मातादीन के माध्यम से वे पुलिसिया चरित्र का पूरे पैनेपन के साथ यथार्थ चित्रण करने में सफल रहे हैं. उदाहरण स्वरुप निम्नलिखित पंक्तियाँ पुलिस कार्यप्रणाली को साफ़तौर पर तीखेपन के साथ उजागर करती हैं – "मातादीन ने आगे की सारी कार्यप्रणाली तय कर दी. एफ.आई.आर. बदलना, बीच में पन्ने डालना, रोजनामचा बदलना, गवाहों को तोड़ना–सब सिखा दिया."

व्यंग्य का स्वतंत्र विधा के रुप में सफल इस्तेमाल

'इंस्पेक्टर मातादीन चाँद पर' एक कहानी है, जिसके पहले शब्द से आखिरी शब्द तक से व्यंग्य टपकता है. परसाई जी ने पूरी संजीदगी से कटु यथार्थ को व्यंग्य की चाशनी में डुबा कर पेश किया है. यहाँ कहानी में व्यंग्य किसी संवाद या अंश में सहायक के तौर पर नहीं आया है, अपितु अपनी समस्त मारक क्षमता के साथ स्वयं व्यंग्य ही कहानी के रुप में साकार हो उठा है. रचना का आरंभ ही इस तथ्य की पर्याप्त पुष्टि कर देता है–

वैज्ञानिक कहते हैं, "चाँद पर जीवन नहीं है. पर सीनियर पुलिस इंस्पेक्टर मातादीन (डिपार्टमेंट में एम.डी. साब) कहते हैं, वैज्ञानिक झूठ बोलते हैं. वहाँ हमारे जैसे ही मनुष्यों की आबादी है."

विज्ञान ने हमेशा इंस्पेक्टर मातादीन से मात खाई है. फिंगर प्रिंट विशेषज्ञ कहता रहता है–छुरे पर पाए गए निशान मुलजिम की अँगुलियों के नहीं हैं, पर मातादीन उसे सजा दिला ही देते हैं.

मातादीन कहते हैं – "ये वैज्ञानिक केस का पूरा इन्वेस्टीगेशन नहीं करते. उन्होंने चाँद का उजाला हिस्सा देखा और कह दिया, वहाँ जीवन नहीं है. मैं चाँद का अँधेरा हिस्सा देखकर आया हूँ, वहाँ मनुष्य जाति है."

यह बात सही है, क्योंकि अँधेरे पक्ष के मातादीन माहिर माने जाते हैं.

अंतर्विरोधों को उभारने के लिए व्यंग्य की धार का इस्तेमाल

परसाई जी के व्यंग्य लेखन का मूल उद्देश्य अपने समय की निरंकुश सत्ता के चहरे से नकाब खींच कर अंतर्विरोधों को उजागर करना रहा. यह निरंकुश सत्ता राजनीतिक, प्रशासनिक, सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक किसी भी क्षेत्र की हो सकती है. पाठ्य व्यंग्य में भी वे अपने इस उद्देश्य को प्राथमिकता के साथ पूरा करती है. उदाहरण के लिए पुलिस लाइन में हनुमान की मूर्ति की स्थापना के संदर्भ में – *"मातादीन ने कहा, 'हनुमान का दर्शन हर कर्तव्यपरायण पुलिसवाले के लिए जरुरी है. हनुमान सुग्रीव के यहाँ स्पेशल ब्रांच में थे. उन्होंने सीता माता का पता लगाया था. एब्डक्शन का मामला था, दफा 362. हनुमानजी ने रावण को सजा*

वहीं दे दी. उसकी प्रापर्टी में आग लगा दी. पुलिस को यह अधिकार होना चाहिए कि अपराधी को पकड़ा और वहीं सजा दे दी. अदालत में जाने का झंझट नहीं, मगर यह सिस्टम अभी हमारे रामराज में भी चालू नहीं हुआ. ...."

परसाई जी यहाँ तथाकथित धर्म और भक्ति के आवरण को व्यंग्य की धार से काट कर ढकी हुई पुलिसिया मानसिकता किसी को भी सजा देने की निरंकुश सत्ता की आकांक्षा को बखूबी उजागर कर रहे हैं.

तीखे व्यंग्य के साथ हास्य का खुशनुमा प्रयोग

परसाई जी के व्यंग्य 'हास्य' का पुट लिए हुए होते हैं. यह 'हास्य' उस पीड़ित जनता की अदम्य जिजीविषा और जिंदादिली को अभिव्यक्त करता है, जिसके लिए वे लिखते हैं. यह हास्य कमजोर का मजाक उड़ाने से पैदा नहीं होता, अपितु पीड़ित के प्रति सहानुभूति और शोषक के प्रति आक्रोश से उत्पन्न होता है. पाठ्य कहानी से एक उदाहरण–

मातादीन ने यान के चालक से पूछा, 'ड्राइविंग साइसेंस है?'

'जी है, साहब!'

'और गाड़ी में बत्ती ठीक है?'

'जी, ठीक है.'

मातादीन ने कहा, 'सब ठीक-ठाक होना चाहिए, वरना हरामजादे का बीच अंतरिक्ष में चलान कर दूँगा.'

चंद्रमा से आए चालक ने कहा, 'हमारे यहाँ आदमी से इस तरह नहीं बोलते.'

मातादीन ने कहा, 'जानता हूँ, बे! तुम्हारी पुलिस कमजोर है. अभी मैं उसे ठीक करता हूं'

वे यान में बैठे यान उड़ चला. पृथ्वी के वायुमंडल से यान बाहर निकला ही था कि मातादीन ने चालक से कहा, 'अबे, हॉर्न क्यों नहीं बजाता?'

चालक ने जवाब दिया, 'आसपास लाखों मील में कुछ नहीं है.'

मातादीन ने डाँटा, 'मगर रूल इज रूल. हॉर्न बजाता चल.

साधारण ऑटो और टैक्सी वालों पर अकारण पुलिसिया रोब गाँठने की प्रवृत्ति का यह चित्रण हँसाता भी है और निरीह ऑटो-टैक्सी चालकों के प्रति सहानुभूति भी उपजाता है.

परसाई जी की कहानियों की अन्य विशेषताएँ, जो 12.5 अनुच्छेद में बताई गयीं हैं, वे सब भी कमोबेश पाठ्य कहानी में साफ़ तौर पर दिखाई देती हैं, जिसकी आप स्वयं तस्दीक (प्रतिपुष्टि) कर सकते हैं.

- **बोध प्रश्न**

  आइये, अब जानते हैं कि आपने कितना सीखा समझा

- **निम्नलिखित वाक्य में रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए**

(1) .... चरित्र पर करारा व्यंग्य इस कहानी में अपनी पूरी मारक क्षमता के साथ अंतर्निहित दिखाई देता है

(2) 'इंस्पेक्टर मातादीन चाँद पर' कहानी में मुख्य रूप से .... हिंदी का प्रयोग हुआ है

(3) थाने का मुंशी और हवलदार .... का संक्षिप्त तद्भव रूप 'पेक्टसा' बोलते हैं

(4) .... होना व्यंग्य रचनाओं की एक बड़ी विशेषता है

(5) 'इंस्पेक्टर मातादीन चाँद पर' व्यंग्य कहानी परसाई जी ने .... महकमे के भ्रष्टाचार और अन्याय को उजागर करने के लिए लिखी थी

12.7 सारबिंदु

- जब एक अर्थ के बाद किसी वाक्य से एक दूसरा अर्थ भी निकले तो वह 'व्यंग्यार्थ' कहलाता है.
- हिंदी में 'व्यंग्य' एक खास अर्थ में रूढ़ हो गया है, जिसके अनुसार ऐसी रचना या वाक्य जो एक सीधा अर्थ देने के बाद एक दूसरा अधिक गहरा, चुभता हुआ अर्थ देते हों, 'व्यंग्य' कहलाते हैं.
- कई बार इसे हास्य के साथ जोड़ कर 'हास्य-व्यंग्य' के रूप में भी प्रस्तुत किया जाता है. 'हास्य-व्यंग्य' में कही गयी बात सामान्यतः सीधे तौर पर हास्य का सृजन करती है, लेकिन उसके अंदर कोई न कोई गहरी मर्मभेदी बात छुपी होती है, जो विचारवान पाठक श्रोताओं को मनन करने के लिए बाध्य करती है.
- हरिशंकर परसाई ने 'व्यंग्य' को एक स्वतंत्र साहित्यिक विद्या के रूप में स्थापित कर दिया है. उनके द्वारा रचित संपूर्ण साहित्य 'व्यंग्य विद्या' में ही है.
- हरिशंकर परसाई का जन्म 22 अगस्त, सन् 1924 ई. को मध्य प्रदेश के होशंगाबाद जिले में और मृत्यु 10 अगस्त, सन् 1995 ई. में जबलपुर में हुई थी.
- सन् 1982 ई. में परसाई जी की रचना 'विकलांग श्रद्धा का दौर' के लिए उन्हें केंद्रीय साहित्य अकादमी के पुरस्कार से सम्मानित किया गया था.
- परसाई जी की भाषा ऊपर से अत्यंत सरल और सहज है, किंतु व्यंग्य की एक तेज धारदार अंतर्धारा उसमें सदा छिपी रहती है.
- परसाई जी की रचनाएँ गागर में सागर की उक्ति को चरितार्थ करती हैं. उनकी छोटी-छोटी रचनाएँ बड़े-बड़े सत्यों का साक्षात्कार करवाती हैं.
- परसाई जी अपने व्यंग्य की धार का इस्तेमाल अपने समय के तमाम अंतर्विरोधों को उभार कर उसकी तीक्ष्ण आलोचना करने के लिए करते हैं. मजबूत से मजबूत निरंकुश सत्ता और अमानवीय क्रूरता को दंड दे सकने का नैतिक साहस उनके व्यंग्यों में दिखाई पड़ता है.
- इन कहानियों का परिप्रेक्ष्य समाज का क्रांतिकारी परिवर्तन, मनुष्य की मुक्ति और बेहतर संसार का सृजन है.
- परसाई जी की कहानियों में मूल्यपरक विश्वदृष्टि के साथ एक जीवन दर्शन, एक विचारधारात्मक विवेक दिखाई पड़ता है.
- पाठ्य कहानी – 'इंस्पेक्टर मातादीन चाँद पर' में भी परसाई के लेखन की सभी विशेषताएँ बखूबी मिलती हैं.

12.8 परीक्षोपयोगी प्रश्नावली

- **निम्नलिखित प्रश्न के सविस्तार उत्तर दीजिए**

(1) 'इंस्पेक्टर मातादीन चाँद पर' व्यंग्य कहानी का कथासार लिखिए

(2) 'व्यंग्य' की दृष्टि से 'इंस्पेक्टर मातादीन चाँद पर' कहानी का मूल्यांकन कीजिए

(3) 'इंस्पेक्टर मातादीन चाँद पर' व्यंग्य कहानी के पात्र इंस्पेक्टर मातादीन के आधार पर पुलिस की सामान्य छवि निरूपित कीजिए

(4) हरिशंकर परसाई के व्यंग्य लेखन की सामान्य विशेषताएँ बताइए

- **निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए**

(1) हरिशंकर परसाई

(2) परसाई की भाषा की विशेषताएँ

(3) 'इंस्पेक्टर मातादीन चाँद पर' कहानी का मुख्य कथ्य

(4) इंस्पेक्टर मातादीन के चरित्र में व्यक्त होती पुलिस प्रवृत्तियाँ

12.9 उपयोगी पाठ्यसामग्री

- ठिठुरता हुआ गणतंत्र, हरिशंकर परसाई, राजकमल प्रकाशन, चौथा संस्करण 2023
- परसाई रचनावली, खंड 1 और 2, राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., प्रथम संस्करण जनवरी, 1985
- आँखन देखी, संपादक, कमला प्रसाद, वाणी प्रकाशन, 1981
- देश के इस दौर में, विश्वनाथ त्रिपाठी, राजकमल प्रकाशन, दूसरा संस्करण 2000
- https://www.bbc.com/hindi/articles/cm2n96vyq8go

इकाई 13 'अपनी अपनी पत्नियों का सांस्कृतिक विकास' – असगर वजाहत

रूपरेखा

13.1 उद्देश्य

13.2 प्रस्तावना

13.3 लेखक परिचय
- 13.3.1 जीवन परिचय
- 13.3.2 कृतित्व परिचय

13.4 कहानी कला की दृष्टि से 'अपनी अपनी पत्नियों का सांस्कृतिक विकास' की समीक्षा
- 13.4.1 कथावस्तु
- 13.4.2 पात्र सृष्टि
- 13.4.3 संवेदना और समस्या
- 13.4.4 भाषा शैली

13.5 मुख्य अंशो की व्याख्या

13.6 सारबिंदु

13.7 परीक्षोपयोगी प्रश्नावली

13.8 उपयोगी पाठ्यसामग्री

13.1 उद्देश्य

विद्यार्थी मित्रो! 'अपनी अपनी पत्नियों का सांस्कृतिक विकास' पर आधारित इस इकाई को पढ़ने के बाद आप –

- असगर वजाहत के व्यक्तित्व और कृतित्व से परिचित हो सकेंगे.
- कहानी की भाषागत और शिल्पगत विशेषताओं को बता सकेंगे.
- कहानी के प्रमुख पात्रों का चरित्र चित्रण कर सकेंगे.
- नारी के प्रति उच्च दृष्टिकोण विकसित कर सकेंगे.

13.2 प्रस्तावना

आप इस इकाई के अंतर्गत असगर वजाहत कृत 'अपनी अपनी पत्नियों का सांस्कृतिक विकास' कहानी पढ़ने जा रहे हैं. प्रस्तुत कहानी में विदग्धता व व्यंग्य का अत्यंत सुंदर सामंजस्य है. असगर वजाहत के लेखन की विशेषता यह रही है कि उनका साहित्य आम जनजीवन के मुद्दों पर केन्द्रित रहा है. चाहे उनकी कहानियाँ हों, उपन्यास हों या नाटक सभी जगह आम लोगों के जीवन की समस्याओं के प्रति उनकी प्रतिबद्धता प्रमुख रूप से उभर कर सामने आती है. वे बड़ी से बड़ी बात को इतनी आसानी से और सहजता से कह जाते हैं कि पाठक के मन पर उसका प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता. आप उनकी इसी विशेषता का दर्शन इस कहानी के माध्यम से करेंगे. इस कहानी में एक स्त्री की व्यथा कथा यह है कि स्त्री कितनी भी सक्षम और प्रतिभाशाली क्यों न हो फिर भी उससे जुड़ा हर निर्णय पुरुष ही करता है. कैसे एक पुरुष अपनी पत्नी को बांधकर रखता है और परस्त्री की स्वतंत्रता का समर्थन करता है इस पर करारा व्यंग्य किया गया है.

13.3 लेखक परिचय

13.3.1 जीवन परिचय

साठोत्तर दौर के सशक्त और सजग रचनाकार असगर वजाहत का जन्म 5 जुलाई, 1946 ई. को उत्तर प्रदेश के शहर फतेहपुर में हुआ था. उनकी प्रारम्भिक शिक्षा वहीं पर हुई और उसके बाद उन्होंने अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय से सन् 1968 ई. में हिन्दी में एम. ए. तथा सन् 1974 ई. में पीएच. डी. की उपाधि प्राप्त की. उन्होंने जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय में सन् 1982-83 ई. में पोस्टडॉक्ट्रल शोध किया. वे हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में मुख्यतः साठोत्तरी पीढ़ी के महत्वपूर्ण कहानीकार एवं सिद्धहस्त नाटककार के रूप में मान्य हैं. इन्होंने कहानी, नाटक, उपन्यास, यात्रावृत्तांत, फिल्म तथा चित्रकला आदि विभिन्न क्षेत्रों में महत्वपूर्ण रचनात्मक योगदान दिया है. वे दिल्ली स्थित जामिया मिलिया इस्लामिया में हिन्दी विभाग के अध्यक्ष भी रह चुके हैं.

13.3.2 कृतित्व परिचय

असगर वजाहत का नाम हिन्दी के प्रमुख साहित्यकारों में गिना जाता है. वे लंबे समय से लेखनकार्य कर रहे हैं. उन्होंने साहित्य की अनेक विधाओं में लिखा है. अब तक उनके कई उपन्यास, नाटक, कहानी-संग्रह और एक नुक्कड़ नाटक-संग्रह तथा एक आलोचनात्मक पुस्तक प्रकाशित हो चुकी है.

उन्होंने गद्य साहित्य की लगभग सभी विधाओं में लेखन किया और अपने लिए हमेशा नए प्रतिमान बनाए. उनकी रचनाएँ हमेशा पहले दर्जे की साबित हुई हैं.

- **कहानी संग्रह** : 'अँधेरे से'; 'दिल्ली पहुँचना है'; 'स्विमिंग पूल'; 'सब कहाँ कुछ'; 'मैं हिन्दू हूँ'; 'डेमोक्रेशिया.'
- **लघुकथा संग्रह** : 'मुश्किल काम'; 'भीड़तंत्र'.
- **उपन्यास** : 'सात आसमान'; 'कैसी आगी लगाई'; 'पहर-दोपहर'; 'बरखा रचाई'; 'धरा अँकुराई'; 'गरजत-बरसत'.
- **लघु उपन्यास** : 'मन-माटी'; 'चहारदर'.
- **नाटक** : 'फ़िरंगी लौट आये'; 'इन्ना की आवाज़'; 'वीरगति'; 'समिधा'; 'जिन लाहौर नइ देख्या ओ जम्याइ नइ'; 'अकी'; 'गोडसे@गांधी.कॉम'; 'पाकिटमार रंगमंडल'.
- **नुक्कड़ नाटक संग्रह** : 'सबसे सस्ता गोश्त'
- **यात्रा संस्मरण** : 'चलते तो अच्छा था'; 'रास्ते की तलाश में'; 'पाकिस्तान का मतलब क्या'; 'अतीत का दरवाजा'; 'स्वर्ग में पाँच दिन'; 'दो कदम पीछे भी'.
- **विविध** : 'कथा से इतर' (संस्मरण); 'बाकरगंज के सैयद' (आख्यान); 'ताकि देश में नमक रहे' (निबंध); 'सफाई गंदा काम है' (निबंध); 'इस पतझड़ में आना' (पत्र); 'हिंदी-उर्दू की प्रगतिशील कविता' (आलोचना); 'व्यावहारिक निर्देशिका' (पटकथा लेखन).

वे पिछले तीस वर्षो से फिल्मों के लिए भी लिखते रहे हैं टेलीविज़न व फ़िल्म लेखन तथा निर्देशन से भी जुड़े रहे हैं. कई वृत्तचित्रों, धारावाहिकों और कुछ फीचर फ़िल्मों के लिए पटकथा लेखन भी इन्होंने किया है. इनकी कहानियों के अनुवाद अंग्रेजी, इतालवी, रूसी, फ्रेंच, ईरानी, उज्बेक, हंगेरियन, पोलिश आदि भाषाओं में हो चुके हैं.

असगर वजाहत नियमित रूप से अखबारों और पत्रिकाओं के लिए भी लिखते रहे हैं. सन् 2007 ई. में उन्होंने अतिथि संपादक के रूप में बी.बी.सी. वेब पत्रिका का संपादन किया था. सुप्रसिद्ध हिंदी पत्रिका 'हंस' के 'भारतीय मुसलमान : वर्तमान और भविष्य' विशेषांक का तथा 'वर्तमान साहित्य' के 'प्रवासी साहित्य' विशेषांक का संपादन भी उन्होंने किया था.

पुरस्कार : असगर वजाहत को अबतक हिन्दी अकादमी द्वारा 'श्रेष्ठ नाटककार' सम्मान 2009-

10, ‘आचार्य निरंजननाथ सम्मान’ - 2012, ‘संगीत नाटक अकादमी सम्मान’ - 2014, ‘हिन्दी अकादमी का सर्वोच्च शलाका सम्मान’ - 2016, ‘कथा क्रम सम्मान’ और ‘इंदु शर्मा कथा सम्मान’ आदि कई पुरस्कारों से सम्मानित किया जा चुका है.

- **बोध प्रश्न**

(1) असगर वजाहत का जन्म कहाँ पर हुआ?

(अ) मध्यप्रदेश (ब) उत्तरप्रदेश (स) केरल (द) गुजरात

(2) निम्नलिखित में से कौन-सा उपन्यास असगर वजाहत रचित नहीं है?

(अ) ‘कैसी आग लगाई’ (ब) ‘बरखा रचाई’ (स) ‘धरा अँकुराई’ (द) ‘जीरो रोड’

(3) ‘स्विमिंग पूल’ रचना की विधा बताइए.

(अ) कहानी (ब) उपन्यास (स) नाटक (द) संस्मरण

(4) निम्नलिखित में से कौन-सा पुरस्कार असगर वजाहत को प्राप्त नहीं हुआ है?

(अ) कथाक्रम सम्मान (ब) इंदु शर्मा कथा सम्मान

(स) ज्ञानपीठ सम्मान (द) शलाका सम्मान

(5) निम्नलिखित में से किस पत्रिका का संपादन असगर वजाहत ने किया था?

(अ) कथादेश (ब) हंस (स) नया ज्ञानोदय (द) लमही

13.4 कहानी कला की दृष्टि से ‘अपनी अपनी पत्नियों का सांस्कृतिक विकास’ की समीक्षा

13.4.1 कथावस्तु

प्रस्तुत कहानी का आरंभ मध्यप्रदेश के छोटे से स्टेशन से होता है. लेखक एक लो बजट की फिल्म बनाने के इरादे से गाँव में स्थान देखने आता है. इसी सिलसिले में उनकी मुलाक़ात कुँवर साहब से होती है. उन्होंने हर तरह की मदद का वायदा किया था. कुंवर साहब अपनी हवेली जो कस्बे से दूर नर्मदा नदी के उस पार लगभग उजाड़-से जंगल के बीच बसी थी, शूटिंग के लिए उपलब्ध कर देते हैं. वहाँ का वर्णन लेखक ने बख़ूबी से चित्रात्मक ढंग से किया है. लेखक को अपने फिल्म की शूटिंग के अनुरूप स्थान मिलने से तत्काल ही उनकी समस्या का हल मिल गया था.

ये उन दिनों की बात है जब लेखक को फिल्मों का चस्का लगा हुआ था. लेखक अपनी फिल्म के बारे में बात करते हुए कहते हैं कि वे एक ‘लो बजट’ फिल्म के निर्माण में पीर, भिश्ती, ख़र, बावर्ची – सभी की भूमिका निभा रहे थे. वे फिल्म के लिए सब कुछ थे किन्तु उन के पास कुछ नहीं था. कहानीकार से लेकर संगीतकार सभी उनके मित्र थे. उनका यह पहला प्रोडक्शन था. यह चुनौती उन्हें पसंद थी. शूटिंग किसी ऐसे कस्बे में हो रही थी जहाँ सिनेमाहॉल भी न था. कस्बे के लुच्चे-लफंगे, दुकानदार, ठेकेदार, कर्मचारी, नेता, अध्यापक, कम्पाउंडर, सम्मानित लोग सहयोग दे रहे थे. लेखक को इस फिल्म को बनाने में पैसे की कमी, आपाधापी, अव्यवस्था, मनमुटाव, लड़ाई-झगड़े जैसी तकलीफों के साथ-साथ सहयोग भी ख़ूब मिलता है. सहयोग देने वालों में एक ओवरसियर, जिन्हें सब इंजीनियर साहब कहते थे, बहुत सक्रिय थे-मलकानी जी, जो इस कहानी के महत्वपूर्ण किरदार साबित हुए हैं.

यह कहानी का आरंभ है जिसमें लेखक हमें अपनी फिल्म के बारे में बताते हैं. फिल्म की टीम निर्धारित समय के बाद कस्बे तक पहुँचती है. वह भी इस तरह जैसे थके-हारे योद्धा घर लौटते हैं. प्रोडक्शन मैनेजर कम ख़र्च करने के लालच में अलग-अलग प्रकार के सस्ते रास्ते चुनता है जो बड़े ही महंगे साबित होते हैं. बचे हुए पैसे शराब में और पुलिस को जुर्माना देने में ही ख़र्च हो जाते हैं. लेखक ने अपने साथियों के सफर का वर्णन बड़े ही रोचक ढंग

से किया है. लेखक यहाँ पाठकों को उस दुर्दशा से अवगत कराना चाहते हैं, जो कहानी में नायक की शराब पीने के बाद होती है. बुरी चीजों का परिणाम सदैव बुरा ही होता है. और दूसरी बात यह कि सस्ती चीजों के पीछे कई बार बहुत महंगी कीमत चुकानी पड़ जाती है.

उसके बाद सारी दिक्कतों को झेलती यूनिट, जिसमें तीस-चालीस लोग थे, रात में दो बजे कस्बे पहुँची तो उन्हें वह मकान नहीं मिलता है, जो उनके रहने के लिए लिया गया था. मकान एक सज्जन अध्यापक ने बिना पैसे लिए दिया था, पर शौचालय न थे. शौचालय टाट का पर्दा लगाकर बाहर बनाए थे जो यूनिट के आगमन की रात तेज बारिश और आंधी के कारण गिर गए थे. जब यूनिट आई तो खुला मैदान था. मर्दो को तो बहुत दिक्कत नहीं हुई पर 'हिरोइनें' परेशान हो गईं. उन्होंने कहा कि वे फौरन वापस जाना चाहती हैं. प्रोडक्शन मैनेजर के हाथों के तोते उड़ गए. बहरहाल, किसी तरह इस समस्या का समाधान किया गया. लेकिन समस्याएँ कम न थीं. कस्बे में पेट्रोल न था. खाने की व्यवस्था ऐसी थी कि नाश्ता बारह बजे और रात का खाना एक बजे रात को मिलता था. मुंबई से जो जनरेटर चला था वह रास्ते में ही रुका पड़ा था. हीरोइन के कपड़ों वाला बक्सा किसी स्टेशन पर ट्रेन बदलते वक्त छूट गया था. हद यह है कि जल्दी में 'क्लैप बोर्ड' तक छूट गया था. लेकिन इस पूरी अव्यवस्था और हबड़-तबड़ के बावजूद शूटिंग शुरु हो गई थी. एक और भी समस्या यह थी कि एक अभिनेत्री की कमी थी. यानी कमला की माँ का रोल करने वाली महिला मुंबई स्टेशन पर ही रह गई थी. कमला की माँ का रोल कस्बे में कौन कर सकता है इसकी तलाश बड़े पैमाने पर शुरू हो गई इस समस्या के समाधान में मलकानी जी काम आए. उन्होंने शीला जी के बारे में जो कुछ बताया था उससे यह आशा बँधी थी कि वे यह काम कर सकती हैं.

शीला जी स्थानीय गर्ल्स कॉलेज की सबसे प्रगतिशील महिला थीं. उन्होंने महिला क्लब बनाया था. वे कविताएँ लिखती थीं. ड्रामे कराती थीं. भाषण देती थीं. बिना पल्लू सिर पर डाले बाहर निकलती थीं. मर्दो से खुलकर बातचीत करती थीं. बहुत सम्मानित और कस्बे के जीवन में महत्वपूर्ण थीं. मलकानी उनका जिक्र इस तरह करते थे कि लगता था वे शीला जी के प्रशंसक कम और प्रेमी ज्यादा हैं. शीला जी के पति किसी दूसरे शहर में एक कॉलेज के प्राध्यापक थे. आते जाते रहते थे. इससे लेखक को विश्वास हो गया था कि काम बन सकता है. मलकानी शीला जी के बारे में जो कुछ लेखक को बताते वह लेखक निर्देशक को बताते. निर्देशक की एक चिंता कम हो जाती है. क्योंकि उन पर सिर्फ कलात्मक जिम्मेदारी ही नहीं बल्कि खाने पीने से लेकर कई जिम्मेदारियाँ थीं. कहानी में उनकी सारी समस्याओं का उल्लेख लेखक ने बड़ी ही सटीकता से और कम शब्दों में किया है. फिर चाहे धोबी की समस्या हो या अभिनेता की. लेखक लिखते हैं कि जब से यूनिट आई थी लोगों के कपड़े नहीं धुले थे क्योंकि प्रोडक्शन मैनेजर धोबी का इंतजाम नहीं कर पाया था. छोटे-मोटे अभिनेता और टेक्नीशियन तो एक ही जींस से काम चला रहे थे. ऐसी कई समस्याओं का वर्णन चित्रात्मक शैली में बखूबी किया गया है.

ऐसे माहौल में शीला जी का जिक्र निर्देशक को दैवी मदद जैसा लगा. मलकानी ने उन औरतों की बेअक्ली और जड़ता पर आँसू बहाए जिन्होंने रोल करने से इनकार कर दिया था. जैसे 'कमला की माँ' के लिए तारबाबू की पुत्रवधू से बात की गई थी. वह तैयार भी हो गई थी, लेकिन शूटिंग के वक्त पुत्रवधू के बजाय तारबाबू स्वयं आ गए थे और उन्होंने कहा कि वे कस्बे के बहुत सम्मानित आदमी हैं और उनकी पुत्रवधू फिल्म में काम नहीं करेगी. इसका सीधा मतलब यह भी था कि फिल्म में काम करने वाले लोग सम्मानित लोग नहीं हैं. खासतौर पर जो औरतें फिल्मों में काम कर रही हैं वे वेश्याएँ हैं. ऐसी कई घटनाएँ है जहाँ पर लेखक छोटे कस्बे के समाज में व्याप्त संकुचित सोच पर प्रकाश डालते हैं.

मलकानी ने इन सब घटनाओं पर गहरा दु:ख व्यक्त किया था. महिलाओं की आजादी पर बोलते हुए मलकानी 'महिला मुक्ति सेना' के एक सेनापति लगते थे. लेखक आगे उनकी सेकंडहैंड स्कूटर का भी सजीव रूप से वर्णन करते हैं. यूनिट में मलकानी की उपयोगिता की ही नहीं उनके महिलाओं संबंधी प्रगतिशील विचारों की भी धाक जमी हुई थी.

कहानी आगे बढ़ती है एक दिन मलकानी लेखक को अपने साथ शीला जी के घर ले जाते हैं. उनके साथ स्कूटर पर बैठकर शीला जी के यहाँ जाते समय रास्ते-भर मलकानी शीला जी की ही बातें करते रहे और यकीन दिलाते रहे कि शीला जी बहुत उदार, प्रगतिशील, साहित्यिक और जनवादी विचारों की महिला हैं. आखिरकार उनके घर पहुँच गए. दरवाजे पर लगे बोर्ड पर 'शीला दीक्षित, एम.ए. (हिन्दी) एम.ए. (संस्कृत)' लिखा देखकर लेखक प्रभावित हुए. परिचय आदि के बाद वे असली बात पर आ गये. मलकानी के कहने के बाद लेखक ने औपचारिक अनुरोध किया. वे बहुत मारक ढंग से मुस्कराकर बोलीं – "लेकिन मैंने तो कभी किसी फिल्म में अभिनय नहीं किया है." मलकानी ने कहा – "लेकिन आप नाटकों में अभिनय ही नहीं, निर्देशन भी करती हैं. यह रोल आपसे अधिक अच्छा कोई और नहीं कर सकता." फिर उन्होंने कई बहाने किये. जैसे स्कूल में परीक्षाएँ होने वाली हैं. कोर्स खत्म नहीं हुआ है. और उनका बेटा आने वाला है. उसकी तबियत कुछ खराब है. फिर उन्होंने इसी तरह की दो-चार बातें और कीं, लेकिन मलकानी बहुत समझदारी और चतुराई से उन्हें काटता रहा- "दरअसल मुश्किल से एक दिन का काम है जब आप कहेंगी तब ही हो सकता है. चाहें तो वे सीन इतवार के दिन कर लेंगे." किन्तु शीला जी संकोचवश कुछ निर्णय नहीं कर पातीं. इस प्रसंग के संवाद बड़े ही रोचक बन पड़े हैं.

उसी समय उनके पति का आना कहानी को एक नया मोड़ दे देता है. पति के पीछे-पीछे शीला जी भी अंदर चली जाती हैं. मलकानी लेखक को उनका परिचय देते हैं – "डॉ. दीक्षित हैं. शीला जी के पति...बहुत विद्वान आदमी हैं. अर्थशास्त्र में आगरा से पीएच.डी. किया है. जबलपुर में वरिष्ठ प्राध्यापक हैं..." फिर वे दोनों काफी देर तक चुपचाप बैठे रहे. कुछ देर बाद जब शीला जी बाहर आती हैं और यह कहकर अभिनय करने से इंकार करती हैं – "ऐसा है मलकानी जी, 'ये' मना करते हैं." तब मलकानी जी का चेहरा फीका पड़ जाता है. मलकानी बिलकुल खामोश हो जाते हैं. उनके विश्वास को ठेस पहुँचती है. लेखक सोच रहे थे कि मलकानी की प्रगतिशीलता, महिला मुक्ति आदि पर शीला जी को व्यवहार ने कुठाराघात किया था. वापस लौटते समय मलकानी ने पान की दुकान पर स्कूटर रोक दिया. मलकानी का चेहरा लाल हो गया था. वे बोले – "आप समझे...वह आदमी शीला जी के सांस्कृतिक विकास में एक बाधा है. साला बड़ा प्रोफेसर बना फिरता है. तीन बच्चों की अम्मां को कोई उठा ले जायेगा. क्यों..पढ़ाई-लिखाई सब गधे पर लाद दी है उसने... इससे तो अच्छा था कहीं क्लर्क में लग जाता... पक्का पुरातन पंथी और जड़ व्यक्ति है. आधुनिक विचार तो उसे छू तक नहीं गये हैं." बहुत देर तक मलकानी ऐसी ही बातें करते रहे.

कहानी का अंत बहुत ही रोचक है जब मूड ठीक करने के लिए मलकानी जी लेखक को उनके घर चलकर व्हिस्की पीने का आमंत्रण देते हैं तो लेखक मना नहीं कर पाते उनके घर चल देते हैं. मलकानी जी के घर पर मदिरापान की महफिल जमती है जहाँ मलकानी जी अपने तीनों बच्चों को अपनी खिदमद में लगा देते हैं – एक छ:-सात साल की लड़की आ गयी. मलकानी बोले – "दो शीशे के गिलास ले आओ और मम्मी से कहो पकौड़ी बना लें." लड़की चली गयी. उसने फिर आवाज दी. लड़की फिर आयी. अब उसने पानी लाने और अपने जूते-मोजे अंदर ले जाकर अंदर से चप्पल लाने के लिए कहा. कुछ देर बाद मलकानी जी का लड़का पकौड़ी लेकर आ गया. मलकानी ने उससे लेखक को नमस्ते करने के लिए कहा. इसके बाद मलकानी की सबसे छोटी दो-तीन साल की लड़की उसकी चप्पल लेकर

आयी. तीनों बच्चे सामने तख्त पर बैठ गये. वह अपने छोटे बच्चों के सामने शराब तो पीता ही है, साथ ही उन पर अपना हुकुम भी चलता है. इस दृश्य के माध्यम से हमें मलकानी की अनैतिकता और दुहरी मानसिकता के दर्शन होते हैं.

लेखक ने उनसे छोटी-मोटी बातें कीं फिर अंदर से कुछ ऐसी आवाज आयी जैसे परात पर चमचा बजाया गया हो. मलकानी ने अपने लड़के से कहा – "देखो, मम्मी बुला रही हैं. गरम पकौड़ी ले आओ." लड़का तुरंत अंदर गया और गरम पकौड़ी ले आया. फिर मलकानी ने हँसकर जोर से आवाज देकर पत्नी से कहा – "चटनी भी बना लो... ये बहुत बड़े लेखक आये हैं हमारे यहाँ."

कुछ देर बाद फिर परात बजी. मलकानी ने कहा – "बेटी, अंदर जाओ. चटनी ले आओ." लड़की अंदर गयी और चटनी ले आयी. फिर दोनों बैठे शराब पीते रहे. बातें करते रहे शाम के सात बज गए. अंदर फिर परात बजी. अबकी बार मलकानी खुद उठकर गया और वापस आ कर बोला – "आपकी भाभीजी कह रही हैं अब खाना यहीं खाकर वापस जाना."

इस पर लेखक मना करते हुए वहाँ से चल देते हैं. चलते-चलते वे मलकानी के उस वाक्य के बारे में सोचते हैं जो उन्होंने डॉ. दीक्षित के बारे में कहा था कि वह आदमी शीला जी के सांस्कृतिक विकास में बाधा है. वास्तव में लेखक को मलकानी के महिला संबंधित खोखले आदर्शों और कुंठित विचारधारा का पता चल चुका था.

इस प्रकार यह कहानी लेखक की उच्च कोटि की रचना है. अंत में मलकानी जी के नारियों के प्रति जो प्रगतिशील विचार थे वे खोखले साबित होते हैं. परस्त्री स्वतन्त्रता की हिमायत करने वाले अपनी पत्नी को ही पर्दे में रखते हैं.

- **बोध प्रश्न**

(1) लेखक लो बजट की फिल्म में सबसे महत्वपूर्ण सहयोग किसका मानते हैं?
(अ) कुँवर साहब (ब) मलकानी जी (स) डॉ दीक्षित (द) निर्देशक

(2) मलकानी जी किसे प्रगतिशील महिला मानते हैं?
(अ) शीला जी को (ब) यूनिट की हिरोइन को
(स) कमला की माँ को (द) अपनी पत्नी को

(3) शीला जी के पति किस विषय के वरिष्ठ प्राध्यापक थे?
(अ) अँग्रेजी (ब) हिन्दी (स) संस्कृत (द) अर्थशास्त्र

(4) लेखक ने महिला मुक्ति का सेनापति किसे कहा है?
(अ) तारबाबू को (ब) मलकानी जी को (स) पानवाले को (द) निर्देशक को

(5) यूनिट के किस महाशय को सिर्फ कलात्मक जिम्मेदारी ही नहीं बल्कि 'आटा-दाल का भाव' भी लगातार परेशान करता रहता था?
(अ) प्रोडक्शन मैनेजर को (ब) मलकानी जी को (स) अभिनेता को (द) निर्देशक को

(6) शीला जी की एक रचना किस पत्रिका में छप चुकी है?
(अ) धर्मयुग (ब) हंस (स) दीपक (द) दिनमान

13.4.2 पात्र सृष्टि

इस कहानी मे कुछ पात्र प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से कहानी को आगे बढ़ाते हैं. प्रस्तुत कहानी में प्रमुख रूप से तीन पात्र हैं लेखक, मलकानी और शीला जी. गौण पात्र भी हैं जो सीधे-सीधे हमारे सामने ना आकर भी कहानी को आगे बढ़ाने में सहायक सिद्ध होते हैं; जिनमें फिल्म निर्देशक, शीला जी के पति, कुँवर साहब, मलकानी जी की पत्नी तथा

बच्चे जो कुछ देर के लिए आकर चले जाते हैं.

मलकानी

इस कहानी में मलकानी प्रमुख पात्रों में से एक हैं. सहयोग देने वालों में एक ओवरसियर, जिन्हें सब इंजीनियर साहब कहते थे, बहुत सक्रिय थे. वे अपने को कवि समझते थे. मलकानी शीला जी का जिक्र इस तरह करते थे जैसे वे उनकी 'स्वप्नसुंदरी' हों. उनके बारे में कुछ कहते हुए मलकानी दूसरी दुनिया में पहुँच जाते थे. शीला जी के बारे में बताते-बताते यह भी स्पष्ट हो जाता था कि मलकानी किस तरह की महिलाओं को आदर्श मानते हैं. मलकानी की महिलाओं संबंधी धारणाएँ बहुत उच्च कोटि की और बहुत आदर्श लगती थीं. दरअसल मलकानी जी चाहते थे कि शीला जी फिल्म में कमला की माँ का रोल करें, इसलिए मलकानी जी शीला जी को फिल्म की कहानी और रोल समझाते हैं. पर जब शीला जी को उनका पति अभिनय करने से मना कर देता है तब मलकानी जी कहते हैं कि वह आदमी शीला जी के सांस्कृतिक विकास में एक बाधा है. किन्तु जब लेखक मलकानी के घर जाता है तब देखता है कि मलकानी खुद अपनी पत्नी के विकास में बाधा है. मलकानी के खुले विचारों की पोल वहीं पर खुल जाती है. उनके खोखले आदर्श सामने आ जाते हैं.

शीला जी

दूसरी महत्वपूर्ण पात्र शीला जी हैं, जिनसे कहानी में जान आती है. यदि शीला जी न होतीं तो कहानी ही अधूरी रह जाती. शीला जी पढ़ी लिखी सुसंस्कृत महिला हैं. प्रस्तुत कहानी में लेखक ने मलकानी की बातों द्वारा शीला जी का चरित्र चित्रण बखूबी किया है. वे कहते हैं कि मलकानी शीला जी का जिक्र इस तरह करते थे जैसे वे उनकी 'स्वप्नसुंदरी' हों. उनके बारे में कुछ कहते हुए मलकानी दूसरी दुनिया में पहुँच जाते थे. खासतौर से वे शीला जी की प्रगतिशीलता का वर्णन करते समय यह जाहिर करते थे कि शीला जी न होतीं तो इस कस्बे में प्रगतिशीलता न होती. शीला जी महिलाओं की पत्रिकाएँ ही नहीं मंगवातीं बल्कि उनमें कभी-कभार कुछ लिखती भी हैं. शीला जी की एक रचना 'धर्मयुग' में छप चुकी है. शीला जी बहुत सादगी से रहती हैं. शीला जी लड़कियों की आदर्श हैं. शीला जी खाना बहुत अच्छा बनाती हैं. शीला जी चमक-दमक पर विश्वास नहीं करतीं. शीला जी नई से नई किताबें पढ़ती हैं. शीला जी अंग्रेजी भी उसी अधिकार से बोलती हैं जैसे हिंदी बोलती हैं. शीला जी ने एक मीटिंग में एक अभद्र मंत्री को डाँट दिया था. शीला जी कभी किसी के चुनाव-प्रचार में नहीं जातीं. शीला जी दरअसल महिला-शक्ति, महिला-नैतिकता, महिला-साहस और महिला-सौंदर्य का प्रतीक जैसी थीं. वे यह सिद्ध करते थे कि ठीक है होंगी बंबई में शबाना आजमी, हमारे यहाँ शीला जी हैं. शबाना का बंबई में जो स्थान है वही शीला जी का यहाँ हैं. पर यही शीला जी अपने पति के मना करने पर अभिनय नहीं कर पातीं.

अन्य गौण पात्रों में शीला जी के पति डॉ. दीक्षित अर्थशास्त्र में पीएच.डी. और वरिष्ठ प्राध्यापक थे. किसी दूसरे शहर में एक कॉलेज के प्राध्यापक थे जो आते-जाते रहते थे.

कुँवर साहब का पात्र भी सबसे आवश्यक है. लेखक की फिल्म में महत्वपूर्ण सहयोग कुँवर साहब का था. कुँवर साहब भूत, भविष्य, वर्तमान से परे थे. खानदानी शराफत उनमें कूट-कूट कर भरी हुई थी. उन्होंने लेखक से हर तरह की मदद का वायदा किया था. बल्कि कहना चाहिए उनके सहयोग के कारण ही लेखक को कस्बे का व्यापक समर्थन मिला था.

13.4.3 संवेदना और समस्या

कहानी एक लो बजट फिल्म के निर्माण के बहाने नारियों के संस्कृतिक विकास में बाधा डालने वाले समाज पर व्यंग्य है. कहानीकार का मानना है कि पति हमेशा अपनी पत्नी के सोचने समझने कि क्षमता को कम आँकता है और उस पर लगातार दबाव बनाकर रखता

है. स्त्री को चारदिवारी में बंद रखना चाहता है. स्त्री से जुड़ा हुआ हर फैसला एक पुरुष ही लेता है चाहे वह एक पति हो, पिता हो या पुत्र हो.

प्रस्तुत कहानी में लेखक ने बड़े चुटीले ढंग से तारबाबू की पुत्रवधू, शीला जी और मलकानी की पत्नी के जरिये घर की स्त्रियों – गृह लक्ष्मियों, भले न वो अपने आप में कितनी ही प्रगतिशील क्यों न हो, की वास्तविक दशा – मानसिक गुलाम की-सी दशा को पेश कर इस दिशा में गंभीर चिंतन के लिए उकसाया है.

चिंतन का दूसरा बिंदु प्रगतिशील होने का दावा दिखावा करने वाले लोगों की दुहरी मानसिकता है, जिसे लेखक ने बखूबी मलकानी के चरित्र के जरिए उभारा है.

'अपनी अपनी पत्नियों का सांस्कृतिक विकास' - इस शीर्षक के साथ ही लेखक अपने व्यंग्यात्मक मंतव्य को उजागर कर देते हैं. कहानी का उद्देश्य बेहद साफ़ हो जाता है. लेखक की संवेदना इस कहानी में विशेष रूप से पत्नी के रूप में स्त्री की दोयम स्थिति से जुड़ी हुई है और उसे बनाए रखने में, बल्कि और कड़ाई से बनाए रखने में मलकानी जैसे दुहरी मानसिकता वाले लोगों को उन्होंने बिना कहे ही समाज की समस्या के रूप में रेखांकित कर दिया है. मलकानी शीला जी के सांस्कृतिक विकास के लिए चिंतित हैं और उनके पति को उनके सांस्कृतिक विकास के लिए बाधा समझते हैं, जबकि उनकी पत्नी को मुँह से आवाज निकालने की भी इजाजत नहीं है, वह थाली से आवाज कर बुलाती है.

13.4.4 भाषा शैली

प्रस्तुत कहानी की भाषा-शैली व्यंगात्मक लाक्षणिक और वैविध्यपूर्ण है. कहानी की भाषा सरल, स्पष्ट तथा बोध गम्य है. वाक्य छोटे और सरल हैं तथा सबल भावाभिव्यक्ति के कारण इस कहानी को सभी वर्ग के पाठक पढ़ और समझ सकते हैं. आलंकारिक वाक्य प्रयोग के कारण भाषा बहुत ही रोचक तथा व्यंजक बन पड़ी है. जैसे – "होंगी बंबई में शबाना आजमी, हमारे यहाँ शीला जी हैं. शबाना का बंबई में जो स्थान है वही शीला जी का यहाँ है."

"तब दूसरी में सांस यानी पेट्रोल आता था, वह भागती थी. इसलिए अगर किसी को कस्बे जाना होता था तो मलकानी का स्कूटर एक बरकत जैसा था."

प्रस्तुत कहानी में हिन्दी के साथ-साथ अंग्रेजी भाषा के शब्दों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में किया गया है. जैसे – रोल, फिल्म, यूनिट, शूटिंग, प्रोडक्शन, टेकनीशियन, लोकेशन आदि. कहीं-कहीं पर मुहावरे और कहावतें भी दिखाई देती हैं. जैसे तोते उड़ गए, चेहरे का रंग उड़ जाना, नेकी और पूछ पूछ.

13.5 मुख्य अंशों की व्याख्या

1. हवा में हल्की-सी ठंडक थी. ढाक के जंगल और नर्मदा के ऊपर से हवा चुपचाप गुजर रही थी. मैं मलकानी के उस वाक्य के बारे में सोच रहा था जो उसने डॉ. दीक्षित के बारे में कहा था – वह आदमी शीला जी के सांस्कृतिक विकास में बाधा है...

संदर्भ : प्रस्तुत अंश असगर वजाहत कृत 'अपनी अपनी पत्नियों का सांस्कृतिक विकास' कहानी से लिया गया है. असगर वजाहत की यह कहानी रोचक शैली में हल्के फुल्के ढंग से कुछ हास्यास्पद परिस्थितियों और कुछ बेहद साधारण बातचीत के जरिए स्त्री विमर्श के एक गंभीर और विचारणीय मसले को पाठक के जेहन में डाल देती है.

प्रसंग : प्रस्तुत पंक्ति कहानी की अंतिम पंक्ति है, जिसमें लेखक ने इस कहानी का केंद्रीय कथ्य को विचार बिंदु के रूप में पाठकों के जेहन में मंथन के लिए छोड़ दिया है.

व्याख्या : लेखक विचार में डूबे हैं और सोचते हैं कि मलकानी जी कितने बड़े बहुरुपिये हैं जो अपनी पत्नी को चारदिवारी में बंद रखते हैं. परपुरुष के साथ बात तो क्या करने दें सामने

आने भी नहीं देते और दूसरे पर दोषारोपण करते हैं. शीला जी को अभिनय करने से मना करने पर वह प्रोफेसर को पक्का पुरातन पंथी और जड़ व्यक्ति कहता है. लेकिन मलकानी खुद कितना खुले दिमाग का है और स्त्रियों के बारे में उसका वास्तविक दृष्टिकोण कैसा है यह लेखक को उसके घर जाकर पता लगता है. लेखक को आघात-सा लगता है. मलकानी की सारी पोल खुल जाती है. लेखक को पता लग जाता है की जो मलकानी स्त्री प्रगतिशीलता की बड़ी-बड़ी बातें करता है, खुद अपने घर में वह पत्नी को मुँह खोलने तक की स्वतंत्रता नहीं देता. दोगली मानसिकता के उस व्यक्ति के 'खाने के दाँत और दिखाने के और हैं.'

विशेषता : 1. पूरी कहानी का सार इस वाक्य में समा गया है.

2. भाषा सहज और सरल है.

- **निम्नलिखित गद्यांशों की व्याख्या कीजिए**

(1) "लेकिन आप नाटकों में अभिनय ही नहीं, निर्देशन भी करती हैं. आपसे अधिक अच्छा यह रोल कोई और नहीं कर सकता."

(2) "जी जाने-माने प्रोफेसर हैं. वैसे ही शौकिया फिल्मों के लिए लिखते और काम करते हैं... और ये तो कला फिल्म है... मतलब वैसी जैसी सत्यजीत राय, श्याम बेनेगल वगैरा बनाते हैं. मतलब सामाजिक चेतना वाली फिल्में..."

(3) "वे मुझ पर यह सिद्ध करते थे कि ठीक है होंगी बंबई में शबाना आजमी, हमारे यहाँ शीलाजी हैं. शबाना का बंबई में जो स्थान है वही शीलाजी का यहाँ है."

(4) "आपकी भाभीजी कह रही हैं अब खाना यहीं खाकर वापस जाना."

(5) "साला बड़ा प्रोफेसर बना फिरता है. तीन बच्चों की अम्मां को कोई उठा ले जायेगा. क्यों..पढ़ाई-लिखाई सब गधे पर लाद दी है उसने... इससे तो अच्छा था कहीं क्लर्क लग जाता...पक्का पुरातन पंथी और जड़ व्यक्ति है."

13.6 सारबिन्दु

- असगर वजाहत उन विरले कहानीकारों में गिने जाते हैं जिन्होंने पूरी तरह अपनी प्रतिबद्धता बनाए रखते हुए भाषा और शिल्प के सार्थक प्रयोग किए हैं.
- फिल्म बनाने में जिन कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है उनका प्रभावी और चित्रात्मक वर्णन किया है.
- कहानी का केंद्र बिन्दु मलकानी है जिसके माध्यम से लेखक ने स्त्री विमर्श और पुरुषों की दुहरी मानसिकता दोनों को उजागर किया है.
- लेखक की कहानी की प्रेरणा और आधारशिला सामाजिकता के धरातल पर खरी उतरी है. हास्य, व्यंग्य और खिलंदड़ापन के साथ-साथ उनके रचना-संसार में संवेदना के दर्शन होते हैं.
- कहानी के शीर्षक से ही पता लगता है की लेखक बहुआयामी जटिल यथार्थ को व्यक्त करने के लिए नए हथियारों की तलाश में है.
- रोचकता की तमाम शर्तों पर पूरा उतरते हुए असगर वजाहत की यह कहानी प्रतिबद्धता के साथ नवीनता, प्रयोगधर्मिता का सुसंगत मेल है.

13.7 परीक्षोपयोगी प्रश्नावली

- **निम्नलिखित प्रश्न के सविस्तार उत्तर दीजिए**

(1) फिल्म की शूटिंग प्रारम्भ होने के बाद की स्थिति का वर्णन कीजिए.

(2) 'अपनी अपनी पत्नियों का सांस्कृतिक विकास' कहानी का विश्लेषण कीजिए.

(3) मलकानी का चरित्र चित्रण कीजिए.

(4) 'अपनी अपनी पत्नियों का सांस्कृतिक विकास' कहानी की कथावस्तु देते हुए शीर्षक की सार्थकता पर विचार कीजिए.

(5) 'अपनी अपनी पत्नियों का सांस्कृतिक विकास' कहानी की भाषा शैली की विशिष्टता पर प्रकाश डालिए.

- **टिप्पणी लिखिए**

(1) असगर वजाहत

(2) असगर वजाहत की भाषा शैली

(3) 'अपनी अपनी पत्नियों का सांस्कृतिक विकास' कहानी की संवेदना

(4) 'अपनी अपनी पत्नियों का सांस्कृतिक विकास' कहानी के शीर्षक की सार्थकता

(5) 'अपनी अपनी पत्नियों का सांस्कृतिक विकास' कहानी का मलकानी

- **वस्तुनिष्ठ प्रश्न**
- **निम्नलिखित प्रश्न के उत्तर एक वाक्य में दीजिए**

(1) यात्रा का खर्च कम करने के लिए प्रोडक्शन मैनेजर ने क्या तरीका अपनाया?

(2) शीला जी ने अभिनय करने से क्यों मना कर दिया?

(3) कुँवर साहब की हवेली कहाँ पर थी?

(4) लेखक ने लो बजट फिल्म शूटिंग की तुलना किसके साथ की?

(5) मलकानी की दृष्टि में शीला जी के सांस्कृतिक विकास में बाधा कौन है?

(6) किसे देखकर मलकानी जी के चेहरे का रंग उड़ जाता है?

- **रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए**

(1) .... बहुत उदार, प्रगतिशील, साहित्यिक और जनवादी विचारों की महिला हैं.

(2) कहानी का आरंभ .... के छोटे से स्टेशन से होता है.

(3) .... वाला बक्सा किसी स्टेशन पर ट्रेन बदलते वक्त छूट गया था.

(4) महिलाओं की आजादी पर बोलते हुए मलकानी '.............' के एक सेनापति लगते थे.

(5) .... ने हर तरह की मदद का वायदा किया था.

- **कथन सही है अथवा गलत, बताएँ**

(1) लेखक की फिल्म का बजट बहुत बड़ा था.

(2) 'कमला की माँ' के लिए तारबाबू की पुत्रवधू से बात की गई थी.

(3) मलकानी जी फिल्म के निर्माण में पीर और भिश्ती की भूमिका निभा रहे थे.

(4) शीला जी के पति डॉक्टर दीक्षित संस्कृत में पीएच.डी. और वरिष्ठ प्राध्यापक थे.

(5) शूटिंग किसी ऐसे कस्बे में हो रही थी जहाँ सिनेमाहॉल भी न था.

13.8 उपयोगी पाठ्यसामग्री

- आधुनिक हिन्दी कहानी – डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल, वाणी प्रकाशन
- समकालीन कहानी की पहचान – डॉ नरेंद्र मोहन
- पल्लव, बनास जन, अंक-21, जनवरी-मार्च 2017, (असगर वजाहत पर केंद्रित विशेषांक 'हर क़ैद से आज़ाद' – असगर वजाहत)
- https://www.rachanakar.org/2014/04/blog-post_4056.html
- https://hi.wikipedia.org/wiki/असगर_वजाहत

इकाई 14 'असली बात' - नासिरा शर्मा

रूपरेखा

14.1 उद्देश्य

14.2 प्रस्तावना

14.3 लेखक परिचय
  14.3.1 जीवन परिचय
  14.3.2 कृतित्व परिचय

14.4 कहानी कला की दृष्टि से 'असली बात' कहानी की समीक्षा
  14.4.1 कथावस्तु
  14.4.2 चरित्र चित्रण
  14.4.3 संवाद
  14.4.4 देशकाल और वातावरण
  14.4.5 भाषा शैली
  14.4.6 उद्देश्य

14.5 मुख्य अंशो की व्याख्या

14.6 सारबिंदु

14.7 परीक्षोपयोगी प्रश्नावली

14.8 उपयोगी पाठ्यसामग्री

14.1 उद्देश्य

विद्यार्थी मित्रो! इस इकाई को पढ़ने के बाद आप –

- नासिरा शर्मा के व्यक्तित्व और कृतित्व से परिचित हो सकेंगे.
- 'असली बात' के कथानक, कहानी कला, भाषा शैली आदि विशेषताओं से परिचित हो सकेंगे.
- कहानी के प्रमुख चरित्रों का चरित्र चित्रण कर सकेंगे.
- समाज में समानता, बंधुत्व की भावना और मानवतावादी विचारधारा को विकसित कर सकेंगे.
- सांप्रदायिक वैमनस्य को छोड़कर हिन्दू-मुस्लिम भाईचारे की भावना, अन्नदान की शक्ति, वास्तविक परिस्थिति की समझ विकसित कर सकेंगे.

14.2 प्रस्तावना

हिन्दी-गुजराती आदि भाषाओं में कई अलग-अलग विषयों तथा समस्याओं को लेकर कहानियाँ लिखी जाती रही हैं. कुछ कहानियाँ सांप्रदायिक समस्या, दंगे-फसाद, देश-विभाजन आदि विषयों पर भी लिखी गयीं हैं. भीष्म साहनी विरचित 'अमृतसर आ गया' तथा मोहन राकेश लिखित 'मलबे का मालिक' ऐसी कहानियों के उत्तम उदाहरण हैं. उल्लिखित दोनों कहानियों में सांप्रदायिक तनाव का चित्रण है. 'मलबे का मालिक' कहानी के गनी मियाँ का चरित्र देखते ही बनता है. वह अपने पुत्र के हत्यारे रक्खा पहलवान को पुत्रवत मानकर उनकी खुशियों की दुआ माँगता है. यहाँ पर गनी मियाँ का आत्मसमर्पण एवं त्याग उनके चरित्र को उदात्तता एवं गरिमा प्रदान करता है. आज हम एक ऐसी ही कहानी पढ़ेंगे, जो एक तनावग्रस्त परिस्थिति

का चित्रण हमारे सामने प्रस्तुत करती है. उपस्थित समस्या या परिस्थिति का समाधान कैसे किया जाता है, यह चित्र बड़े ही रोचक ढंग से दिखाया गया है. 'असली बात' कहानी हिन्दी की सुप्रसिद्ध लेखिका नासिरा शर्मा की चिंतनात्मक तथा विचारप्रधान कहानी है. जो हमारे वर्तमान समाज के प्रतिबिंब को हमारे सामने प्रस्तुत करती है. आज हमें समाज में व्याप्त इस प्रकार की कई छोटी-मोटी समस्याओं पर भी विचार करना होगा. तभी हमारे देश (राष्ट्र) समाज और व्यक्ति की प्रगति होगी. जयशंकर प्रसाद जी की प्रस्तुत पंक्तियाँ इस विचार को सार्थक करती हैं –

"औरों को हंसते देख मनु,
खुद हंसो और सुख पाओ.
अपने सुख को विस्तृत कर लो,
सबको सुखी बनाओ ."

(कामायनी)

14.3 लेखक परिचय

14.3.1 जीवन परिचय

नासिरा शर्मा का जन्म 22 अगस्त, सन् 1948 ई. को उत्तरप्रदेश के इलाहाबाद नामक शहर में हुआ था. आप, हिन्दी भाषा की लब्धप्रतिष्ठित लेखिका हैं. आपने ज्यादातर उपन्यास तथा कहानी पर अपनी कलम चलाई है. आपकी लेखनी के विषय वर्तमान समय की समस्याओं को छूते हैं. हिन्दी, उर्दू, अंग्रेजी, फारसी तथा पश्तो भाषा पर आपकी गहरी पकड़ है. आप ईरानी समाज और राजनीति के अतिरिक्त साहित्य कला व संस्कृति विषयों की विशेषज्ञ हैं. इराक, अफ़गानिस्तान, सीरिया, पाकिस्तान व भारत के राजनीतिज्ञों तथा प्रसिद्ध बुद्धिजीवियों के साथ उन्होंने साक्षात्कार किये, जो बहुचर्चित हुए. इनके साक्षात्कार से समाज के विषय में अच्छी जानकारी प्राप्त होती है. युद्धबन्दियों पर जर्मन और फ्रेंच दूरदर्शन के लिए बनी फिल्म में इन्होंने महत्वपूर्ण योगदान दिया है.

14.3.2 कृतित्व परिचय

नासिरा जी ने अब तक दस उपन्यास, छह कहानी संकलन, तीन लेख-संकलन, सात पुस्तकों के फ़ारसी से अनुवाद, 'सारिका', 'पुनश्च' का ईरानी क्रांति विशेषांक, 'वर्तमान साहित्य' के महिला लेखन अंक तथा 'क्षितिज पार' के नाम से राजस्थानी लेखकों की कहानियों का सम्पादन किया है. 'सात नदियाँ एक समन्दर' 1984, 'शाल्मली' 1987, 'ठीकरे की मँगनी' 1989, 'ज़िन्दा मुहावरे' 1992, 'अक्षय वट' 2003, 'कुइयाँजान' 2005, 'ज़ीरो रोड' 2008, 'पारिजात' 2011, 'अजनबी जज़ीरा' 2012, 'कागज़ की नाव' 2014 इनके प्रकाशित प्रसिद्ध उपन्यास हैं. उपन्यास के साथ-साथ इन्होंने कहानी पर भी कलम चलाई. जिनमें 'शामी कागज', 'पत्थरगली', 'इब्ने मरियम', 'संगसार', 'सबीना के चालिस चोर', 'खुदा की वापसी', 'इंसानी नस्ल', 'गूंगा आसमान', 'दूसरा ताजमहल', 'बुतखाना' प्रसिद्ध कहानी संग्रह हैं.

नासिरा जी एक अच्छी अनुवादक भी रही हैं. 'शाहनामा-ए-फिरदौसी', 'गुलिस्ता-ए-सादी' आदि उनकी अनुदित कृतियाँ हैं. इनके साथ-साथ 'किताब के बहाने', 'औरत के लिए औरत', 'राष्ट्र और मुसलमान' आदि इनके सुप्रसिद्ध लेख-संग्रह हैं. 'जहां फौव्वारे लहू रोते हैं' – इनके द्वारा रचित रिपोर्ताज है. इनकी कहानियों पर अब तक 'वापसी', 'सरज़मीन' और 'शाल्मली' के नाम से तीन टीवी सीरियल और 'माँ', 'तड़प', 'आया बसंत सखि', 'काली मोहिनी', 'सेमल का दरख्त' तथा 'बावली' नामक दूरदर्शन के लिए छह फ़िल्मों का निर्माण किया गया है.

पुरस्कार नासिरा जी को सन् 2008 ई. में अपने उपन्यास ‘कुइयाँजान’ के लिए यू.के. कथा सम्मान से सम्मानित किया गया तथा ‘पारिजात’ उपन्यास पर सन् 2016 ई. का साहित्य अकादमी पुरस्कार दिया गया. नासिरा शर्मा को साल 2014 में प्रकाशित उनके उपन्यास ‘कागज़ की नाव’ के लिए वर्ष 2019 का व्यास सम्मान दिया गया.

- **बोध प्रश्न**

(1) नासिरा शर्मा का जन्म कब और कहाँ पर हुआ था?

(अ) इलाहाबाद (ब) महाराष्ट्र (स) केरल (द) गुजरात

(2) नासिरा शर्मा ने ज्यादातर साहित्य किस भाषा में लिखा है?

(अ) हिन्दी (ब) अंग्रेजी (स) तेलगु (द) उर्दू

(3) निम्नलिखित में से कौन-सा उपन्यास नासिरा शर्मा रचित नहीं है?

(अ) ‘जिंदा मुहावरे’ (ब) ‘सात नदियां एक समंदर’

(स) ‘कुरु-कुरु स्वाहा’ (द) ‘जीरो रोड’

(4) ‘गूंगा आसमान’ रचना की विधा बताइए

(अ) कहानी संग्रह (ब) उपन्यास (स) अनुवाद (द) रिपोर्ताज

(5) किस उपन्यास पर नासिरा शर्मा को साहित्य अकादमी पुरस्कार दिया गया है?

(अ) ‘पारिजात’ (ब) ‘ठीकरे की मँगनी’ (स) ‘ज़िन्दा मुहावरे’ (द) ‘कुइयाँजान’

14.4 कहानी कला की दृष्टि से ‘असली बात’ कहानी की समीक्षा

14.4.1 कथावस्तु

हिन्दी की सुप्रसिद्ध लेखिका नासिरा शर्मा की चिंतन प्रधान कहानी ‘असली बात’ ‘इंसानी नस्ल’ कहानी संग्रह से ली गयी है. प्रस्तुत कहानी का प्रारंभ शहर में हिन्दू-मुसलमान के बीच आपस में हुए दंगा-फसाद से होता है. प्रशासन दंगा-फसाद को रोकने में नाकामयाब होता है. अतः दंगे की आग पूरे शहर में फैल जाती है. लोग एक-दूसरे की जान के दुश्मन बन जाते हैं. पुलिस के होते हुए भी लोग एक-दूसरे के घरों के उपर कभी बोतलें तो कभी भारी वस्तु फेंकते रहते हैं. प्रवर्तित परिस्थिति को पार लगाना पुलिस अफसर तथा सहकर्मियों के लिए एक यक्ष प्रश्न बन जाता है. अंत में प्रशासन को गोली और हवाई-फायर का इस्तेमाल करना पड़ता है तब जाकर दोनों मोहल्लों में शांति का वातावरण पनपता है.

सिपाही रामदीन नामक युवक की ड्यूटी बताशेवाली गली में लगाई जाती है. यह शहर की तंग गली थी. दंगे का दूसरा दिन था. एस. पी. साहब ने कड़े आदेश दे दिये कि जहाँ कहीं भी परिस्थिति बेकाबू बने तथा परिस्थिति संदेहात्मक दिखे तो तुरंत गोली मार दो. इस आदेश का पालन करते हुए सिपाही रामदीन भी चौकन्ना हो जाता है. वह अपनी ड्यूटी पर चुस्त तैनात हो जाता है, ताकि कोई अप्रिय घटना न हो. जब सिपाही रामदीन लैंपपोस्ट के नजदीक खड़ा होकर बीड़ी के कश लगाता है, तब अचानक एक औरत की आवाज सुनाई देती है – “भैया जी! बच्चा गरमी से हलकान हो रहा है - जरा खुली हवा में टहला देते.” स्त्री की आवाज सुनकर सिपाही रामदीन चौंक पड़ता. बीड़ी फेंककर उस नंगे काले-बच्चे को चुटकी बजाकर बहलाने लगता है. तब वहीं पर अचानक दूसरी गली का कांस्टेबल आ पहुँचता है और रामदीन से कहने लगता है - “यह चकल्लस कब से लगाए हो?” रामदीन कोई प्रत्युत्तर नहीं देता और सीटी बजाता हुआ तथा हाथ का डंडा जमीन पर फटकारता हुआ आगे

चल पड़ता है. थोड़ी देर के बाद बच्चा शांत हो जाता है और रामदीन के कंधे पर सिर रखकर सो जाता है. “यह लड़का मामा की गोद समझकर सो गया है.” रामदीन सोचता है कि वर्दी खराब करे इससे पहले बच्चे को उसकी माँ को सौंप देना चाहिए. रामदीन दरवाजे पर डंडा लगाता है तुरंत दरवाजा खुलता है और आवाज़ आती है - “कब तक कर्फ्यू खुलेगा भैयाजी !” औरत बच्चा अपने हाथ में ले लेती है. औरत के मुँह से यह शब्द सुनकर रामदीन का मत्था ठनका. उसने कहा कि - “लड़ते वक्त तो तुम लोग सोचते नहीं हो, अब हम का बताएँ.” औरत ने प्रत्युत्तर दिया - “अब जहाँ चार बरतन साथ होंगे तो वहाँ टकराहट तो होगी न भैयाजी.” इस प्रसंग में रामदीन का बच्चे को बहलाना, बच्चे का सर कंधे पर रख कर सुलाना मानवता का परिचायक है. एक पुलिसकर्मी में भी कोमल भावनाएँ होती हैं, इसका भली भाँति वर्णन मिलता है.

रामदीन सिपाही की ड्यूटी के तीसरे दिन परिस्थिति काबू में थी. फिर भी लोग इतने डरे-सहमे थे कि कोई दरवाजा खोलने को राजी नहीं था. पुलिस का डर इतना घर कर गया था कि कोने वाले एक घर में कल शाम को एक दादी का निधन हो जाने के बावजूद भी लोग घर का दरवाजा नहीं खोल रहे थे. सुखबीर और परशुराम हवालदार की सांत्वना के बावजूद भी दरवाजा नहीं खोला गया. कर्फ्यू हटने के बाद ही घंटेभर में शव का अंतिम संस्कार कर फिर से दरवाजा बंद कर लोग घर के अंदर बैठ गये. लोगों में दहशत फैली हुई थी. इन दिनों रामदीन का व्यवहार एकदम नरम रहता है, फिर भी लोग ड्यूटी के समय रामदीन को चाय-पानी तक का नहीं पूछते. रामदीन मन-ही-मन सोचता है - “चलो उनका तो कर्तव्य है कि लोगों की मदद करना तथा समय-समय पर आदमी के काम आना. अब यह विधवा तंबोलन को ही देखो ना. उसका पति ट्रक के नीचे दबकर मर चुका है. अब मदद मांगती है तो कभी कभार मदद कर देता हूँ.” विधवा तंबोलन के अलावा सब लोग पुलिस से डरते थे.

अचानक रामदीन को चार दिन पहले की घटना याद आती है. शांत मोहल्लों में अचानक भगदड़ मच गई. अक्सर छोटी-मोटी वारदातें उसी दोराहे से उठकर आसपास तनाव पैदा करती है. उस दिन भी वही हुआ. गली में अंधेरा था, क्योंकि लाईट दो-तीन घंटे से गायब थी. एकाएक उस मोहल्ले में से रोते-चिल्लाते लोगों की आवाजें आने लगी. ड्यूटी पर तैनात सिपाही भी नहीं समझ पा रहे थे कि शांत माहौल में ऐसा भी क्या हुआ जो लोग रोने लगे हैं. भीड़ अंधेरे में जमा हो गई. किसी को भी पूछने पर पता नहीं लग पाया कि आखिर यह किसकी चाल है. जो लोग पुलिस की गिरफ्त में आ गये थे, उनसे पूछने पर भी कुछ हाथ नहीं लगा. अंत में तंग आकर प्रभारी ने बताशेवाली गली और हनुमानगढ़ी नामक विस्तार में कर्फ्यू लगाने का आदेश दे दिया और कड़क शब्दों में सूचित किया गया कि शहर के सभी संवेदनशील इलाकों में कड़क पहरा रहे ताकि ऐसे तत्वों को जल्द-से-जल्द पकड़ा जाए. शहर के सभी लोग नये अफसर के स्वभाव को भली भाँति समझ चुके थे - “यह नया अफसर सख्त है, किसी की सुनता नहीं है, जवान है और कानून का मतवाला है.” शहर के कई बदमाशों को उन्हें चिढ़ाने और तपाने में एक प्रकार का मानो मजा आने लगा था. लेकिन वे लोग यह नहीं समझ पा रहे थे कि इस प्रकार की हरकतें कितनी महंगी पड़ सकती हैं. जिनका परिणाम पूरे समाज को भुगतना पड़ता है.

शहर में नवरात्र शुरु होने वाला था. नवरात्र का प्रारंभ होने से पूरे शहर में रौनक फैल गई थी. बताशेवाली गली के हलवाई, माली और उनसे अधिक झुग्गी झोपड़ीवाले खुश थे, क्योंकि नवरात्र के दौरान भरपेट स्वादिष्ट तथा मुफ्त में भोजन मिलने वाला था. लेकिन सबकी चिंता का विषय था – यह कर्फ्यू, जो खत्म होने का नाम ही नहीं ले रहा था.

पुलिसवालों को अंदाज आ गया था कि तनाव अब शांत हो गया है. लेकिन साहब सभी को मजा चखाना चाहते थे. दोनों मोहल्लों के गरीब लोग तो अब पछतावा कर रहे थे. लोगों के चेहरे पर उदासी घर कर गई थी. लोग काम से बेकार हो गये थे. मज़दूर ने मज़दूरी से हाथ धोये तो दूकानदार ने ग्राहकों से. गरीब लोगों के घरों में दो दिन से चूल्हे नहीं जले थे. इतना ही नहीं कर्फ्यू के कारण चींटी-चींटियों की हालत भी कमजोर होने लगी थी. आखिरकार कुछ दूकानदारों ने मिलकर एस. पी. साहब को मनाने का निर्णय किया और कर्फ्यू हटते ही थाने पहुँच गये. “घर-घर फाका है, न काम है, न रोटी, न खरीददार, न मुनाफा. ऐसी स्थिति में अब हमारी गलती माफ करें. सजा बहुत हो गई महाराज.” एक आदमी ने कहा. “वह सब ठीक है, मगर इस बार कर्फ्यू तभी हटेगा जब आपस में लड़ना छोड़ेंगे.” साहब ने कहा. तभी बीच में ही छक्कु स्टोरवाला टपक पड़ा और बोला - “यह तो बड़ी मुश्किल शर्त है, हम तो ठहरे अहिंसा के पुजारी, मगर उधरवालों से राम बचाएँ.” जो लोग साहब को मनाने आये थे उनके बीच ही मामला बिगड़ गया. यह सब अफसर के सामने होते हुए देखकर साहब का मत्था ठनका. “देखे बिना किसी कारण मेरे सामने भी शुरु हो गये, भागो यहाँ से वरना सबको दंगे के जुर्म में लॉकर में बंद कर दूँगा.” सिपाही रामदीन को कहा गया कि आज से कर्फ्यू एक घंटे की जगह आधा घंटा ही खुलेगा. यह खबर पूरे शहर में हवा की तरह फैल गई. लोगों में चिंता की लहर दौड़ गई. शहर के लोग समूह में सिरफिरे प्रभारी पांडेय के पास पहुँचे और मिन्नतें करने लगे. लेकिन प्रभारी पांडेय ने मिलने से इंकार कर दिया. अब तो प्रभारी पांडेय ने ऐलान कर दिया कि आप लोग जो भी करें, लेकिन प्रभारी आपकी बात सुनने वाले नहीं हैं. अब लोगों के मन में पछतावा हो रहा है, आखिर किसलिए उन्हें ये दिन देखने पड़ रहे है. शहर के सुलेमान भाई और राजु भैया एक-दूसरे को सफाई देने लगे – “भला हमने कभी दुश्मनी निभाई आपस में? पता नहीं कौन है, जो यह सब करता है और गेहूं के साथ घुन भी पिसता है.” इस प्रकार की बातों को सुनकर अब एस. पी. साहब को यकीन हो गया कि अब लोहा गरम है – हथौड़ा मार देना चाहिए. तब प्रभारी पांडेय द्वारा ऐलान करवाया गया कि इस शर्त पर कर्फ्यू हटाया जा रहा है कि अब कोई दंगा-फसाद नहीं होगा. ऐलान के बीच ही लोगों में से आवाजें आने लगी - “नहीं होगा - नहीं होगा.” प्रस्तुत प्रसंग में अनेकता में एकता के दर्शन होते हैं. कोई नहीं चाहता कि दंगे हो. सभी धर्म के लोग शांति का आह्वान करते हैं.

विधवा तंबोलन के लड़के (बच्चे) को बुख़ार हो गया था. कर्फ्यू हट चुका था. लेकिन अस्पताल या डॉक्टर के पास ले जाने के पैसे नहीं थे. अतः वह विधवा तंबोलन अपने बीमार लड़के को मजार पर सूफी बाबा की दरगाह पर ले जाती है. वह सोचती है कि दवा न सही, दुआ से ठीक हो जाए. जब वह बच्चे को लेकर दरगाह पहुँची तब शाम हो चुकी थी. भीड़ भी बहुत थी. नमाज ख़त्म हो गई थी. उसकी आँखें दरगाह के मुजाविर साहब को ढूँढ रही थी. वातावरण में शांति की छटा फैली हुई थी. तब अचानक उनकी नजर मुजाविर साहब तथा उनके साथ एक गेरुए कपड़े पहने संन्यासी पर भी पड़ी. “लो - संभालो” मुजाविर ने आठ-दस बंडल अगरबत्ती के उस आदमी को थमाये. मुजाविर साहब को देखकर तंबोलन ने कहा - “भूख से अधमरा मेरा बेटा कल से बीमार है. “घबराने की बात नहीं.” मुजाविर साहब ने बच्चे के सिर पर हाथ फेरा और सीने पर कुछ पढ़कर फूँका. फिर पास पड़े इलायची दानों के पैकटों के ढेर से एक उठाकर तंबोलन को दे दिया.

तभी विधवा तंबोलन बच्चे को लेकर दूसरी तरफ चली जाती है और इलायची के दाने बच्चे के मुँह में दिये, बच्चा फौरन उसे चूसने लगा. अपने मुँह में भी पाँच-छः दाने डाले. कई दिनों के बाद विधवा तंबोलन और उसके बच्चे ने मुँह में कुछ डाला था. तंबोलन का भूख के मारे हाल बेहाल हो गया था. उसने आभार प्रकट करते हुए मुजाविर के सामने देखा

और जब वह इलायची की फाँकी मुँह में डालने वाली ही थी कि अचानक मुजाविर के गुस्से से तिलमिला चहेरे को देखकर रुक गई. मुजाविर उनके सामने बैठे दो-तीन लोगों को जबान से फटकार रहे थे. बाद में पता चलता है कि टीलेवाले मंदिर के महंत को लेकर कुछ लोगों ने आपत्ति जताई थी. मंदिर के महंत बचपन से ही दरगाह पर आते थे. अतः उनका विरोध करनेवालों को फटकारते हुए मुजाविर कहते हैं - "पीर-औलिया इंसानों में फर्क नहीं करते, यह दर सबके लिए खुला है, अमीर-गरीब, हिन्दू-मुसलमान, छोटा-बड़ा. खबरदार जो कभी अपनी जाहिलाना राय मुझे देने यहाँ आए." मुजाविर की इस बात से कहानी में चार चाँद लग जाते हैं.

कुछ देर बाद मर्द-औरत अपना कटोरा लेकर आगे बढ़ने लगे. उनकी मुराद पूरी हुई थी. तंबोलन भी प्रसाद के इंतजार में आगे बढ़ती है, लेकिन दुर्भाग्यवश उसकी बारी आने तक प्रसाद खत्म हो जाता है. अतः उसे वहाँ से निराश होकर वापस सड़क पर लौटना पड़ता है. अंत में तंबोलन ने मन बना लिया था कि - "वह तंबोलन है, फकीरन नहीं है. कल तक भूखी रह सकती है. "यहाँ पर लेखिका ने तंबोलन की इस उक्ति के माध्यम से स्वाभिमान भाव के दर्शन कराए हैं."

दूसरे दिन बेटे का बुखार तो उतर गया था, मगर होठों पर पपड़ी जम गई थी. शाम ढल चुकी थी. लोगों की भीड़ टीले की तरफ जा रही थी. तंबोलन भी उस टीले की तरफ जाने लगी. ऊपर पहुँचकर देखा कि वही संन्यासी सबके पत्तलों में खाना परोस रहे थे. सभी गरीब लोग खाना खा रहे थे. तब उसकी आँखे भीगने लगी. वह टीले से उतर ही रही थी कि आवाज आई – "मां भंडारे की रोटी तो चखती जाओ - आओ, इधर आओ - यह तो तुम्हारा अधिकार है." यहाँ पर चित्रात्मक ढंग से भूख से व्याकुल माँ का वर्णन किया गया है.

विधवा तंबोलन ने घबराकर पीछे देखा और आग्रहपूर्ण वाक्य सुनकर वह उस तरफ बढ़ गई. तंबोलन ने अलग-अलग व्यंजनों को भरपेट खाया. खाने के बाद उठी तो उसे अपने स्तन भारी लगे. तत्पश्चात हाथ धोकर वह कुछ दूर पेड़ के नीचे अपने बच्चे को दूध पिलाने लगी. आज मानो पहली बार उसे तृप्ति का अनुभव हुआ था. एक असीम सुख में डूबते हुए उसने सोचा – "रोटी में कितनी ताकत है. जब चाहती है, बाँट देती है और जब चाहती है एक कर देती है." लेखिका इस कहानी के माध्यम से यही कहना चाहती है कि दंगे फसाद से किसी का भला नहीं होता. इन विपरीत परिस्थितियों में गरीबों को बेबसी का सामना करना पड़ता है. मानवता का धर्म ही सबसे बड़ा धर्म है. हमें मानवता का धर्म निभाना चाहिए. मानव सेवा ही प्रभु की सच्ची सेवा और भक्ति है.

14.4.2 चरित्र चित्रण

पात्र या चरित्र-चित्रण की दृष्टि से देखें तो यह कहानी सफल रही है. कहानी का पूरा आधार पात्र-सृष्टि पर ही टिका होता है. पात्र जितने जीवंत और सजीव होंगे कहानी उतनी ही सफल रहेगी. कहानी का स्वरूप छोटा होता है इस कारण इसमें पात्रों की संख्या सीमित रहती है. 'असली बात' कहानी में विधवा तंबोलन, सिपाही रामदीन, मुजाविर साहब प्रमुख पात्र हैं. गौण पात्रों में सुखबीर, परशुराम हवालदार, प्रभारी पांडेय आदि हैं. लेखिका ने सभी पात्रों का स्वाभाविक एवं सुंदर चित्रण किया है. सिपाही रामदीन के पात्र की विशेषता उनके संवाद पर से देखी जाती है. जैसे - "आखिर आदमी ही तो समय पड़ने पर आदमी के काम आता है." हरेक पात्र हमें एक नया संदेश देते हुए दिखाई पड़ते हैं. रामदीन का पात्र हमें मानव सेवा का संदेश देता है. तंबोलन ने रोटी संबंधित इस सत्य को उजागर किया है कि रोटी कभी किसी प्रकार का भेदभाव नहीं रखती सभी की भूख मिटाती है. मंदिर

के महंत दरगाह पर जाते हैं. परोपकारी संन्यासी तथा मुजाविर साहब तो अपने आप में सांप्रदायिक एकता की छवि हैं. वे अनेकता में एकता का संदेश देते दिखाई देते हैं.

14.4.3 संवाद

'असली बात' कहानी की संवाद-योजना नाट्यात्मक और रोचक है. संवाद- योजना की यह विशेषता रहती है कि संवाद जितने छोटे-सरल-सहज होंगे कहानी उतनी ही सफल होंगी. आलोच्य कहानी के संवाद छोटे-सरल एवं रोचक हैं. जैसे - "कब तक कर्फ्यू खुलेगा भैया जी?" – औरत ने कहा. "लड़ते वक्त तो तुम लोग सोचते नहीं हो, अब हम का बताएँ" – रामदीन ने कहा. "अब जहाँ चार बरतन साथ होंगे तो वहाँ टकराहट तो होगी न भैया जी." – औरत का मद्धिम स्वर गूँजा.

14.4.4 देशकाल और वातावरण

समीक्ष्य कहानी में लेखिका ने स्थान और वातावरण का प्रसंगानुकूल वर्णन किया है. जैसे – "शहर में फसाद हुए आज पहला ही दिन था. हिन्दू-मुसलमान मोहल्लों के बीच तमतमाती हवा बह रही थी. प्रशासन ने मौके की नजाकत देख कड़े पहरे और बंदूक के जोर पर उनके जोश पर रोक जरूर लगा दी थी, मगर अंदर खदबदाते लावे को शांत नहीं कर पायी थी. .... दोनों मोहल्लों में रात के आखिरी प्रहर के लगभग खामोशी छा गई." यह समकालीन कहानी सभी युगों मे प्रासंगिक है.

14.4.5 भाषा शैली

प्रस्तुत कहानी की भाषा-शैली वैविध्यपूर्ण है. प्रभारी पांडेय की तथा मुजाविर साहब की भाषा में कठोरता के दर्शन होते हैं, जबकि सिपाही रामदीन की भाषा में कोमलता के दर्शन होते हैं. रामदीन की भाषा में व्यवहार कुशलता तथा वैचारिकता का पुट भी मिल जाता है. जैसे – "यह साला भी मामा की गोद समझ ठाठ से सो रहा है. इससे पहले कि वर्दी खराब करे, इसको इसकी मां को वापस कर देना चाहिए." रामदीन ने प्यार से काले-कलूटे लड़के का मुँह ताका और दरवाजे पर पहुँच डंडा बजाया." कहानी की भाषा सरल, स्पष्ट तथा बोधगम्य होनी चाहिए, ताकि सभी वर्ग के पाठक पढ़ सकें और समझ सकें. प्रस्तुत कहानी में खड़ीबोली के साथ-साथ अंग्रेजी तथा उर्दू भाषा के शब्दों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में किया गया है. जैसे-

अंग्रेजी शब्द :- लाउडस्पीकर, स्टोर, लॉकर, कर्फ्यू, डॉक्टर, पैकेट, हारमोनियम.

उर्दू शब्द :- कव्वाली, इतला, मजमा, दरगाह, नजाकत.

मुहावरेदार भाषा का प्रयोग भी किया गया है. कई मुहावरे दृष्टिगत होते हैं. जैसे –

मुहावरे :- 'जितने मुंह उतनी कहानियाँ', 'घर-घर फाका होना', 'नाक रगड़ना' आदि.

कहावत :- 'गेहूं के साथ घुन का पिसना'.

लेखिका ने आलोच्य कहानी में संबोधन शैली, वर्णनात्मक शैली आदि शैलियों का प्रयोग किया हैं. वर्णनात्मक शैली का उदाहरण देखें – "दूसरे दिन बेटे का बुखार तो उतर गया था, मगर होंठों पर पपड़ी जम गई थी. पानी पिला-पिलाकर वह कब तक उसे सजदा रख सकती थी. शाम ढले जब भीड़ को टीले की तरफ जाते देखा तो वह भी चल पड़ी." अतः हम कह सकते हैं कि प्रस्तुत कहानी की भाषा-शैली सजीव, स्वाभाविक, प्रभावोत्पादक और आकर्षक है. कहानी की भाषा-शैली पात्रों एवं प्रसंगों के अनुरूप है.

14.4.6 उद्देश्य

'असली बात' कहानी हिन्दी की सुप्रसिद्ध लेखिका नासिरा शर्मा की एक चिंतनप्रधान

कहानी है. उनकी लेखनी का प्रमुख उद्देश्य हिंदू और मुसलमानों के बीच भेदभाव को कम करना है. प्रस्तुत कहानी में सांप्रदायिक तनाव एवं लोग-वैमनस्य का बड़ा ही सटीक एवं रोचक ढंग से चित्रण किया गया है. रचना के पीछे कर्ता का कोई-न-कोई उद्देश्य अवश्य ही रहता है. तभी तो राष्ट्रीय कवि मैथिलीशरण गुप्त ने ठीक ही लिखा है – "न मनोरंजन केवल कवि का कर्म होना चाहिए, बल्कि उनमें उचित उद्देश्य का मर्म भी होना चाहिए." प्रस्तुत कहानी का उद्देश्य सांप्रदायिक वैमनस्य को छोड़कर बंधुत्व की भावना को स्थापित करना, अन्नदान की शक्ति, वास्तविक परिस्थिति का स्वीकार कर आगे बढ़ना तथा लोगों में एकता स्थापित करना रहा है. विकट परिस्थिति में भी हमें अपने धैर्य एवं साहस-सहनशीलता का परिचय देना चाहिए. तभी हम अपने गंतव्य स्थल तक पहुँच सकेंगे. समाज में सभी वर्गों से मिल-जुलकर रहना ही हमारा परम कर्तव्य है, यही 'असली बात' कहानी का उद्देश्य है.

14.5 मुख्य अंशों की व्याख्या

(1) "पीर-औलिया इन्सानों में फर्क नहीं करते. यह दर सबके लिए खुला है – अमीर-गरीब, हिन्दू-मुसलमान, छोटा-बड़ा खबरदार जो फिर कभी अपनी जाहिलाना राय मुझे देने यहाँ आए."

व्याख्या

प्रस्तुत गद्यांश हिन्दी की सुप्रसिद्ध लेखिका नासिरा शर्मा विरचित 'असली बात' कहानी से लिया गया है यह वाक्य कहानी के एक पात्र को दरगाह के मुजाविर साहब जो लोग इन्सानों में भेद रखते हैं, अंतर रखते हैं, उन्हें जुबान से फटकारते हुए कहते हैं. मुजाविर साहब का कहना है कि परमतत्व-पीर-औलिया जिन्होंने सबको बनाया है, वह फर्क नहीं रखते तो हम कौन हैं, जो इन्सानों को आपस में बाँटते हैं. ईश्वर या खुदा का द्वार सब के लिए सदैव खुला रहता है. यहां पर अमीर-गरीब, हिन्दू-मुसलमान या छोटा-बड़ा सभी समान माना गया है.

विशेषता

(1) प्रस्तुत गद्यांश में दर्शाया गया है कि समाज में सभी को मिल-जुलकर, समान भाव से जीना चाहिए.

(2) यहाँ पर मुजाविर साहब की उदात्त विचारधारा का परिचय मिलता है.

- **निम्नलिखित गद्यांश की व्याख्या कीजिए**

(1) "रोटी में कितनी ताकत है. जब चाहती है, बाँट देती है और जब चाहती है, एक कर देती है."

(2) "मां, भंडारे की रोटी चखती जाओ - आओ, इधर आओ - यह तो तुम्हारा अधिकार है."

(3) "चलो उनका तो कर्तव्य है कि लोगों की मदद करना तथा समय-समय पर आदमी के काम आना."

(4) "भूख से अधमरा मेरा बेटा कल से बीमार है."

(5) "लड़ते वक्त तो तुम लोग सोचते नहीं हो, अब हम का बताएँ."

14.6 सारबिंदु

- 'असली बात' नासिरा शर्मा की एक विचारप्रधान कहानी है. आलोच्य कहानी में लेखिका ने कई चिंतनप्रधान एवं हृदयस्पर्शी प्रसंगों को हमारे सामने प्रस्तुत किया है.

- भूख मनुष्य को विवश कर देती है. भूख को मिटाने के लिए व्यक्ति (मनुष्य) खुद अपने अस्तित्व को ही खो देता है. प्रस्तुत कहानी का कथ्य सरल, संक्षिप्त एवं रोचक है.

- कहानी का प्रारंभ सांप्रदायिक तनावग्रस्त वातावरण से होता है. लोग हिंसाग्रस्त मनोवृत्ति से पीड़ित दिखाये गये हैं. आज लोगों के दिलों में से जैसे मानवता, सौहार्दता, स्नेह, परोपकार जैसे मानवीय गुण लुप्त होते जा रहे हैं. सिपाही रामदीन कर्फ्यू के समय जब ड्यूटी कर रहा है तब किसी ने दोस्ती तो क्या – पानी तक को नहीं पूछा. इससे हमें ज्ञात होता है कि आज मनुष्य कितना निष्ठुर हो गया है.
- कहानी के मध्य तथा अंत भाग में विधवा तंबोलन का प्रसंग भी हृदयस्पर्शी बन पड़ा है. अपने बीमार बच्चे की दवाई के लिए वह दर-दर भटक रही है और अंत में असली बात तब बनती है जब तंबोलन को खाने के लिए रोटी मिलती है. रोटी के कारण ही उसके शरीर में जान आती है. वह अपने बच्चे को स्तनपान कराती है और बच्चा भी ठीक हो जाता है. अन्न या रोटी में वह ताकात है, जो बैरी (दुश्मन) को भी मित्र बना देती है. कहानी के सभी प्रसंग रोचक एवं गतिशील है. लेखिका ने क्रमानुसार कथा को आगे बढ़ाया है, कहीं पर भी शिथिलता नहीं आने पाई है.
- कहानी का विकास सहज और स्वाभाविक रूप से हुआ है. कहानी का अंत सुखद और नाट्यात्मक है.

14.7 परीक्षोपयोगी प्रश्नावली

- **निम्नलिखित प्रश्न के उत्तर संक्षेप में दीजिए**

(1) शहर में कर्फ्यू क्यों लगाया गया था?

(2) तंबोलन अपने बीमार बच्चे को अस्पताल या डॉक्टर के पास क्यों नहीं ले जाती?

(3) किस शर्त पर कर्फ्यू हटाया गया?

(4) तंबोलन को तृप्ति का अनुभव कब हुआ?

(5) 'असली बात' कहानी का उद्देश्य क्या है?

- **निम्नलिखित प्रश्न के उत्तर सविस्तार दीजिए**

(1) 'असली बात' कहानी की कथावस्तु लिखते हुए उसकी प्रमुख विशेषताएँ बताइए

(2) कहानी कला के तत्त्वों के आधार पर 'असली बात' कहानी की समीक्षा कीजिए

(3) विधवा तंबोलन का चरित्र-चित्रण कीजिए

(4) सिपाही रामदीन का चरित्रचित्रण कीजिए

(5) 'असली बात' कहानी में व्यक्त आधुनिक-बोध को दर्शाइए

(6) 'असली बात' कहानी में व्यक्त प्रमुख समस्याओं पर प्रकाश डालिए

- **निम्नलिखित प्रश्न के एक वाक्य में उत्तर लिखिए**

(1) रामदीन कौन था?

(2) शहर में रौनक लगनी शुरू क्यों हो गई थी?

(3) मुजाविर ने तंबोलन को क्या दिया?

(4) तंबोलन को किसने खाना दिया?

(5) रामदीन की डयूटी कहाँ लगी थी?

- **निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए**

(1) रामदीनन का चरित्र

(2) विधवा तंबोलन की लाचारी

(3) नासिरा शर्मा का जीवन परिचय

(4) कर्फ्यू के दौरान शहर की स्थिति

14.8 उपयोगी पाठ्यसामग्री

- मलबे का मालिक : मोहन राकेश (कहानी)
- अमृतसर आ गया : भीष्म साहनी (कहानी)
- हिन्दी गद्य साहित्य : उपलब्धि की दिशाएँ - डॉ. रामदरश मिश्र
- https://www.lokmatnews.in/india/nasira-sharma-vyas-samman-2019
- http://gadyakosh.org

Dr. Babasaheb Ambedkar Open University
(Established by Government of Gujarat)
"Jyotirmay" Parisar,
Dr. BAOU Marg, Sarkhej-Gandhinagar Highway, Chharodi Ahmedabad - 382481
Email : hindi@baou.edu.in । Website : www.baou.edu.in

बी. ए. (ऑनर्स)

हिंदी मेजर/हिंदी माइनर

HNDMJ-101/HNDMN-101

हिंदी कहानियाँ

कृपया यह प्रतिपुष्टि (Feedback) फॉर्म भरकर उपर्युक्त पते पर 'हिंदी विभाग, स्कूल ऑफ ह्यूमैनिटीज़ एंड सोशल साइंसेज़' के नाम अवश्य भेज दें. आपकी अमूल्य राय आपको दी जाने वाली स्वाध्याय सामग्री की गुणवत्ता बढ़ाने में सहायक होगी. यदि आप चाहें तो अपनी पहचान गुप्त रख सकते हैं, यानी नीचे 'नाम' और 'एनरोलमेंट नंबर' देना आवश्यक नहीं है. अन्य सभी कॉलम अवश्य भरें.

नाम : ______________________ **एनरोलमेंट नंबर :** ______________________

लिंग : स्त्री ☐ पुरुष ☐ ट्रांसजेंडर ☐ आयु वर्ग : 18-30 ☐ 31-40 ☐ 41-50 ☐ 50 से ऊपर ☐

नागरिकता : प्रदेश ______________________ **देश** ______________________

प्रवेश वर्ष : ______________________ **आजिविका के लिए कार्यरत : हाँ ☐ नहीं ☐**

कृपया अपनी राय नीचे दिए गए बिंदुओं के सामने सही खाने में सही (✓) का निशान लगाकर दें. {अ–अच्छा, सा–सामान्य, ख–खराब}

	इकाई 1			इकाई 2			इकाई 3			इकाई 4		
	अ	सा	ख	अ	सा	ख	अ	सा	ख	अ	सा	ख
अध्ययन सामग्री पर्याप्त है.												
भाषा सरल है.												
विषय अच्छी तरह समझाती है.												
आपके ज्ञान और कौशल को बढ़ाती है.												
इकाई के अंत में सारबिंदु अध्ययन दुहराने के लिए उपयोगी सिद्ध हुए हैं.												
स्वमूल्यांकन के लिए पर्याप्त प्रश्नों का समावेश है.												
परीक्षोपयोगी प्रश्न पर्याप्त हैं.												
अध्ययन सामग्री उपयोगी सिद्ध हुई है.												

आपकी सलाह या सूचना (यदि कोई हो तो) ______________________

	इकाई 5			इकाई 6			इकाई 7			इकाई 8		
	अ	सा	ख	अ	सा	ख	अ	सा	ख	अ	सा	ख
अध्ययन सामग्री पर्याप्त है.												
भाषा सरल है.												
विषय अच्छी तरह समझाती है.												
आपके ज्ञान और कौशल को बढ़ाती है.												
इकाई के अंत में सारबिंदु अध्ययन दुहराने के लिए उपयोगी सिद्ध हुए हैं.												
स्वमूल्यांकन के लिए पर्याप्त प्रश्नों का समावेश है.												
परीक्षोपयोगी प्रश्न पर्याप्त हैं.												
अध्ययन सामग्री उपयोगी सिद्ध हुई है.												

	इकाई 9			इकाई 10			इकाई 11			इकाई 12		
	अ	सा	ख	अ	सा	ख	अ	सा	ख	अ	सा	ख
अध्ययन सामग्री पर्याप्त है.												
भाषा सरल है.												
विषय अच्छी तरह समझाती है.												
आपके ज्ञान और कौशल को बढ़ाती है.												
इकाई के अंत में सारबिंदु अध्ययन दुहराने के लिए उपयोगी सिद्ध हुए हैं.												
स्वमूल्यांकन के लिए पर्याप्त प्रश्नों का समावेश है.												
परीक्षोपयोगी प्रश्न पर्याप्त हैं.												
अध्ययन सामग्री उपयोगी सिद्ध हुई है.												

आपकी सलाह या सूचना (यदि कोई हो तो) ____________________

____

____

____

____

	इकाई 13			इकाई 14		
	अ	सा	ख	अ	सा	ख
अध्ययन सामग्री पर्याप्त है.						
भाषा सरल है.						
विषय अच्छी तरह समझाती है.						
आपके ज्ञान और कौशल को बढ़ाती है.						
इकाई के अंत में सारबिंदु अध्ययन दुहराने के लिए उपयोगी सिद्ध हुए हैं.						
स्वमूल्यांकन के लिए पर्याप्त प्रश्नों का समावेश है.						
परीक्षोपयोगी प्रश्न पर्याप्त हैं.						
अध्ययन सामग्री उपयोगी सिद्ध हुई है.						

आपकी सलाह या सूचना (यदि कोई हो तो) ______________________________

____

____

____

____

BAOU
Education for All

યુનિવર્સિટી ગીત

સ્વાધ્યાયઃ પરમં તપઃ
સ્વાધ્યાયઃ પરમં તપઃ
સ્વાધ્યાયઃ પરમં તપઃ

શિક્ષણ, સંસ્કૃતિ, સદ્‌ભાવ, દિવ્યબોધનું ધામ
ડૉ. બાબાસાહેબ આંબેડકર ઓપન યુનિવર્સિટી નામ;
સૌને સૌની પાંખ મળે, ને સૌને સૌનું આભ,
દશે દિશામાં સ્મિત વહે હો દશે દિશે શુભ-લાભ.

અભણ રહી અજ્ઞાનના શાને, અંધકારને પીવો ?
કહે બુદ્ધ આંબેડકર કહે, તું થા તારો દીવો;
શારદીય અજવાળા પહોંચ્યાં ગુર્જર ગામે ગામ
ધ્રુવ તારકની જેમ ઝળહળે એકલવ્યની શાન.

સરસ્વતીના મયૂર તમારે ફળિયે આવી ગહેકે
અંધકારને હડસેલીને ઉજાસના ફૂલ મહેંકે;
બંધન નહીં કો સ્થાન સમયના જવું ન ઘરથી દૂર
ઘર આવી મા હરે શારદા દૈન્ય તિમિરના પૂર.

સંસ્કારોની સુગંધ મહેંકે, મન મંદિરને ધામે
સુખની ટપાલ પહોંચે સૌને પોતાને સરનામે;
સમાજ કેરે દરિયે હાંકી શિક્ષણ કેરું વહાણ,
આવો કરીયે આપણ સૌ
ભવ્ય રાષ્ટ્ર નિર્માણ...
દિવ્ય રાષ્ટ્ર નિર્માણ...
ભવ્ય રાષ્ટ્ર નિર્માણ

DR. BABASAHEB AMBEDKAR OPEN UNIVERSITY
(Established by Government of Gujarat)
'Jyotirmay' Parisar,
Sarkhej-Gandhinagar Highway, Chharodi, Ahmedabad-382 481
Website : www.baou.edu.in

978-93-5598-844-7-8